राष्ट्रीय कृषि तकनीकी परियोजना (एन.ए.टी.पी.)

श्री गोकुल मेहरा एवं श्री सुधीर कुमार सिंह

कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन अभिकरण (आत्मा), दुमका (झारखण्ड)

राष्ट्रीय कृषि तकनीकी परियोजना देश के कृषि अनुसंधान एवं प्रसार में अधिकतम सुधार हेतु एक शक्तियुक्त औजार है। इस परियोजना में भविष्य हेतु भोजन, सुरक्षा, आर्थिक वृद्धि, समरूपता, ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी दूर करना तथा प्राकृतिक सम्पदा का संरक्षण के अतिरिक्त अपनी क्षमता में विकास करने पर विशेष बल दिया गया है।

आत्मा क्या है?

आत्मा एक स्वायत्तशासी संस्था है, जो जिला अन्तर्गत सतत् कृषि विकास से सम्बंधित कृषि गतिविधि की मुख्य कुंजी है। यह एक लोक कृषि तकनीकी प्रबंधन कार्य हेतु दैनिक समेकित अनुसंधान प्रसार गतिविधि एवं हस्तांतरण की मुख्य कड़ी है। यह एक निबंधित संस्था है। यह एक स्वायत्तशासी संस्था होने के नाते प्राप्ति एवं खर्च, परियोजना निधि का खर्च, निविदा एवं एकरारनामा तथा चलित लेखा को शुल्क के रूप में संग्रहीत कर लेखा संधारण की क्षमता रखता है।

आत्मा क्यों?

आत्मा जिला स्तर पर कृषि संप्रसारण गतिविधि के लिए उत्तरदायी है। यह कृषि एवं सम्बद्ध विभाग, अनुसंधान संस्थान, स्वयंसेवी संस्थान तथा जिला स्तर पर कृषि विकास के सहयोगी संस्थान से संबंध रखता है। इस परियोजना अन्तर्गत जिले के कृषि एवं विस्तार जैसे - क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र/उपकेन्द्र, कृषि विज्ञान केन्द्र और कृषि सम्बंधित मुख्य विभाग यथा पशुपालन, उद्यान, भूमिसंरक्षण, रेशम तथा मत्स्य विभाग इसके कार्य की परिधि में आता है। जिला स्तर पर प्रत्येक इकाई जो अनुसंधान एवं विस्तार की संस्थानीय पहचान, कार्यक्रम की रूपरेखा तथा गतिविधि के निर्धारण, जिला स्तर पर आत्मा शासकीय निकाय द्वारा अनुमोदन एवं तद्नुरूप तथा आत्मा प्रबंधन समिति द्वारा कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी है।

आत्मा किसके लिए है?

आत्मा जिले में ग्रामीण स्तर पर किसानों के मानसिक विकास तथा तकनीकी ज्ञान को विकसित करते हुए सामूहिक रूप से कमलागत पर गुणवत्ता के साथ अधिक उत्पादन करने के लिए प्रेरित करती है। इसके लिए प्रशिक्षण, परिदर्शन तथा आवश्यकतानुसार सामूहिक प्रत्यक्षण, कृषक समूहों के मांग एवं आवश्यकता के अनुरूप सहभागिता के आधार पर किसानों के लिए क्रियान्वित किया जाता है। यह पूर्णत: किसानों के सहभागिता पर आधारित किसानों का कार्यक्रम है।

उद्देश्य :

- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के संगठनात्मक कार्यक्षमता एवं प्रबंधन पद्धति में सुधार।
- किसानों की आवश्यकता पर आधारित अनुसंधान से सम्बंधित वैज्ञानिकों की कार्यक्षमता एवं जागरूगता में वृद्धि।
- पारदर्शिता हेतु तकनीकी सहभागिता तथा सामूहिक कृषि हेतु तकनीकी प्रबंधन।
- संगठनात्मक जागृति।
- विस्तार, मार्गदर्शन जाँच हेतु निर्देश।
- सरकारी पदाधिकारी एवं विस्तार पदाधिकारी में समन्वय स्थापित।
- एक स्थान से किसानों के विभिन्न समस्याओं का निदान (सिंगल विन्डो)
- किसानों के आत्म बल में वृद्धि।

- किसानों में सामूहिक खेती एवं अन्य कार्य का विकास।
- सामूहिक रूप से प्रबंधन।
- ग्रामीण स्तर पर किसानों द्वारा कार्य योजना तैयार करना।
- ग्रामीण स्तर से जिला स्तर तक किसानों का संगठन विकसित करना।

भारतीय परिवेश में भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा विकसित यह कार्यक्रम जो बॉटम ऑफ एप्रोच में कार्य करती है, यानि ग्रामीण स्तर पर किसान अपने आवश्यकता एवं उपयोगिता के आधार पर कार्यक्रम तैयार करते हैं जिसे सभी विभाग के सम्बंधित पदाधिकारी मिलकर तकनीकी सहयोग किसानों को प्रदान करते हैं।

योजनाबद्ध कार्य :

- अनुसंधान की परिस्थिति में सुधार।
- अनुसंधान के कार्यक्रम में परिवर्त्तन।
- व्यवसायिक प्रक्रिया अनुसंधान में परिवर्त्तन।

परियोजना अवयव :

- भारतीय कृषि अनुसंधान एवं प्रबंधन में विकास।
- क्षेत्रीय कृषि पर्यावरण विकास के लिए सहायक।
- तकनीकी विस्तार हेतु निवेश।

कृषि तकनीकी प्रबंधन अभिकरण (आत्मा) :

प्रत्येक पायलट जिले में समेकित अनुसंधान एवं प्रसार गतिविधि तथा लोक कृषि पद्धति का दैनिक प्रबंधन का संप्रसारण है, यह जिला स्तर पर कृषि एवं सहायक विभाग तथा अनुसंधान संस्थान के अतिरिक्त स्वयं सेवी संस्थान से सम्बंधित जिला स्तरीय तकनीकी की सम्प्रसारण के लिए उत्तरदायी है। आत्मा किसानों के बीच में उत्प्रेरक का कार्य करती है।

शुरुआती दौर पर पायलट टेसटिंग के रूप में पूरे देश के छः राज्यों के छः जिलों में इस कार्यक्रम को लागू किया गया। सफलता के उपरांत वर्त्तमान में सात राज्यों के 28 जिलों में यह कार्यक्रम भारत सरकार के द्वारा चलाया जा रहा है।

गाँव (कृषक समूह) :

दस से बीस संख्या तक के किसानों का एफ. आई. जी. का गठन जैसे - सब्जी उत्पादकों का समूह, खाद्यान्न उत्पादकों का समूह, दलहन उत्पादकों का समूह, पुष्प उत्पादकों का समूह, तसरपालको का समूह, रेशम उत्पादकों का समूह आदि।

कार्य :

- समूह में कार्य करने हेतु सामूहिक रूप से बैठकर कार्य योजना तैयार करना तथा तैयार कार्ययोजना को सफलता पूर्वक क्रियान्वित करना।

पंचायत (कलस्टर) :

एक पंचायत में पड़ने वाले सभी गाँवों में तैयार उपरोक्त विभिन्न प्रकार के तैयार समूहों के द्वारा आम सहमति से प्रत्येक क्षेत्र के लिए एक-एक प्रतिनिधि का पंचायत स्तर के लिए एफ. आई. जी. द्वारा मनोनित किया जाता है।

कार्य :

- गाँव में तैयार समूहों के समस्याओं के समाधान हेतु कृषक सलाहकार समिति को अग्रसारित करना।
- जो समूह अच्छा कार्य कर रहा हो उसे प्रोत्साहित करना।

- कृषक सलाहकार समिति से समन्वय स्थापित कर समूहों के मांग के अनुरूप प्रशिक्षण आयोजित करना।
- एक समूह से दूसरे समूह के बीच में समन्वय स्थापित कराना।

प्रखण्ड (कृषक सलाहकार समिति) :

पूरे प्रखण्ड में विभिन्न प्रकार (जैसे - पुष्प, सब्जी, खाद्यान्न, मत्स्य, रेशम, कुक्कुट, सुकर, बकरी आदि) के तैयार समूहों के द्वारा आम सहमति से प्रत्येक क्षेत्र के लिए प्रखण्ड स्तरीय सलाहकार समिति हेतु दो-दो कृषक प्रतिनिधियों का चयन किया जाता है तथा चयनित प्रतिनिधियों के द्वारा कृषक सलाहकार समिति के द्वारा अध्यक्ष का चुनाव किया जाता है।

कार्य :

- समूह विभिन्न प्रकार के समूहों का कलस्टर समिति के द्वारा प्राप्त कार्यक्रम का अध्ययन कर उसके अनुरूप कार्य योजना को तकनीकी सुझाव हेतु विमर्श करना।
- समूहों द्वारा किये जा रहे कार्यों का अवलोकन करना।
- समूह या कलस्टर से प्राप्त समस्याओं का समाधान ढूँढना।
- सिंगल विन्डो पद्धति को विकसित करने में सहयोग प्रदान करना।
- तकनीकी विमर्श उपरांत प्रखण्ड स्तरीय कार्य योजना को जिला स्तरीय आत्मा प्रबंधन समिति को अग्रसारित करना।

प्रखण्ड तकनीकी दल (बी.टी.टी.) :

प्रखण्ड स्तरीय कृषि, उद्यान, पशुपालन, मत्स्य, भूमिसंरक्षण तथा रेशम विभाग के पदाधिकारी इसके सदस्य होते हैं। उपरोक्त किसी भी विभाग के पदाधिकारी तकनीकी दल के संयोजक होते हैं।

कार्य :

- तकनीकी दल के सदस्यों को एफ.ए.सी. से प्राप्त कार्यक्रम का अध्ययन कर तकनीकी सुझाव उपलब्ध कराना।
- एफ.ए.सी. के निदेशानुसार तय प्रशिक्षण कार्यक्रम को सम्पादित करना।
- समूह एवं संगठन के तकनीकी समस्या का समाधान करना।
- प्रखण्ड के विभिन्न क्षेत्रों में तकनीक का प्रचार करना।
- पूरे तकनीकी दल का सामूहिक रूप से कलस्टर तथा प्रखण्ड स्तरीय बैठक में भाग लेना।

प्रखण्ड स्तरीय कृषक सूचना सलाहकार समिति एवं केन्द्र (एफ.आई.ए.सी.) :

कृषक सलाहकार समिति (एफ.ए.सी.) तथा प्रखण्ड स्तरीय तकनीकी दल (बी.टी.टी) दोनों यहाँ एक साथ बैठकर विचार-विमर्श कर समस्या का निदान करते हैं। कार्यक्रम को संचालित करते हेतु एन.ए.टी.पी. परियोजना अन्तर्गत जिला के प्रत्येक प्रखण्ड परिसर में एक कृषक सूचना सलाहकार केन्द्र (भवन) का निर्माण किया जाता है जो पूर्णत: कम्प्यूटरीकृत होता है, जिसमें किसानों की आवश्यकताओं की सभी सुविधायें उपलब्ध रहती है।

कार्य :

- नई तकनीक का प्रचार-प्रसार करना।
- गाँवों से प्रखण्ड तक संगठनात्मक ढाँचा विकसित करना।
- प्रखण्ड के विभिन्न क्षेत्रों में समूहों के माँग के अनुरूप कार्य को क्रियान्वित कराना।
- बी.टी.टी के अतिरिक्त अन्य विभागों के साथ समन्वय स्थापित करना।
- महिलाओं के भागीदारी को सुनिश्चित करना।

- किसानों के लिए सरकार द्वारा चलाये जा रहे योजनाओं से अवगत कराना।
- पूँजी के लिए बैंक से समन्वय स्थापित कराना।
- प्राप्त कार्यक्रम को जिला स्तरीय समिति के पास अवलोकन एवं सुझाव हेतु अग्रसारित करना।

उपरोक्त कार्यक्रम की समीक्षा हेतु नियमित रूप से मासिक बैठक सम्पन्न की जाती है।

आत्मा प्रबंधन समिति :

आत्मा प्रबंधन समिति जिला स्तर पर कृषि एवं सम्बद्ध विभागीय पदाधिकारी, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र / कृषि विज्ञान केन्द्र, स्वयं सेवी संस्थान तथा दो कृषक प्रतिनिधियों की एक समिति है। जिसके अध्यक्ष आत्मा के परियोजना निदेशक होते हैं।

कार्य :

- प्रखण्ड स्तरीय एवं कलस्टर स्तरीय समिति को तकनीकी जानकारी उपलब्ध कराना।
- किसानों के समस्या का समाधान कर कृषक सूचना सलाहकार केन्द्र को उपलब्ध कराना।
- समय-समय पर प्रखण्ड स्तरीय समिति का अवलोकन करना तथा आवश्यकतानुसार सुझाव देना।
- सरकार के विभिन्न योजनाओं से कृषक सूचना सलाहकार समिति को अवगत कराना।
- किसानों के सबलीकरण एवं तकनीकी जानकारी उपलब्ध कराने के लिए प्रखण्ड स्तर तथा ग्रामीण स्तर पर जागृति एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना।
- एक प्रखण्ड के कृषक सलाहकार समिति से दूसरे प्रखण्ड के कृषक सलाहकार समिमि के बीच समन्वय स्थापित कराना।
- कृषक सूचना सलाहकार समिति द्वारा प्राप्त कार्य योजना का अध्ययन के उपरांत सुझाव के साथ आत्मा शासकीय निकाय को अग्रसारित करना।

आत्मा शासकीय निकाय :

आत्मा शासकीय निकाय एवं प्रबंधन समिति द्वारा सहभागिता है। आत्मा शासकीय निकाय आत्मा कार्यों की प्रगति की समीक्षा एवं कार्यकलाप के अलावे नीति निर्धारक एवं मार्गदर्शक है। इसके अध्यक्ष जिला के उपायुक्त होते हैं।

कार्य :

- आत्मा के लिए तैयार नियमों का पालन।
- प्राप्त प्रस्ताव की स्वीकृति देना।
- प्रखण्ड स्तरीय वार्षिक कार्य योजना जो प्रबंधन समिति से अग्रसारित किया जाता है, उसे स्वीकृति प्रदान करना।
- किसानों के खेत पर अनुसंधान के लिए निधि उपलब्ध कराना।
- वित्तीय नियंत्रण रखना।
- समय-समय पर वार्षिक कार्य योजना के क्रियान्वयन की समीक्षा करना।
- समय-समय पर कृषक सूचना सलाहकार समिति की समीक्षा कर सुझाव उपलब्ध कराना।
- जिला स्तरीय किसान फेडरेशन के गठन हेतु उत्प्रेरक का कार्य करना।
- सभी कार्यक्रमों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करना।
- आत्मा के आर्थिक स्थायित्व हेतु विभिन्न तरह के कार्यक्रम चलाकर निधि संग्रह करना।
- वित्तीय लेखाओं का समय पर अंकेक्षण कराकर भारत सरकार को प्रतिवेदन उपलब्ध कराना।

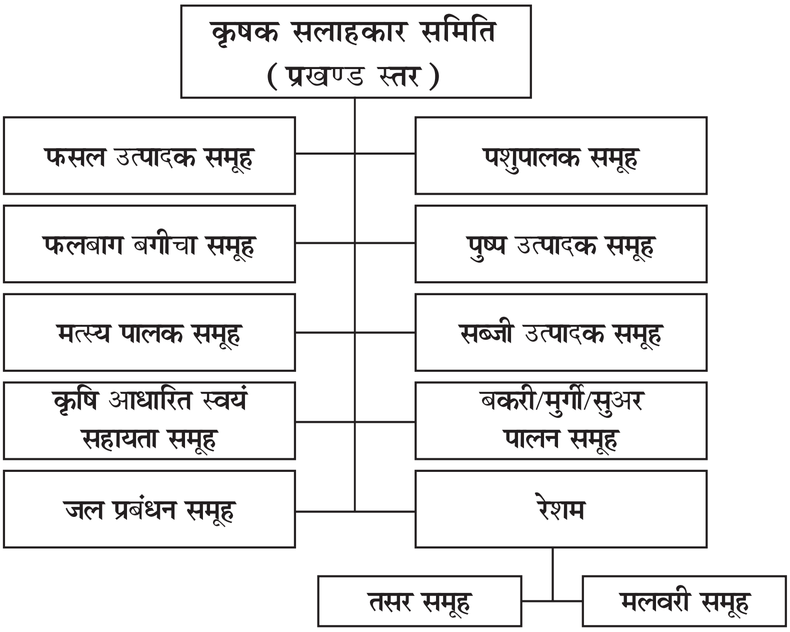

प्रखंड स्तरीय कृषक सलाहकार सूचना केन्द्र

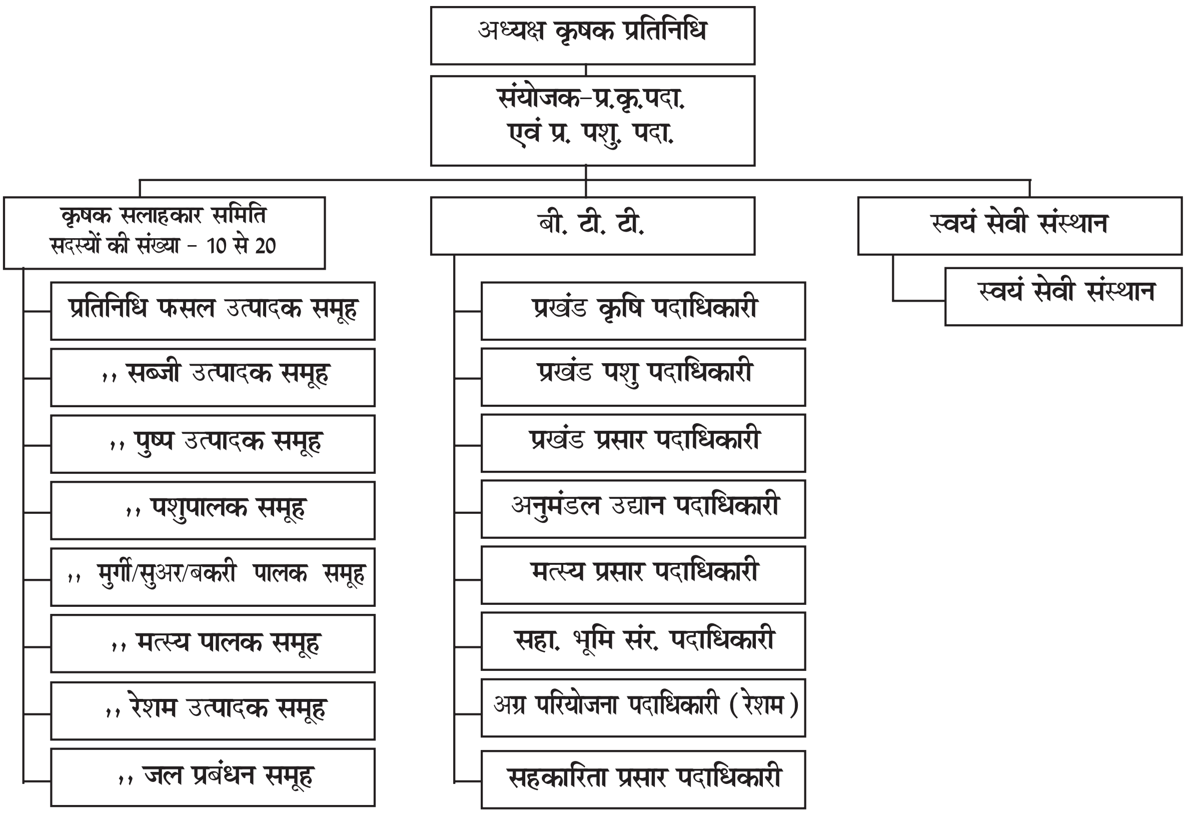

आत्मा प्रबंधन समिति

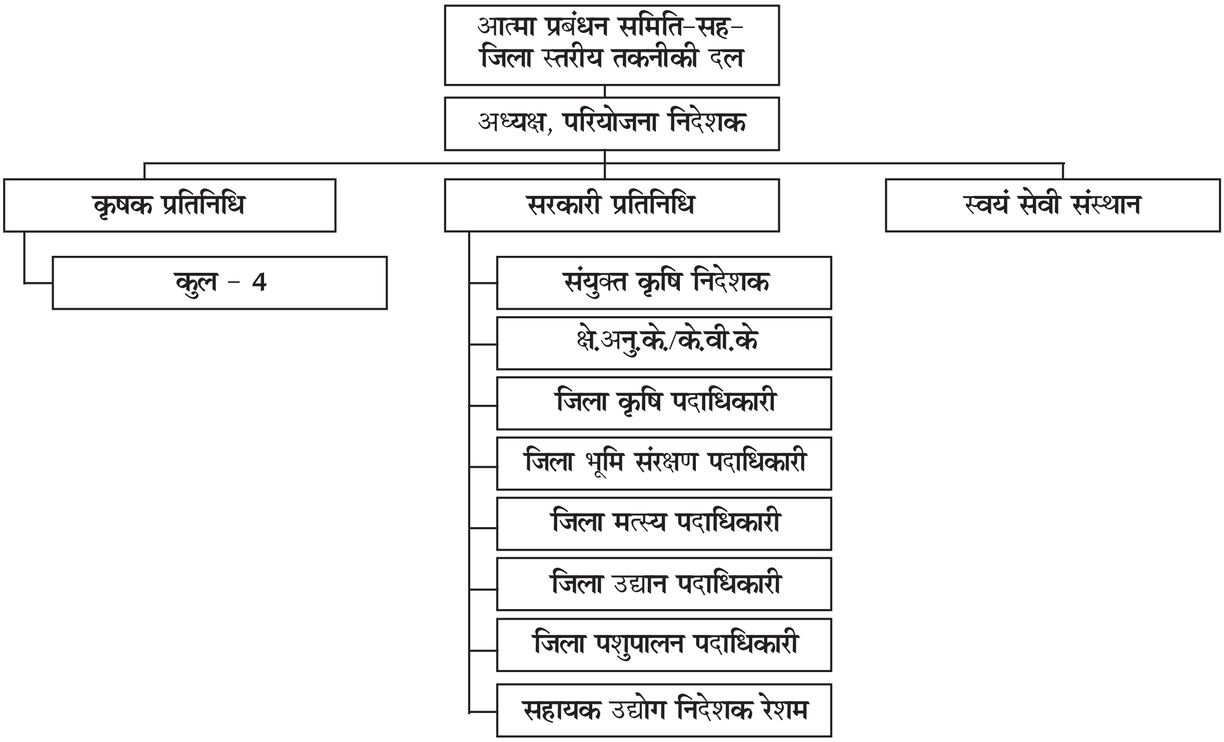

आत्मा शासकीय निकाय

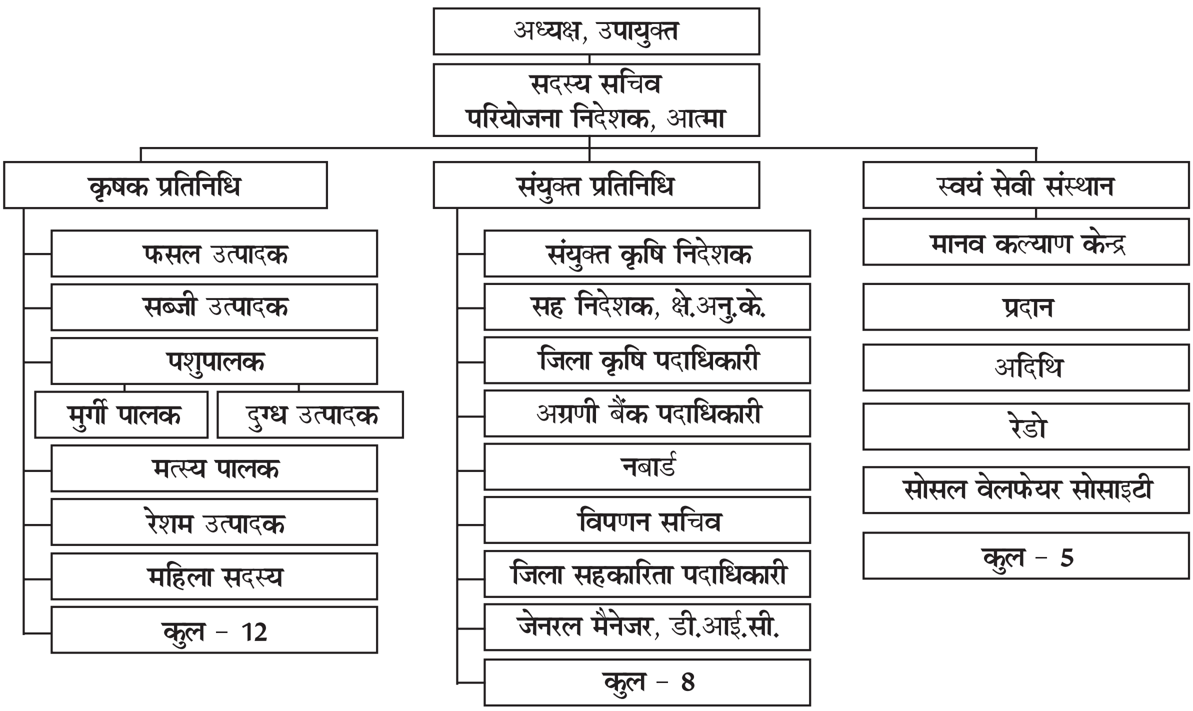

आत्मा का संगठनात्मक स्वरूप

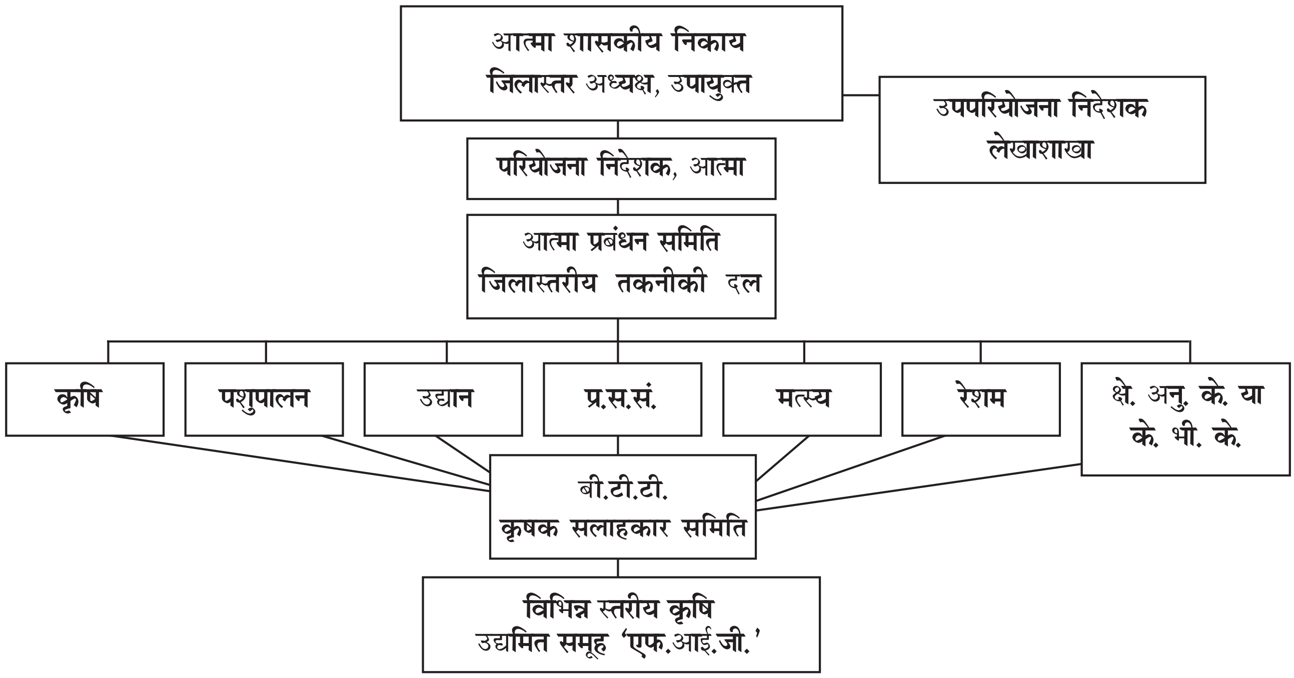

▲▲▲

आत्मा : जिला स्तर पर कृषि प्रसार का नया आयाम

रंजय कुमार सिंह एवं डा. सुधीर कुमार झा
कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन अभिकरण (आत्मा), पलामू एवं प. सिंहभूम

विश्व बैंक की सहायता से संचालित 'राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी परियोजना' के घटक 'प्रौद्योगिकी प्रसार में नवीनता' का उद्देश्य वर्तमान प्रसार प्रबन्ध को केवल सशक्त बनाने हेतु नई संगठनात्मक व्यवस्था एवं परिचालन कार्यविधियों की मार्गदर्शी जांच करना ही नहीं है, बल्कि इसका प्रथम मूल लक्ष्य जिला स्तर पर 'कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्ध अभिकरण' की स्थापना करके निर्णय लेने की शक्ति का विकेन्द्रीकरण करना है। दूसरा लक्ष्य कृषकों की भागीदारी से कार्यक्रम की योजना एवं साधनों के आवंटन में विशेषकर प्रखण्ड स्तर पर तथा सभी भागीदारों के उत्तरदायित्व को बढ़ाना है। तीसरा मुख्य कार्यक्रम समन्वय एवं एकीकरण को बढ़ाना है, ताकि कृषि प्रणाली में नवीनता, कृषक संगठनों, प्रौद्योगिकी अन्तर को कम करने के कार्य एवं प्राकृतिक साधन प्रबंध कार्यक्रमों के क्रियान्वय को और अधिक प्रभावशाली एवं दक्षतापूर्ण तरीके से आगे बढ़ाया जा सके।

सम्पर्क प्रक्रिया

वर्तमान प्रक्रिया के अतिरिक्त निम्नलिखित अनुसंधान-प्रसार-कृषक सम्पर्क प्रक्रिया को ''राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी परियोजना'' के घटक प्रसार प्रौद्योगिकी में नवीनता के अन्तर्गत लागू की गई हैं।

1. राज्यस्तरीय अन्तर विभागीय कार्यदल : कृषि उत्पादन आयुक्त/सचिव (कृषि) की अध्यक्षता में ''राज्य स्तरीय अन्तर विभागीय कार्यदल'' का कृषि, उद्यान, पशुपालन, मत्स्य पालन, भू-संरक्षण जैसे विभागों तथा राज्य कृषि विश्वविद्यालय के माध्यम से प्रभावशाली समन्वय को सुनिश्चित करने हेतु गठित किया गया है। यह दल कृषि तथा लाईन विभागों में राज्य, मंडल तथा जिला स्तर पर प्रौद्योगिकी के हस्तान्तरण में एकीकृत दृष्टिकोण की स्थापना को प्रोत्साहित करेगा। यह आत्मा के द्वारा की जाने वाली प्रसार एवं अनुसंधान की गतिविधियों की निगरानी एवं सहयोग तथा अन्तर विभागीय मामलों में नीतिगत मध्यस्थता करने का कार्य करेगा।

   आत्मा जिलों के परियोजना की गतिविधियों को निगरानी करने हेतु कृषि उत्पादन आयुक्त/सचिव (कृषि)/ निदेशक (कृषि) के कार्यालय में एक परियोजना कार्यान्वयन कोषांग की स्थापना की गई है। इस कार्यदल की कम से कम तीन महीनों में एक बार बैठक होगी।

2. कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंध अभिकरण (आत्मा) : सार्वजनिक कृषि प्रौद्योगिकी प्रणाली के दिन प्रतिदिन के प्रबन्ध में विकेन्द्रीकरण करने तथा अनुसंधान एवं प्रसार गतिविधियों में एकीकरण के लिए प्रत्येक मार्गदर्शी जिले में एक कृषि प्रौद्योगिकी प्रसार गतिविधियों के लिए तथा सभी लाईन विभागों, अनुसंधान संस्थाओं, गैर सरकारी संस्थाओं, एजेन्सियों जो जिले में कृषि के विकास में जुड़ी हुई हैं, के साथ सम्पर्क रखने के लिए उत्तरदायी होगी।

   इसके लिए शासी परिषद् समिति गठित की गई है। शासी परिषद् जिले के विभिन्न कृषक उद्यमों के प्रतिनिधि एवं समस्त भागीदारों के 16 सदस्यों से गठित की गई है। यह एक नीति तैयार करने तथा सलाह देने एवं आत्मा के कार्यों की समीक्षा करने वाली निकाय है। यह भागीदार इकाईयों के द्वारा तैयार एवं प्रस्तुत की गई सामरिक वार्षिक कार्य योजनाओं की समीक्षा तथा उनका अनुमोदन करेगी। यह जिला में भागीदार इकाईयों को उनकी आवश्यकतानुसार विभिन्न अनुसंधान तथा प्रसार गतिविधियों जो उनके द्वारा की जा रही है के विषय में फीडबैक एवं निर्देश उपलब्ध करेगी। यह निजी क्षेत्र, गैर सरकारी संस्थाओं तथा कृषक संघों को, कृषकों के उपादान, तकनीकी सहयोग, कृषि प्रसंस्करण एवं विपणन सेवाओं को उपलब्ध कराने में उन की अधिक भागीदारी को सुगम करेगी। आत्मा शासी परिषद प्रत्येक दो महीनों में एक बार बैठक करेगी।

3. **आत्मा प्रबंध समिति :** इसके गठन में लाईन विभागों के जिला अध्यक्षों, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, कृषि विज्ञान केन्द्र तथा कृषक संघो के दो प्रतिनिधि शामिल है। यह आत्मा की योजनाये बनाने तथा दिन प्रतिदिन की गतिविधियों की समीक्षा करने के लिए उत्तरदायी होगी। यह कृषकों के विभिन्न सामाजिक-आर्थिक समूहों को पेश आ रही मुश्किलों एवं विवशताओं की पहचान के लिए समय-समय पर सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन करेगी। यह जिला के लिए एक सामरिक अनुसंधान एवं प्रसार की योजना तैयार करेगी जो पहचान की गई कृषकों की मुख्य विशेषताओं के लिए प्रसार की प्राथमिकताओं तथा लघु एवं मध्यम अवधि की अनुकूल अनुसंधान इकाईयाँ प्रखण्ड तथा क्षेत्र स्तर के कार्यकर्त्ताओं के लिए प्रशिक्षण तथा सहायक गतिविधियाँ आयोजित करेंगे। प्रबंध समिति प्रखण्ड कार्य योजना भी तैयार करेगी जो शासी परिषद् को स्वीकृति हेतु प्रस्तुत की जायेगी तथा सम्बन्धित लाईन विभागों, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, कृषि विज्ञान केन्द्र, गैर सरकारी संघ, कृषक संघ तथा निजी क्षेत्र की फर्मों के माध्यम से प्रसार का समन्वय करेगी। यह परियोजना निदेशक की अध्यक्षता में प्रति माह अपनी बैठक करेगी।

4. **किसान सूचना तथा सलाहकार समिति :** इसके अन्तर्गत प्रखण्ड स्तर पर उन दूसरी सेवाओं एवं विकास गतिविधियों को छोड़कर जिनका प्रबंध दूसरी इकाईयों या लाईन विभागों के व्यक्तियों द्वारा किया जा रहा है, अन्य सभी मुख्य प्रसार एवं संगठनात्मक अंग के रूप में कार्य करेगी। यह लाईन विभागों के लिए विस्तृत प्रसार कार्यक्रम तैयार करने में तथा उस के कार्यान्वयन में समन्वय करने के लिए एक आम स्थान होगा। यह एक ऐसा स्तर होगा जहाँ पर कृषक सलाहकार समिति के माध्यम से कृषकों को भागीदारी को अधिक प्रभावशाली ढंग से गतिमान किया जा सकेगा। ऐसी प्रक्रिया सभी मुख्य भागीदारों के प्रतिनिधियों को प्रसार की प्राथमिकनाओं को उनके प्रत्येक कार्यक्षेत्र के निर्धारित करने में तथा साधनों के आवंटन में सहायता करेगी। किसान सूचना एवं सलाहकार-समिति, सामरिक अनुसंधान एवं प्रसार योजना को कार्यरूप देने तथा प्रसार पद्धति के लिए एक खिड़की प्रदान करने की तरफ कदम बढ़ाने के लिए जिम्मेदार होगी। किसान सूचना वह सलाहकारी समिति प्रसार की जाने वाली गतिविधियों की विस्तृत कार्य योजना प्रखंड स्तर पर तैयार करेगी। इस कार्य योजना को आत्मा को प्रस्तुत करने से पूर्व किसान सूचना तथा सलाहकार समिति के द्वारा स्वीकृत किया जायेगा। आत्मा प्रबंध समिति इस कार्य योजना को आत्मा शासी परिषद् की स्वीकृति हेतु प्रस्तुत करने से पूर्व यह सुनिश्चित करेगी कि यह तकनीकी एवं प्रशासनिक रूप से व्यवहारिक तथा एस.आर.ई.पी. से संगत हो। जिला स्तर के लाईन विभागों का अनुसंधान इकाईयां मौसमी या वार्षिक कार्य योजनायें निम्न कार्यों के लिए तैयार करेंगे :

   1. निदान एवं सहायक सेवाओं का अनुरक्षण करना (जैसा मृदा प्रशिक्षण प्रयोगशालायें)
   2. फील्ड स्तर के प्रसार कार्यकर्त्ता तथा किसान सूचना एवं सलाहकार समिति के लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण तथा तकनीकी सहयोग का आयोजन करना।
   3. अनुसंधान कार्यक्रम करना।
   4. समय-समय पर जिला सामरिक अनुसंधान एवं प्रसार योजना (एस.आर.ई.पी.) का अद्यतन करना।

प्रखण्ड तकनीकी दल के सदस्यों के अधिकार एवं कर्त्तव्य

1. किसान सूचना एवं सलाहकार केन्द्र से संपादित होनेवाली सभी गतिविधियों की जिम्मेदारी पूर्वक संचालन तथा वहाँ उपलब्ध सामग्री (तकनीकी साहित्य एवं पुस्तकें आदि) के माध्यम से कृषि की नवीतनम जानकारियाँ किसानों को उपलब्ध कराना।

2. प्रखण्ड स्तरीय किसान सलाहकार के सहयोग से प्रखण्ड कार्य योजना का निर्माण करना तथा कार्य योजना का किसान सलाहकार समिति एवं कृषक समूहों के सहयोग से क्रियान्वयन।

3. आत्मा द्वारा प्राप्त निधि का सही लेखा-जोखा रखना, जिसे आत्मा कार्यालय द्वारा मांगे जाने पर प्रस्तुत किया जा सके।

4. जिले के क्षेत्रीय अनुसंधान संस्थाओं एवं कृषि विज्ञान केन्द्र के सहयोग से अनुसंधान एवं प्रसार की गतिविधियों को गति प्रदान करना।

5. कृषि से जुड़े उपादानों, सेवाएँ, विपणन, प्रसंस्करण इत्यादि उद्यमों/संस्थाओं के साथ प्रभावी तालमेल स्थापित कर कृषि क्षेत्र से सम्यक् विकास के लिए प्रयत्न करना।

6. परम्परागत तकनीकी/देशज ज्ञान एवं सफल कहानियों की पहचान करना एवं उनके प्रचार-प्रसार के लिए कार्य करना।
7. प्रखण्ड की कृषि सूचनाओं के समय-समय पर अद्यतन करना तथा मांगे जाने पर आत्मा को उपलब्ध कराना। आत्मा द्वारा नामित स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से कृषक समूहों का गठन एवं प्रशिक्षण आयोजित करना।
8. समय-समय पर प्रशिक्षण शिविरों एवं सफल स्थानों का परिभ्रमण एवं प्रत्यक्षण आयोजित करना।
9. निजी क्षेत्र के उद्यमियों के लिए प्रभावी सहयोग प्रणाली का विकास करना।
10. प्रखण्ड की आधारभूत प्रसार संरचना का प्रभावी मार्गदर्शन।
11. प्रत्येक पखवारे में एक बार निर्धारित दिवस पर किसान सलाहकार समिति के साथ बैठक पर अगले पखवारे की कार्य योजना बनाना एवं पिछले पखवारे की गतिविधियों की समीक्षा करना।
12. किसान सूचना एवं सलाहकार केन्द्र का रख-रखाव तथा सप्ताह में एक दिन वहां उपस्थित रहकर प्रखण्ड कृषि एवं सम्बंधित विषयों से जुड़ी समस्याओं का निदान करना।
13. प्रखण्ड तकनीकी दल का अध्यक्ष, प्रखण्ड के कृषि पदाधिकारी, पशुपालन अधिकारी, मत्स्य पदाधिकारी, उद्यान पदाधिकारी में जो भी वरीय होंगे अथवा उस प्रखण्ड में जो भी उद्यम इसमें प्रमुख होगा, उससे सम्बंधित पदाधिकारी उस दल की अध्यक्षता करेंगे।
14. प्रखण्ड तकनीकी दल अध्यक्ष की यह जिम्मेदारी होगी कि वह प्राप्त राशियों, लेखा सामग्रियों आदि की हिफाजत करे एवं सभी बैठकों की कार्यवाही को रिकार्ड करें। साथ ही कृषि सूचना एवं सलाहकार केन्द्र का पूरा प्रभार रखना भी अध्यक्ष-तकनीकी दल की जिम्मेवारी होगी।
15. प्रखण्ड तकनीकी दल के अध्यक्ष एवं किसान सलाहकार समिति के अध्यक्ष संयुक्त रूप से स्थानीय बैंक में किसान सूचना एवं सलाहकार केन्द्र के नाम से खाता खालेंगे और इसका संचालन भी संयुक्त रूप से करेंगे।
16. किसी भी बाहर से आने वाले पदाधिकारी को प्रखण्ड की कृषि क्षेत्र से जुड़ी सूचनाएँ उपलब्ध कराना प्रखण्ड तकनीकी दल की जिम्मेवारी होगी।
17. ग्रामीण सहभागी आकलन द्वारा उस प्रखण्ड की कृषि क्षेत्र की समस्याओं का समय-समय पर आकलन कर जिला आत्मा कार्यालय को अवगत कराना होगा।

कृषक सलाहकार समिति : औपचारिक फीडबैक प्रक्रिया को उपलब्ध कराने हेतु कृषक सलाहकार समिति गठित की जायेगी। इसका गठन प्रखण्ड के कृषक समूहों के तथा सभी मुख्य भागीदारों के प्रतिनिधियों से होगा। यह प्रखण्ड की प्राथमिकताओं के निर्धारण में तथा विभिन्न कार्यक्रम क्षेत्रों के लिए साधनों के आवंटन में सहायता करेगी। यह समितियां प्रखण्ड स्तर पर प्रत्येक कार्यरत इकाई को सलाह उपलब्ध करने के साथ-साथ इसके कार्यों की समीक्षा भी करेगी। इसका अध्यक्ष कृषक प्रतिनिधियों में से एक-एक वर्ष की अवधि के लिए चक्रानुचक्रम के आधार से चुना जायेगा। इसकी महीने में दो बार बैठक होगी।

1. प्रत्येक पखवाड़े में एक बार प्रखण्ड तकनीकी दल के साथ बैठक कर अगले पखवारे की कार्ययोजना बनाना तथा पिछले पखवाड़े की गतिविधियों की समीक्षा करना।
2. इस समिति के सदस्यों की सदस्यता अवधि अधिसूचना निर्गत होने से एक साल तक होगी तथा अगले वर्ष पुनः उस प्रखण्ड के सभी उद्यमों के प्रतिनिधियों से नई समिति का गठन किया जाएगा।
3. यह समिति प्रखण्ड तकनीकी दल के साथ निकट संबंध रखते हुए वार्षिक प्रखण्ड कार्य योजना को बनाने एवं उसके क्रियान्वयन का कार्य करेगी।
4. इस समिति का उद्देश्य कृषि क्षेत्र की समस्याओं पर ध्यान देना होगा। जो किसानों के एक बड़े वर्ग से संबन्ध रखती हो, न कि व्यक्तिगत समस्याओं का निष्पादन करना।

5. यह समिति अपने प्रखण्ड की सफल कहानियों, कृषि प्रयोगों एवं देशज परम्परागत ज्ञान की पहचान एवं उनकी ग्रह्यता बढ़ाने की दिशा में कार्य करेगी।
6. यह समिति किसानों की अनुसंधान, प्रसार एवं विपणन सम्बन्धी समस्याओं को आत्मा प्रबन्ध समिति तक पहुंचाने के लिए सतत् प्रयास करेगी।
7. किसान सलाहकार समिति के सदस्य समय-समय पर अपने तकनीकी ज्ञान के उन्नयन हेतु प्रयासरत रहेंगे, ताकि वह समय पड़ने पर इसे अन्य किसानों के बीच प्रसारित कर सके।
8. यह समिति निचले स्तर के प्रसार कार्यकर्त्ताओं के साथ लगातार सम्पर्क में रहते हुए उन्हें समय-समय पर सहयोग एवं परामर्श देगी।
9. यह समिति अपने प्रखण्ड में स्वयं सेवी संस्थाओं के सहयोग से कृषक संगठनों को बढ़ावा देगी तथा उनके निर्माण में सहयोग करेगी।

कृषक समूह/ दल/ ग्रुप :

गांव स्तर पर कृषक समूहों को प्रोत्साहित किया जायेगा तथा गांव स्तर के समूह जिला एवं प्रखण्ड स्तर के समुदाय संघों, विपणन सहकारी समितियों तथा दूसरे प्रकार के कृषक संघों में शामिल होंगे। गांव स्तर पर कृषक हित समूह तथा कृषक संघ प्रखण्ड कार्य योजना के तैयार करने में प्रभावशाली रूप में शामिल होंगे। ये संगठन प्रदर्शन क्षेत्र, आन फर्म एवं अनुकूल प्रत्यक्षणों के आयोजनों को समन्वय तथा प्रसार एवं अनुसंधान की फीडबैक करेंगे। इसके प्रतिनिधि सीधे रूप से प्रखण्ड स्तर की किसान सूचना एवं सलाहकार समिति तथा आत्मा की शासी परिषद् में शामिल होंगे। आत्मा की शासी परिषद् जिले में एक या एक से अधिक गैर सरकारी संगठन का चुनाव करेगी तथा परियोजना निधि से उसकी सहायता के लिए तथा विभिन्न किस्म के कृषक समूह बनाने में सहयोग करेगी।

निधि प्रक्रिया :

आत्मा को परियोजना निधि के उपयोग के प्रचलन में लचीलापन प्राप्त है। इससे जिला स्तर पर योजना की गतिविधियों को अपनाने में भागीदार इकाईयों की सम्मति से अप्रकट वृतान्त के उत्तर में जैसा आवश्यक हो, करने की आशा की जाती है। जिला प्रसार योजना के ढांचे में सम्मिलित की गई गतिविधियों के कार्यान्वयन के लिए परियोजना निधि को जारी करने के लिए आत्मा की ''प्रबन्ध समिति'' प्राधिकृत होगी। इसके अतिरिक्त हर भागीदार को अलग से खाता/उपखाता रखना होगा। जिसकी लेखा-परीक्षा मान्यता प्राप्त ऑडिटर से करवाने के उपरान्त आत्मा प्रबन्ध समिति को प्रतिपूर्ति दावे के साथ भेजा जायेगा।

आत्मा की कार्य प्रणाली

योजना बनाना तथा वित्तीय प्रक्रिया :

आने वाले मौसम में की जाने वाली प्रसार तथा कृषक प्रशिक्षण गतिविधियों के लिए फार्म सूचना तथा सलाहकार समिति अपने ब्लाक कार्य योजना एवं बजट तैयार करेगी। समन्वय की ये योजनायें जिले की सामरिक अनुसंधान एवं प्रसार योजना में उल्लेखित मुख्य विवशताओं तथा कमजोरियों का जरूर समाधान करें, यदि इनके लिए आत्मा द्वारा निधि दी गई है। इसके अतिरिक्त प्रखण्ड कृषि पदाधिकारी, प्रखण्ड स्तर के लिए प्रस्तावित प्रसार गतिविधियों के समन्वय के लिए तथा इन प्रस्तावों को किसान सूचना एवं सलाहकार समिति की समीक्षा हेतु प्रस्तुत करने के लिए उत्तरदायी होगी। किसान सूचना एवं सलाहकार समिति से इस प्रस्तावों की अनुमति प्राप्त होने के बाद में ये आत्मा को प्रस्तुत किये जायेंगे। प्रखण्ड कृषि पदाधिकारी सूचना एवं सलाहकार समिति का अध्यक्ष संयुक्त रूप में इन प्रसार योजनाओं को आत्मा की शासी परिषद् के अनुमोदन से पूर्व आत्मा की प्रबंध समिति को प्रस्तुत करेंगे। यदि किसी कार्यक्रम के विषय में आत्मा की प्रबंध समिति तथा किसान सूचना एवं सलाहकार समिति में कोई मतभेद या सहमति नहीं होगी तो आत्मा की शासी परिषद् द्वारा इसे सुलझाया जायेगा।

एक बार जब प्रखण्ड कार्य योजना शासी परिषद् द्वारा अनुमोदित कर दी जायेगी तब आत्मा के परियोजना निदेशक प्रत्येक प्रखण्ड के कृषि पदाधिकारी को अनुमोदित प्रसार कार्यक्रमों को करने हेतु आवंटित बजट को चैक के द्वारा जारी करेगा। प्रखण्ड पदाधिकारी बैंक खाता रखने तथा किसान सूचना एवं सलाहकार समिति के अनुमोदित प्रसार कार्यक्रम के क्रियान्वयन हेतु निधि आवंटन करेगा। सभी प्रखण्ड कृषि पदाधिकारी तथा किसान सूचना तथा सलाहकार समिति के अध्यक्ष द्वारा संयुक्त रूप से जारी किये जायेंगे। ऑफिसर इंचार्ज सम्पूर्ण वित्तीय रिकार्ड को रखने जैसे अनुमोदित प्रसार गतिविधियों पर व्यय की गई राशि की रसीदें आदि के लिए जिम्मेवार होगा। यदि कोई सहमत प्रक्रिया के अनुसार वित्तीय तथा निष्पादन का रिकार्ड आत्मा को प्रस्तुत नहीं करेगी तो निधि के प्रवाह को निलम्बित कर दिया जायेगा।

कार्यवाही प्रक्रिया :

किसान सूचना एवं सलाहकार समिति के सभी सदस्य अपने-अपने लाईन विभाग के ही निरन्तर कर्मचारी होंगे, लेकिन वे जिले के सामरिक अनुसंधान एवं प्रसार योजना मुख्य कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने में आनेवाली रूकावटों को दूर करने तथा प्रसार कार्यक्रम के समन्वय क्रियान्वयन हेतु प्रखण्ड तकनीकी दल के रूप में कार्य करेंगे। इस समिति के सदस्य मुख्य रूप में दिन-प्रतिदिन के कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार होंगे तथा किसान सूचना एवं सलाहकारी समिति के सदस्यों के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार होंगे तथा किसान सूचना एवं सलाहकार समिति के सदस्यों को प्रदर्शन क्षेत्र लगाने, प्रशिक्षण शिविरों में कृषकों को शिक्षित करने, प्रक्षेत्र दिवस मनाने में तथा अन्य सामूहिक गतिविधियों को करने में सहायता करेंगे। इस प्रस्तावित नये प्रबंधों का मुख्य उद्देश्य एक एकीकृत या एक खिड़की प्रसार प्रणाली की रचना करना है।

जहां तक सम्भव होगा जिला एवं प्रखण्ड में विकास की गतिविधियों को भारत सरकार तथा राज्य सरकार की योजनाओं के अन्तर्गत अर्थपोषित है, का उपयोग प्रदर्शन, प्रसार सहयोग तथा प्रौद्योगिकी हस्तांतरण में किया जायेगा। आनेवाले समय के लिए आत्मा का लक्ष्य होगा कि सामरिक अनुसंधान एवं प्रसार योजनाओं की सहयोग के लिए तथा ब्लाक कार्य योजना क्रियान्वयन के लिए इन केन्द्रीय, राजकीय तथा जिला की निधियों में से ज्यादा निधि का हस्तांतरण आत्मा का हो। वर्त्तमान समय में, कृषक सलाहकारी समिति के साथ परामर्श करके किसान सूचना एवं सलाहकार समिति निर्णय करेगी कि कहां पर इन विकास की गतिविधियों (विशेषकर कृषि एवं उद्यान) को प्रखण्ड स्तर पर चल रहे प्रसार कार्यक्रमों को सहयोग द्वारा और ज्यादा प्रभावशाली ढंग से उपयोग किया जा सकता है।

प्रखण्ड एवं क्षेत्र प्रसार गतिविधियों के क्रियान्वयन के लिए प्रस्तावित संरचना का जो नई व्यवस्था में जिला स्तर पर प्रसार गतिविधियों के लिए आत्मा वित्त की विकेन्द्रीय प्रक्रिया को तामील में लाएगी। कार्यक्रमों के प्रभावशाली क्रियान्वयन की कुंजी फार्म समिति की स्थापना पर निर्भर करती है जो प्रखण्ड के अन्दर विनिर्दिष्ट एग्रो एकोलोजिकल जोन के प्रसार कार्यक्रम को उचित राह देगी। यही प्रखण्ड स्तर पर प्रखण्ड कार्य योजना के विकास में कृषकों की हिस्सेदारी की ओर ज्यादा प्रभावशाली ढंग से गतिमान कर सकती है। यही वह स्तर है जहां पर स्वयं सहायता समूह, कृषक हित समूह तथा प्रखण्ड स्तर की कृषक संघों को सीधे रूप में प्रखण्ड स्तर पर कृषक सलाहकार समिति में शामिल किया जा सकता है।

▲▲▲

कृषि प्रसार के बदलते स्वरुप

श्री सनत कुमार सवैयाँ एवं श्री अजय कुमार

समेति, झारखण्ड, राँची

एक तरफ तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या जो 1 अरब की संख्या को भी पार कर चुकी है, भारतीय कृषि पर बोझ बढ़ा रही है तो दूसरी तरफ भारतीय कृषि को विश्व परिदृश्य में आयी आर्थिक उदारीकरण, भूमण्डलीकरण एवं विश्व बाजारीकरण की चुनौतियों का भी सामना करना है। विश्व बाजार में प्रतियोगिता का चलन शुरु हो चुका है। बाजार के भौगोलिक सीमा का अन्त कर दिया गया है। ऐसी परिस्थिति में भारतीय कृषि को अधिक उत्पादनशील बनाने के साथ-साथ कृषि उत्पाद को गुणवत्तापूर्ण एवं मूल्यवर्द्धक भी बनाना होगा ताकि विश्व बाजार में हम अपनी पहचान बना सकें। विश्व परिदृश्य में आयी परिवर्तन के परिपेक्ष में भारत सरकार द्वारा नई कृषि नीति की घोषणा की गई है जिसके अर्न्तगत अगले बीस वर्षो तक कृषि विकास दर को 4 प्रतिशत से अधिक रखने की बात कही गई है। इसके लिए ठोस कृषि अर्थव्यवस्था की स्थापना करने पर जोर दिया जा रहा है, जो खाद्य सुरक्षा प्रदान कर सके। नई कृषि नीति के अन्तर्गत किसानों का आर्थिक विकास के लिए, जीवन स्तर सुधारने के लिए एवं गाँवों से पलायन रोकने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में ही रोजगार सृजित करने की रणनीति बनाई जा रही है। कृषि को व्यवसायिक बनाया जा रहा है। उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का दक्षतापूर्ण दोहन करते हुए कृषि का सर्वांगिक विकास की बात नई कृषि नीति में कही गई है। घरेलू एवं विश्व बाजार के मांग आधारित एवं निर्यात की संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए फसलों का चुनाव तथा प्रोत्साहन देने की आवश्यकता जताई गई है। किसानों तथा कृषक महिलाओं के सशक्तिकरण पर जोर दिया जा रहा है।

नई राष्ट्रीय कृषि नीति के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए पहले तो सभी किसान भाइयों, कृषि प्रसार कर्मियों तथा अनुसंधानकर्मियों को अपने मानसिकता एवं काम करने के प्रवृति में परिवर्तन लाना होगा। क्योंकि नई राष्ट्रीय कृषि नीति के तहत कृषि प्रसार प्रणाली में भी व्यापक परिवर्तन हो रहा है। कृषि प्रसार प्रणाली में क्या परिवर्तन हो रहा है इसे जानने से पहले वर्तमान कृषि प्रसार प्रणाली को जानना जरुरी है।

वर्तमान कृषि प्रसार प्रणाली

वर्तमान कृषि प्रसार प्रणाली में अनुसंधानकर्मी एवं कृषि वैज्ञानिक अपने ढंग से अपने प्रयोगशाला में अनुसंधान कर नई तकनीकी ज्ञान का विकास कर रहे हैं और कुछ प्रयोगों के बाद इसे अनुशंसित कर देते हैं। प्रसारकर्मी इस तकनीकी ज्ञान को किसानों तक पहुँचाते हैं। किसान इस तकनीकी ज्ञान का उपयोग अपने खेतों में करते हैं। किसानों के खेत में कुछ तकनीक सफल होते हैं और कुछ असफल भी। तकनीकों के सफलता या असफलता के कारणों की जानकारी एवं किसानों की प्रतिक्रिया वापस अनुसंधानकर्मियों या कृषि वैज्ञानिकों को दी जाती है, ताकि वे आवश्यकतानुसार तकनीक में परिवर्तन कर सके। इसे निम्न रूप से भी व्यक्त किया जा सकता है

अनुसंधान ⟶ प्रसार ⟶ किसान

↑ ⟵ प्रतिक्रिया ⟵ ↓

यही वर्तमान कृषि प्रसार प्रणाली का संक्षिप्त स्वरूप है। इस कृषि प्रसार प्रणाली को काफी हद तक सफल माना जा सकता है क्योंकि इसी के बदौलत हम हरित क्रांति ला सके और खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर हो सके। लेकिन, साथ ही कुछ मुख्य कमियाँ वर्तमान कृषि प्रसार प्रणाली की हैं जो निम्नलिखित हैं –

वर्तमान कृषि प्रसार प्रणाली की कमियाँ :

1. स्थानीय लोगों या किसानों की सहभागिता की कमी : जो भी कृषि से सम्बन्धित योजनाऐं या कार्य की जा रहीं हैं, वे सभी किसानों के हित के लिए ही की जा रही है। लेकिन किसानों को योजना बनाने से लेकर क्रियान्वयन तक कभी भी शामिल नहीं किया जा रहा है। यदि किसानों को भी योजना निर्माण से लेकर क्रियान्वयन तक भागीदार बनाया जाता तो किसानों में योजना के प्रति अपनापन की भावना पनपती और योजनाओं के सफल होने कि संभावना बढ़ जाती।

2. **किसानों की माँग या जरुरतों की अनदेखी :** किसानों की समस्याऐं क्या हैं? उनके क्या विचार हैं? उनकी क्या जरूरते हैं? वे क्या चाहते हैं ? यह सभी बातें उनसे ज्यादा और कोई नहीं जान सकता है। वे अपनी मिट्टी तथा भौगोलिक परिस्थितियों से भली-भांति परिचित हैं। यह दुर्भाग्य की बात है कि उनके आवश्यकताओं को अनदेखा किया रहा है जबकि सारा काम उन्ही के विकास के लिए किया जाना है। उनकी आवश्यकताओं को नजर अंदाज कर दूसरी चीजें जबर्दस्ती उन्हें थोपी जा रही है।

3. **किसानों को दी जा रही तकनीकों का स्थानीय विशेष नहीं होना :** वैज्ञानिकों द्वारा अनुशंसित कृषि तकनीक, बीज या अन्य अनुशंसाऐं हर कृषि परिस्थितिकी क्षेत्रों में एक समान परिणाम नहीं देती हैं। लेकिन मैदानी क्षेत्रों के लिए अनुशंसित तकनीक पठारी क्षेत्रों में भी दी जा रही है। ऐसी स्थिति में तकनीक का असफल होना स्वाभाविक है तथा इससे किसानों के विश्वास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

4. **एक तरफा कृषि प्रसार :** कृषि प्रसार दो तरफा प्रसार पद्धति है। वैज्ञानिकों से किसानों तक ज्ञान का बहाव को एकतरफा और किसानों की प्रतिक्रियाओं या समस्याओं को वापस वैज्ञानिकों तक पहुँचने को दूसरी तरफा प्रसार कहते हैं। लेकिन सिर्फ एक तरफा यानि वैज्ञानिकों से किसानों तक ज्ञान का बहाव हो रहा है। किसानों की प्रतिक्रियाओं या समस्याओं को वापस वैज्ञानिकों तक पहुँचाने का काम किन्ही कारणों से नहीं हो रहा है। इससे वैज्ञानिकों को मालूम नहीं हो पा रहा है कि वे तकनीकियों में किस तरह का बदलाव करें।

5. **कृषि प्रसार का लक्ष्य सिर्फ उत्पादन आधारित होना :** आज तक कृषि प्रसार का मुख्य लक्ष्य सिर्फ उत्पादन बढ़ाना है। पहले हमारे देश की प्राथमिकता खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल करना था। उस वक्त इसकी सख्त आवश्यकता भी थी। आज कुछ फसलों एवं सब्जियों का इतना अधिक उत्पादन हो रहा है कि इसका बाजार भाव उत्पादन लागत से भी कम गया है। आज की परिस्थिति में अधिक उत्पादन के साथ बाजार की मांग को भी कृषि प्रसार का आधार लक्ष्य बनाना होगा ताकि किसानों को कृषि उत्पाद का उचित मूल्य मिल सके।

6. **सरकारी कृषि प्रसारकर्मियों पर ही निर्भरता :** वर्तमान में सरकारी कृषि प्रसारकर्मियों की संख्या काफी कम है। राष्ट्रीय औसत करीब 1:1000 है, अर्थात 1000 किसान पर 1 कृषि प्रसारकर्मी। झारखण्ड के संदर्भ में देखे तो यह औसत और भी बदतर है। कृषि प्रसार का सारा जिम्मा इन्हीं सरकारी कृषि प्रसारकर्मियों के ऊपर है। साथ ही इन्हे अन्य गैर कृषि कार्य भी सौंपा जाता है। इससे कृषि प्रसार कार्यक्रम प्रभावित हो रहा है।

7. **किसानों से व्यक्तिगत सम्पर्क :** सरकारी कृषि प्रसारकर्मियों द्वारा किसानों से व्यक्तिगत सम्पर्क विधि से प्रसार किया जा रहा है। हालांकि यह ज्यादा फलदायक विधि है लेकिन प्रसार धीमी तथा अधिक खर्चीली विधि है।

उर्पयुक्त कमियों को दूर करने के लिए नये कृषि प्रसार पद्धति का विकास किया गया है जिन्हे प्रयोग के तौर पर देश के सात राज्यों, आन्ध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उड़िसा, बिहार और झारखण्ड के कुल 28 जिलों में राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी परियोजना (एन.ए.टी.पी.) के अर्न्तगत कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन अभिकरण (आत्मा) मॉडल द्वारा जमीन में उतारा जा रहा है। फिलहाल झारखण्ड के चार जिलों दुमका, जामताड़ा, पलामू और पश्चिमी सिंहभूम में आत्मा मॉडल चलाया जा रहा है। नये कृषि प्रसार प्रणाली क्या है इसकी संक्षिप्त जानकारी यहाँ दी जा रही है।

नई कृषि प्रसार प्रणाली :

विश्व परिदृश्य में आई परिवर्तन के परिपेक्ष में नई राष्ट्रीय कृषि नीति की घोषणा की गई साथ ही कृषि प्रसार प्रणाली में भी परिवर्तन करने की आवश्यकता पड़ी। नये कृषि प्रसार प्रणाली को अधिक प्रभावशाली तथा तीव्रगामी बनाने का कोशिश किया गया है। इसके प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित हैं :

1. नई कृषि प्रसार प्रणाली में किसानों को पूर्णरूप से सहभागी बनाया गया है। योजनाओं का निर्माण ग्रामीण स्तर पर किसानों द्वारा सरकारी एवं गैर सरकारी प्रसारकर्मियों, कृषि एवं कृषि से सम्बन्धित विभागों के पदाधिकारियों, वैज्ञानिकों तथा गैर सरकारी संस्थाओं के सहयोग से बनाया जाएगा। आत्मा मॉडल के हर स्तर पर किसानों का 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व सुनिश्चित की गई है। योजनाओं का निर्माण से लेकर योजनाओं के कार्यन्वयन तक हर पैदान पर किसानों की अहम भूमिका होगी।

2. नई कृषि प्रसार नीति के अन्तर्गत अनुसंधान एवं प्रसार को मजबूत किया जाएगा। इसके लिए देश के प्रत्येक जिले में कृषि विज्ञान केन्द्र खोला जा रहा है ताकि स्थानीय परिवेश के अनुकूल अनुसंधान हो सके तथा इसका व्यापक प्रसार हो सके। साथ ही बेरोजगार कृषि स्नातकों को एग्री क्लीनिक एवं एग्री बिजनेस का प्रशिक्षण दिया जा रहा है ताकि वे स्वावलम्बी बन सकें तथा कृषि प्रसार को भी मजबूती प्राप्त हो। निजी कम्पनियों में कार्यरत प्रसार कर्मियों को जो कृषि तथा प्रसार विज्ञान से अनजान हैं उन्हें भी कृषि प्रसार शिक्षा दिया जा रहा है ताकि वे सुचारू तथा प्रभावशाली तरीके से कृषि प्रसार का कार्य कर सकें।

3. नई कृषि प्रसार प्रणाली में कृषि प्रसार, अधिक उत्पादन सह बाजार आधारित होगा। फसलों का चुनाव स्थानीय, राष्ट्रीय तथा अर्न्तराष्ट्रीय बाजार की मांग को देखते हुए तय किया जाएगा तथा किसानों को उक्त फसलों के खेती हेतू प्रोत्साहित किया जाएगा ताकि किसानों को अधिक से अधिक मुनाफा मिल सके। किसानों को बाजार आत्मा द्वारा सरकारी या गैर सरकारी संस्थाओं एवं कम्पनियों के सौजन्य से उपलब्ध कराया जाएगा।

4. बहुत से गैर सरकारी संस्थाओं एवं कम्पनियों द्वारा भी कृषि प्रसार कार्यक्रम चलाया जा रहा है। नई कृषि प्रसार प्रणाली में जितने भी सरकारी एवं गैर सरकारी कृषि प्रसारकर्मी है उन्हे एक मंच में लाने का प्रयास किया जा रहा है ताकि सरकारी कृषि प्रसारकर्मियों की कम संख्या तथा उनकी व्यस्तता को दूर किया जा सके और प्रसार कार्य को गति दिया जा सके।

5. कृषि विभाग तथा अन्य सम्बद्ध विभाग जैसे पशुपालन, मत्स्य, तसर विभाग सब अपने स्तर से एवं अपने तरीके से किसानों के लिए योजनाएं चला रहे हैं। सभी सम्बद्ध विभागों को आत्मा एक मंच प्रदान करेगी और वे सम्मिलित रूप से किसानों के लिए काम करेगें।

6. नई कृषि प्रसार प्रणाली में कृषकों के सशक्तिकरण पर जोर दिया गया है। सशक्तिकरण हेतु फसल उत्पादक, सब्जी उत्पादक, पशुपालक, दुग्ध उत्पादक, मत्स्य पालक, रेशम उत्पादक इत्यादि जैसे जितने भी कृषक गाँवों में मौजूद हैं उनका अलग-अलग संगठन बनाया जाएगा।

7. किसानों में योजनाओं के प्रति अपनापन की भावना जागृत करने के लिए उनके कामों के लिए जैसे बीज, खाद, कृषि उपकरण या प्रशिक्षण प्राप्ति के लिए उनसे उनके क्षमता अनुसार पैसा लिया जाएगा तथा मुफ्त में कुछ भी नहीं दिया जाएगा।

किसानों, सरकारी एवं गैर सरकारी प्रसारकर्मियों, कृषि एवं कृषि से सम्बन्धित विभागों के पदाधिकारियों, वैज्ञानिकों तथा सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं को कृषि प्रसार प्रणाली में हो रही परिवर्तनों से परिचित कराना अति आवश्यक होगा या परिचित कराना होगा क्योंकि निकट भविष्य में देश के हर जिले में आत्मा मॉडल लागू होने वाला है और सारा कृषि विकास कार्य नई कृषि प्रसार प्रणाली द्वारा ही सम्पन्न होना है।

▲▲▲

MASS MEDIA & CYBER EXTENSION

Manoj Kabi
SAMETI, Jharkhand

Rapid changes in the agricultural scenario of the country are posing multiple challenges to the extension functionaries. Independent farmer of past is dependent on many players today for information, input and marketing his produce.Agriculture too is changing from traditional to commercialize. Present extension system is already under pressure due to wide ratio between the extension worker and farmer i.e. 1: 1000. Considerable time of extension worker is spent for administrative work and travel. Under these circumstances is ***it possible to serve all the farmers, all the time for all the problems?*** The answer search for cost effective and efficient support systems, in the present context, point towards a powerful tool called Mass Media.

Mass Media consisting of newspaper, magazines, traditional media, radio, TV and information technology are proved to be most powerful opinion makers in this information age. They cover more people in less time and less cost. This strength of mass media is of great help to extension workers in providing cost effective and efficient service to farmers.

The History of Printing technology goes to its discovery by a German Scientist in 14th Century. It took nearly a century for this technology to reach India. But took little time to become the powerful media to the extent of influencing the opinion of masses.

As on December 1999, the total number of newspapers and periodicals was 41,705 in the country. The total circulation of Indian Press was 10,57,08,191 copies.Around 465 agriculture magazines are published in different languages.

Traditional media includes drama, dance, songs etc. Experimentally it is proved that traditional media play important role in influencing behavior of traditional people, which includes farmers. Unfortunately, these traditional media is slowly disappearing due to dominance of TV, Films, lack of interest and encouragement from people.

RADIO:

Radio is started service in India during 1927. Today 195 radio stations, 9 relay centers and 300 transmitters are functioning in the country covering 97 % of population.At present there are 81 all India Radio stations producing and broadcasting agricultural and rural Programme in which about 60-80 mins are covered on agriculture.

TELEVISION:

Television is emerged as the most powerful medium of the present time. Due to opening of space as a result of liberalization, paved way for number of television channels. But, only few are covering agriculture programmes like Doordarshan, E TV. Hence the potential to increase, agricultural programmes through TV is immense. First telecast was made in India on 1959 and today there are 829 low power & 166 low power transmitters of varying power covering 87 percent of population.

COMPUTERS:

Effective Utilization of Mass Media in Agriculture Extension:

1. **Shifting from individual to group :**

   At present, it is not possible to attend all the farmers, all the time on all the problems. Shifting from individual to group approach is inevitable considering the cost, time and existing extension scarce

resources. To ease the growing burden of extension personnel, an exclusive agriculture TV channel, more time on radio for agriculture programmes are need of the hour.

2. Triple role of Mass Media :

Mass media has triple role of informing, entertaining and educating the masses. It is necessary for the agri business companies to utilize mass media effectively in promoting their products and sponsoring agriculture programmes. Production of innovative and quality programmes by professional will help in sustaining the interest of farmers.

3. Mass Media coordination committees :

This concept of mass media co-ordination committee aims at bringing concerted action between various stakeholders in agricultural extension and mass media to benefit the farmers. It could be group of all stakeholders in agricultural extension like farmer, scientist, traders, extension workers and media people. They could meet frequently to decide the areas to be covered for the next one month or a quarter and also should decide who has to contribute article / programme and screen before going to masses. This process will ensure right news, in right form, at right time, by right people through right channel.

4. Network of Correspondents / Reporter :

Network of resource persons to contribute to mass media on various issues of agriculture is the most important issue to be tackled first. Either the existing reporters may be trained or trained professionals may be recruited or a network of progressive farmers, extension workers and scientists have to be maintained.

5. Innovation, key to success :

Some newspaper have question-answer column which cover important field problems raised by farmers. Phone in programme (now called as Call Centre) tried in HassanAIR of Karnataka is most popular programme. Any farmer quiz programme in the lines of Koun Banega Crorepati will be popular surely. IT in agricultural extension like MSSRF, Chennai and Warna Wired Village are the successful innovation. Thus, wherever new ideas are tried, saw the success. Hence, more the innovation, more will be popularity of mass media which is necessary for sustain economically.

6. Inadequate coverage :

Most of the mass media focus on urban based issues leaving little space and time for agricultural information. Hence there is a need to dedicate more space and time for agriculture issues handled by professional agriculture journalists.

7. Simplicity can only convey and convince farmers:

The media should write agriculture article in a simple language so that that would reach the farming community in a readable and understandable format.

8. Mass Media (IT) covers people, in less time and less money :

The strategy for popularizing information technology application in agriculture extension could be in this sequence of steps:

I. Install computers

II. Capacity building of extension personnel

III. Efficient maintenance

IV. Content building

V. Making Cyber correspondence mandatory

VI. Updating the content

VII. Charging the services.

Hence, in the present context, Mass media can play very important role in agriculture extension. They can reach more people in less time and less cost. Here farmer gets right information, in right time, in right form, through right channels, by right person. Work load on extension personnel's reduced by using mass media in extension, scientists get the feedback from fields, traders, and farmers can make good profit. Hence mass media in agricultural extension is a game where all the players are winners. But, most important element is co-ordination among all stakeholders in deciding what time, what information, by whom. Making use of mass media co-ordination committees it is possible to bring desirable concerted action.

CYBER EXTENSION

Access to information and improved communication is a crucial requirement for sustainable agriculture development. Cyber extension would be major form of technology dissemination in the near future. It is essential that information availability is demand driven rather than supply driven. The world is rapidly shrinking to a **'global village'** which some courageously even calls a ' global family'. The merger of communication (Audio & Video) and computer technology has suddenly made this combination so powerful that no sector of human activity can afford to ignore it. Improved communication and information access is directly related to social and economic development. However it is observed that the rural population still has difficulty in accessing crucial information in forms they can understand in order to make timely decisions. There is a concern that the gap between the information rich and information poor is getting wider.

LIMITATION OF TRADITIONAL EXTENSION METHODS:

Before one can appreciate the question of what really makes cyber extension necessary it may be helpful to take look at some of the limitations of traditional extension techniques and process.

1. **Traditional Extension is Expensive:** It costs a lot of money to produce and print extension messages brochures. It is also expensive to train a whole chain of extension personnel's (Right from the district level, sub divisional level, at block level to village level extension workers) to understand the new technology and to answer the possible queries from farmers.
2. **Traditional Extension is very time consuming process:** for a message to pass from university / ZRS/KVK to farmers. It takes many actors to understand the same and deliver it to next layer. This process takes a lot of time and efforts on art of extension machinery of the state.
3. **In Traditional Extension the quality of messages gets eroded as it passes through different layers:** A number of evaluation studies of Training and Visit (T & V) system that the quality of extension messages gets heavily eroded when it reaches the farmers.
4. **Poor Communication Capacity of existing extension systems:** Most technical staff with in the line departments lack the capacity to effectively communicate with both, the research system and the stakeholders group. Firstly, the flow of the information from research to extension tends to be top down, rather than a two-way, interactive process aimed at identifying and solving serious problems. Secondly there is little use of up to date communications technology, including the use of electronic communication to improve feedback and technical support between research and extension personnel, and to facilitate administrative communication.

It is noted that the linkage between farmers and Block Development Officer /Agriculture Officer is poor as compared with the linkage between farmers and traders –market / Seed suppliers and Farmers and Television / Radio.

Cyber Space is the imaginary or Virtual space of Computer connected with each other on Networks, across the globe. These computers can access information in form of Text, Graphics, audio, video and animation files. The cyber space thus can be defined as the imaginary space behind the interconnected telecommunications and Computer networks, the virtual world.

Agriculture extension service seeks to impart the necessary skills to the farmers for undertaking improved agricultural operations to make available to them timely information improved practices in an easily understandable form suited to their level of literacy and awareness and to create in them a favorable attitude for innovation and change. The extension is an on going process of getting useful information to people and then in assisting those people to acquire the necessary knowledge, skills and attitudes to utilize effectively this information or technology.

Cyber extension thus can be defined as the Extension over Cyber Space. Cyber Extension means " Using the power of online networks, Computer communications and digital interactive multimedia to facilitate dissemination of agricultural technology". Cyber Extension include effective use of Information and Communication technology National and International information Networks, Internet, Expert Systems, Multimedia Learning Systems and Computer based training systems to improve information access to the Farmers, Extension workers, Research Scientists and Extension Managers. In the applied context, Cyber Extension may be defined as Dissemination of information over the cyber space for the well being of extension clients, the farmers, directly or through the established intermediary of extension personnel.

Certain unique features of communication in cyber space should therefore be noted:

- Access to the astounding storehouse of information is free.
- The information is available instantaneously round the year and twenty four hours a day.
- Communication can also be interactive (Through E Mail, Discussion Group)
- The information is available from any part on the globe (Subject to availability of accessible technology like computer, modem, telephone line etc.)
- The communication is dynamic and ever growing.

Important tool of Cyber Extension:

1. E Mail
2. Telnet
3. FTP
4. World Wide Web.

KISAN CALL CENTRES CONCEPTS:

The Department of Agriculture & Cooperation (DAC), Ministry of Agriculture, Govt. of India launched Kisan Call Centers on Jan' 04 across the country to deliver extension services to the farming community. The prime objective of these call centres is to respond to issues raised by farmers, instantly, in their local language.

A Kisan call center consists of a complex of telecommunication infrastructure, computer support and human resources organized to manage effectively and efficiently the queries raised by farmers instantly in local language.

- Mainly subject matter specialists (SMSs) using telephone and computer, interact with farmers to understand the problem and answer the queries at a call center.
- This is a functional area within an organization like Research Station / KVK etc.
- It enables establishment of close linkages and seamless communication mechanism among the key stakeholders in the extension system.
- **Kisan Call center consist of three levels.**
- **Level I:** The basic call center interface with high quality bandwidth and local language proficient agriculture graduates. Calls are picked up by Level-I functionary with a welcome note and will take down the basic information and query of the caller. The details will be fed into the computer located next to the operator by the operator himself along with the question asked by the farmers.
- **Level II:** It consists of SMSs who will be located at their respective place of work. In case the first level operator is not able to answer the question, the operator will then forward the call to the concerned SMS (SAU, DOA, DOH, DOAH, DOF, DOS). The data relating to the caller including the question asked will also be transferred to the Level-II functionary on his computer along with the call.A system is also provided to revert back to the caller by post, fax, e-mail or by telephone within 72 hours in case the call is not answered. SMSs should have a minimum of 10-15 years of field experience with good communication skills in local language.
- **Level-III:** This is a management group to ensure ultimate answering and resolution of all the farmers queries which are not resolved at Level-I and Level –II. This consist of a dedicated cell at the Nodal office. Appropriate replies to these questions should be framed in consultation with the concerned specialists available within or outside the state by the nodal cell. Replies to the queries by Level-III are sent to the farmers promptly by post, fax, telephone, email etc (whichever suitable). within 72 hours of the receipt of the call by the Nodal Office.

▲▲▲

ROLE OF INFORMATION TECHNOLOGY IN AGRICULTURE

Manoj Kabi & Sri Ajay Kumar
SAMETI, Jharkhand

I. CONSTRAINTS, CHALLENGES & OPPORTUNITIES

1. The Info Structure:

The computer density in Jharkhand is very low. Some of the Institutions and Departments have already established connectivity in order to facilitate information sharing, Internet communication and data collection.

Valuable Scientific information is being generated by the Universities, Research centres and other academic institutions. The research results particularly in the area of agriculture regarding release of new crop varieties, soil fertility, use of plant nutrients, pest and disease control, crop production etc. are technologies to be disseminated to farmers. IT as a tool for communication of these results is yet to be recognized.

2. Use of Indian Language:

The Internet has not resolved the problem of languages. To take IT to rural masses it is a basic requirement. English has been pressed as a language for Internet and web communications but that does not help millions of people who communicate in other languages. There is an urgent need to convert micro languages and programmes into Indian languages. Now Microsoft (India) has initiated to make some programmes in Hindi.

3. Awareness Level:

The level of awareness in electronic communication in India no doubt has increased during the last 3 years. But it was noticed that in spite of the considerable effort by the Govt. in this area, the awareness regarding this is highly deficient at the level of people for whom these services are meant.

4. Employment Generation:

Large scale development of IT would result in employment creation not only in IT sector but in other sectors too. The magnitude should be understood from present scenario in Television, which has a large number of channels with multilingual programming.As a result of this a large number of people are induced in this industry as scriptwriter, artists etc. The employment potential in IT is going to be much more than TV provided the proposal to provide one information kiosk in each block/ village comes with knowledge to handle IT as a tool so that a large number of young men and women gradually can be employed in data collection, content generation etc.

5. E-Governance:

According to Bill Gates, E-Governance facilitate changes in the way people live, learn and work. The experiences of the States like A.P, Karnataka, Madhya Pradesh is quite encouraging. The basic approach is that through Improved communication of people for services and facilities can be reduced. In the other words all government related services and utilities should be provided ONLINE. These services includes issuing of all certificates, land records, research output, database should be available at the touch of a button. It also includes accessing all information on Govt. records without having to waste hours/ days searching for files or missing paper. This can be initiated in our state; provided the process is adopted slowly and properly organized.

II. ROLE OF IT IN EMPOWERMENT OF RURAL COMMUNITIES

The scattered and sparsely populated rural settlement pattern is a bedrock in providing services to the masses. The advantage of IT is that it provides online services; every one is location independent, no distance and no geographical barriers. Everyone is close to the other, to the world of learning, to the market, services and entertainment. As most of the rural people cannot afford computer and Internet facilities, Empowerment should be through the Community Telecentres.

As the farmers have low productivity problem, in agriculture he would like to have information, which would help him to decide optimum cropping pattern and assured high productivity. Our agricultural universities and research centers have large volumes of research findings. The information technology should be used as a tool for transferring the knowledge locked up in the research centers to the actual beneficiary i.e. the farmers. In high value agriculture farmers should have access to neighbour village/block/districts/ state/country and finally the world market information. He must be able to decide judiciously whether he should go for a particular crop.

Even at the local level, the farmers should have access to market information at least in the districts or nearby blocks so that he can check up the highest rates and bargain prices for his produce.

There is a common phenomenon that if there is any damage to the electricity distribution line or bore well pump it remains unattended days together. It must be possible to send messages to the concerned authorities and get it remedied.As the farmers have to depend on financial institution like NABARD for loan, it will be handy if he has access to authenticated revenue and land records. It would help not only save time but also avoid expenditure. In addition to this, IT can provide info on the natural calamities, epidemics etc.

III. BEST PRACTICES IN APPLICATION OF IT

Diffusion of IT for agriculture and rural development has been attempted only by a few states in India. These states include Andhra Pradesh, Karnataka, Kerala, Madhya pradesh, Maharashtra and Pondicherry.

1. Andhra Pradesh:

InAndhra Pradesh the thrust in IT function has been on e- Governance. Computerization of major departments like commercial taxes, Excise, Treasuries, Transport even at Cinema hall etc. has helped in mobilizing better revenue. The programmes which have impact in the rural areas (especially farmers) include the digital registration and computerization of land records.

2. Kerala

In Kerala, The IT diffusion process started in Ernakulam districts, which had the distinction of achieving cent percent literacy first among the districts in the country. An information network was created linking all departments at the panchayat level. In 20 panchayats data were collected through volunteers and entered in their local language (i.e. Malayalam) using phonetic keyboard. Now the information base is being use for decentralizing planning in kerala. The effort of the Information Kerala Mission (IKM) is to extend this programme to all the 990 panchayats in the state.As part of this, Rural Information centres were established in one panchayat each in all districts.

3. Karnataka

At the outskirts of Bangalore, a gram panchayat bellandur has been computerized in September' 1999. The system has a database of 2000 land records and 10,000 citizens. The system has information about revenue and expenditure of panchayats. The Gram Panchayat Information System (GPIS)

provides complete information about roads, electricity, water supply, irrigation, rainfall etc. to enable to take quick and intelligent decision on development activities with in the farming community. Later the GPIS is integrated with a website of the Gram Panchayats Information Kiosk to enable farming community to access information on developmental schemes in progress to provide fully transparent Governance.

4. Madhya Pradesh (Gyandoot- The Intranet)

The Pilot project in IT application in Dhar districts in Madhya Pradesh popularly known as **"Gyan Doot"** covers 311 Gram Panchayats extending over 600 villages covering 5 lakh population. Gyandoot is an Intranet (Networked Center) in Dhar district connecting 21 Cyber cafes catering to the everyday needs of the masses. The Cyber cafes are operated by semi skilled persons with knowledge of computer fundamentals and basic education at Matriculation level. The System provides prices and volumes of local markets of Dhar, Badnawar, Indore as well as Principal national agricultural produce markets on a day-to-day basis. The land records issued by the cyber cafes are accepted by the local banks for providing loans.

5. Maharashtra (Warna Wired Village Project)

The project was launched during 1998 and it covers 70 villages comprising of 46 villages from Kolhapur district and 24 villages from Sangli district of Maharashtra state. The information dissemination is through computer booths located in each village. The farmers are provided with information on crop and agronomy practices, pest and disease control, marketing etc. at the grass root level. Every village is linked to the Directorate of Marketing in Pune, which provides the prices and marketing information of various commodities.

6. Pondicherry (Information Village project in Pondicherry)

The basic concept of the project is that Generic information when integrated with specific local knowledge will lead to value addition. The project was commissioned in two villages during 1998 and subsequently extended to six more villages covering a population of 11,000. The project was implemented through a Value addition centre (VAC) and 8 village knowledge centres (VKCs)/ Village information Shops (VIS).

The function of the Value addition centre at villianur included gathering and transmission of information to VKCs in respect of commodity price, weather, Government announcements, daily news etc.Another important function has been creation and maintenance of location specific data in respect of local hospitals, Training programme, Govt. welfare programmes entitlements, local experts in agriculture and fisheries, officials list of families below poverty line, soil, weather and cropping pattern etc.

(RECOMMENDATION)

The new millennium is dominated by Information and Technology. More efforts were on to develop new technologies to receive, sort, store and evaluate information. These technologies include use of computers, fax, teleconferencing, video conferencing and Internet.All sections were learning to access and use it to their best possible extent. But there is a missing element in the content of Information and services provided. So especially in Jharkhand, we will through our emphasis to rural masses with the objectives of empowering farmers to enable them to take better decision.

As Agriculture and rural development is complementary to each other, therefore the scope has been expanded to the applications of IT for agriculture and rural development.

In Jharkhand, there is a problem of power i.e. electricity which is lacking in many villages. But for this only reason no body can afford to ignore the greatest technology i.e. IT in this period of time. So by keeping the successful case studies of other states in mind, we have to opt for some innovative option for the use of IT as a tool in developmental activities of farming community.

As the State Government has to invest a sizeable amount for implementing some schemes related to IT, a cautious approach is needed. In this context, we should keep in view the experiences of other states where IT related activities are being adopted in a massive scale.

Currently the National Agricultural Technology Project (NATP) is being implemented jointly by ICAR and DAC to provide support in organization and management systems including information system and innovation in technology dissemination. The latter part is being done by the Directorate of Extension in the Ministry ofAgriculture, Govt. of India in collaboration with MANAGE. The focus of this programme is on an integrated extension delivery and increased use of Information Technology for effective dissemination.

▲▲▲

किसानों का सशक्तीकरण और राष्ट्रीय कृषि प्रसार नीति का बदलता स्वरूप

डॉ. आर. पी. सिंह 'रतन'
प्रसार शिक्षा विभाग, कृषि संकाय, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834 006

भारत की जीवन रेखा कृषि है, जो इस देश की संस्कृति एवं परम्परा को परिभाषित करने के साथ-साथ आर्थिक स्तम्भ का काम भी करता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से आज तक कृषि के क्षेत्र में अप्रत्याशित प्रगति हुई है, परन्तु पूंजी की कमी, आधारभूत संरचनाओं की कमजोरी तथा कृषि उत्पादों की मांग से सम्बंधित कठिनाईयों के परिणामस्वरूप आर्थिक रूप से यह क्षेत्र अपेक्षाकृत कम लाभदायक पेशे के रूप में दृष्टिगोचर होता है। कृषि उत्पादों के मूल्य की अनिश्चितता, खाद्य प्रसंस्करण के क्षेत्र का पिछड़ा होना, उत्पादकता के स्तर में विषमता तथा प्राकृतिक संसाधनों के स्तर में गिरावट आदि कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं, जो देश के लगभग 20 करोड़ से अधिक किसानों एवं कृषि कामगारों के समक्ष चुनौतियों के रूप में खड़ी हैं। अतः इन चुनौतियों का मुकाबला करने के लिये ठोस नीति एवं कार्यक्रमों के निरूपण तथा क्रियान्वयन की आवश्यकता राष्ट्रीय स्तर पर महसूस की जा रही है। आर्थिक सुधारों के इस दौड़ में जहाँ कृषि व्यापार का भूमण्डलीकरण हो रहा है तथा दुनिया उदारीकरण एवं निजीकरण की तरफ भाग रही है, भारतीय कृषि को लाभोन्मुख बनाकर उद्योग एवं व्यवसाय के रूप में प्रस्तुत करना नीति निर्धारकों एवं योजना निर्माताओं के लिये एक अति महत्वपूर्ण कार्य बन गया है।

राष्ट्रीय कृषि नीति

उपर्युक्त संदर्भ में केन्द्र सरकार द्वारा एक राष्ट्रीय कृषि नीति तैयार की गयी है जिसके, अर्न्तगत कृषि क्षेत्र में निम्नलिखित सुधारों पर बल दिया गया है :

- एक ठोस एवं मजबूत कृषि अर्थब्यवस्था की स्थापना जो बढ़ती जनसंख्या को खाद्य एवं पोषण सुरक्षा प्रदान कर सके, बढ़ते औद्योगिक आधार को कच्चा माल आपूर्ति कर सके, निर्यात हेतु अधिक गुणवत्तापूर्ण पैदावार दे सके तथा किसानों को समतामूलक मुनाफा प्रदान कर सके।
- इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये प्रस्तावित रणनीति में जिन मुख्य बिन्दुओं को शामिल किया गया है उनमें प्रमुख है - भारतीय कृषि में मौजूद विस्तृत सम्भावनाओं जिन्हें अभी तक व्यवहार में नहीं लाया गया है के माध्यम से 4 प्रतिशत से अधिक वार्षिक वृद्धि दर प्राप्त करना, ग्रामीण आधारभूत संरचनाओं का विकास करना, कृषि उत्पादों को गुणवत्तापूर्ण मूल्य प्रदान करना, कृषि व्यवसाय के स्तर में बढ़ोतरी करना, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अधिक अवसर बढ़ाना, ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन रोकना, कृषकों एवं कामगारों के जीवन स्तर को ऊँचा करना तथा आर्थिक उदारीकरण तथा भूमण्डलीकरण से उत्पन्न हुई समस्याओं का समाधान करना।
- कृषि विकास दर में वृद्धि की शर्तों में जिन मुख्य बातों पर बल दिया गया है उनमें शामिल है, प्राकृतिक संसाधनों के स्तर में बिना गिरावट लाये उनका क्षमतापूर्ण उपयोग, समतामूलक विकास, माँग पर आधारित तथा घरेलू बाजार की आवश्यकताओं एवं निर्यात की सम्भावनाओं को ध्यान में रखकर फसलों एवं उद्यमों का चुनाव तथा आर्थिक, तकनीकी एवं पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए टिकाऊ कृषि का विकास।

राष्ट्रीय कृषि प्रसार-नीति

राष्ट्रीय कृषि नीति में वर्णित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये यह अवश्यम्भावी हो जाता है कि कृषि अनुसंधान एवं प्रसार की नीतियों में भी तदनुरूप आवश्यक परिवर्तन किये जायें। जैसा कि स्पष्ट है, राष्ट्रीय कृषि नीति में किसानों के सशक्तीकरण पर अधिक बल

दिया गया है, अतः कृषि अनुसंधान एवं प्रसार नीति को भी किसान केन्द्रित बनाने की आवश्यकता होगी। यहाँ मैं कृषि प्रसार नीति पर इस चर्चा को आधारित करना चाहूँगा। कृषि प्रसार नीति कैसी हो, इसका स्वरूप एवं ढ़ाँचा कैसा हो, इन बातों पर देश में विस्तृत चर्चाओं का सिलसिला जारी है।

कृषि प्रसार नीति एक वैचारिक स्वरूप या ढ़ाँचा है, जिसमें पूर्व के अनुभवों तथा भविष्य की जरूरतों को ध्यान में रखकर कार्य मुद्दों को निर्धारित किया जाता है, जिससे कि किसानों की आकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं की पूर्ति तथा राष्ट्रीय एवं स्थानीय हितों को ध्यान में रखकर कृषि प्रसार द्वारा संभावित चुनौतियों का मुकाबला करने के लिये रणनीति के मुख्य बिन्दुओं का समावेश हो। इस स्वरूप में कृषि प्रसार क्रिया-कलापों को सीमाबद्ध कर सम्बंधित दृष्टि, बृहत उद्देश्य, लक्ष्य आदि को परिभाषित कर उनकी प्राप्ति के लिये रणनीति के बिन्दुओं तथा कार्य-योजनाओं की रूप-रेखा को तय करने की जरूरत है। इसके अतिरिक्त अनुसंधान-प्रसार एवं किसानों की सम्बद्धता को कैसे मजबूत किया जाये तथा किस प्रकार का सांस्थानिक सहयोग एवं सहायता की जरूरत होगी, को परिभाषित किया जाये। राष्ट्रीय स्तर पर प्रस्तावित कृषि प्रसार नीति के स्वरूप को निम्न प्रकार से देखा जा सकता है:

राष्ट्रीय कृषि नीति के पॉरा 19 एवं 20 में वर्णित तथ्य

- प्रसार प्रणाली का व्यापक विस्तार एवं पुर्नजीवन।
- अनुसंधान-प्रसार एवं किसानों की सम्बद्धता का मजबूतीकरण।
- प्रसार प्रणाली को किसानोन्मुख बनाने के लिये अभिनव एवं विकेन्द्रित सांस्थानिक व्यवस्था।
- माँग आधारित उत्पादन प्रणालियों के विकास हेतु कृषि विज्ञान केन्द्रों, गैर सरकारी संस्थाओं, कृषक संगठनों, सहयोग समितियों, कॉरपोरेट संस्थाओं एवं पारा तकनीशियनों की भूमिकाओं को प्रोत्साहन।
- क्षमता एवं कौशल/हुनर विकास।
- टिकाऊ वितीय व्यवस्था का विकास।
- कृषि विकास में लिंग सम्बंधित चिन्ताओं (पुरूष-महिला सहभागिता) को मुख्य स्थान।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007) के एप्रोच पेपर के पॉरा 3.11 में वर्णित तथ्य

- प्रसार सेवाओं का आमूल-चूल मरम्मत/परिवर्तन।
- तकनीकों के संचार की विधियों के परिमार्जन हेतु सार्थक सुधार।
- महिला कृषकों की जरूरतों के अनुरूप अनुसंधान एवं प्रसार सेवाओं में परिवर्तन लाने के लिये विशेष उपाय।

व्यय सुधार आयोग के पॉरा 3.34 में वर्णित तथ्य

- राज्यों की प्रसार सेवाओं में मुख्य भूमिका।
- केन्द्र द्वारा नीति निर्धारण में तथा निधि उपलब्ध कराने में सहयोग एवं सहायता।
- बृहत् प्रबंधन के कैफेटेरिया एप्रोच के अनुरूप योजनाओं का निरूपण।

कृषि प्रसार नीति का प्रस्तावित स्वरूप

- किसानों के सशक्तीकरण को केन्द्र में रखकर निम्नलिखित बिन्दुओं पर अमल :
  1. सरकारी क्षेत्र में सुधार।
  2. निजी क्षेत्र को प्रोत्साहन।
  3. सूचना प्रौद्योगिकी/जन संचार के माध्यमों का संवर्द्धन।
  4. क्षमता विकास एवं कौशल/हुनर विकास।
  5. लिंग सम्बंधित चिन्ताओं को मुख्य मुद्दा बनाना।

प्रस्तावित प्रसार सुधारों के महत्पवूर्ण सूचक :

1. नीतिगत सुधार
2. सांस्थानिक पुनर्गठन
3. प्रबंधन सुधार
4. अनुसंधान-प्रसार एवं किसानों की सम्बद्धता का मजबूतीकरण
5. क्षमता विकास एवं कौशल/हुनर विकास
6. किसानों का सशक्तीकरण
7. कृषि में महिलाओं को उचित स्थान
8. सूचना प्रौद्योगिकी का व्यवहार
9. टिकाऊ वित्तीय व्यवस्था का विकास एवं संसाधन उगाही
10. निजी प्रसार व्यवस्था में सरकारी क्षेत्र की बदलती भूमिका

1. नीतिगत सुधार

- कृषि प्रणाली विकास एप्रोच को अमल में लाकर अनुसंधान एवं प्रसार कार्यावली का किसानों की सहभागिता एवं जरूरतों के आधार पर निर्माण।
- बहुअभिकरणीय प्रसार व्यवस्था का प्रचलन/उदय।
- सरकारी प्रसार तंत्र में सुधार :
  - सुयोग्य एवं अधिक पेशेवर प्रसार कार्यकर्त्ताओं की जरूरत।
  - प्रखण्ड स्तर पर कृषि सलाहकारों के रूप में विषय-वस्तु विशेषज्ञ।
  - प्रखण्ड स्तर से नीचे निजी प्रसार सेवकों की भूमिका।
  - अभिनव रूप से पुर्नगठित संस्थानों में सरकारी क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों का समायोजन।
- विकेन्द्रित एवं लचीली व्यवस्था।
- किसानोन्मुख प्रणाली जो नीचे से उपर की तरफ विकसित हो।
- सरकारी एवं निजी क्षेत्रों के बीच साझेदारी।
- लाभार्थी के अंशदान को महत्व।
- सहभागी प्रक्रिया को प्रोत्साहन।
- विपणन प्रसार पर बल।
- किसानों में समस्या समाधान के कौशल का विकास।
- निजी प्रसार सेवा मुहैया करानेवालों को सरकारी धन की व्यवस्था प्रतियोगी अनुदान निधि के आधार पर।
- तकनीकी हस्तांतरण में निजी क्षेत्र के अभिकरणों को प्रोत्साहित करना :
  - गैर सरकारी संगठनों, कृषक संगठनों एवं पॉरा तकनिशियनों के माध्यम से।
  - कृषि उपचार केन्द्रों, कॉरपोरेट क्षेत्र एवं सहयोग समितियों के द्वारा।
  - निजी संस्थाओं एवं ट्रस्टों के द्वारा।

2. सांस्थानिक पुनर्गठन

- नवीन विकेन्द्रित सांस्थानिक व्यवस्था।
- कृषि एवं अन्य विभागों से सम्बंधित गतिविधियों पर समन्वित प्रसार सेवा उपलब्ध कराने के लिये ए. टी. एम. ए. की तरह निबंधित, स्वशासी एवं लचीले संस्थाओं को प्रोत्साहन।
- रणनीतिक अनुसंधान-प्रसार योजनाओं का सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन विधि द्वारा निर्माण।
- प्रखण्ड स्तर पर एकल खिड़की प्रसार व्यवस्था हेतु कृषि सूचना एवं सलाहकार केन्द्रों का विकास।
- प्रसार कार्यकर्त्ताओं एवं अधिकारियों का कृषि सलाहकारों के दल के रूप में विकास।
- प्रसार में समूह एप्रोच पर बल।

3. प्रबंधन सुधार

- राज्य प्रसार कार्य योजना को अमल में लाने के लिये राज्यों को केन्द्रीय सहायता 50:25:25 के अनुपात में क्रमश: सरकारी, निजी एवं जन संचार क्षेत्रों में।
- सरकारी प्रसार कार्यकर्त्ताओं/अधिकारियों पर खर्च का वहन राज्य सरकार द्वारा तथा तकनीकी संचार एवं अन्य खर्च भारत सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा सम्मिलित रूप में।
- ए.टी.एम.ए. जैसी निबंधित संस्थाओं में भारत सरकार द्वारा प्रदत्त निधि जमा होगी तथा उसको निर्गत रणनीतिक अनुसंधान एवं प्रसार योजनाओं के माध्यम से किया जायेगा।
- समन्वित प्रयास हेतु कृषि विज्ञान केन्द्रों की भूमिका महत्वपूर्ण होगी।
- सामुदायिक स्तर पर निजी प्रसार सेवाओं को प्रोत्साहन।
- गैर सरकारी संगठनों/कृषक संगठनों द्वारा प्रसार सेवाओं की मुहैया को प्रोत्साहन।
- कृषक संगठनों द्वारा अर्द्ध प्रसार कार्यकर्त्ताओं को प्रोत्साहन।
- पंचायत राज संस्थाओं के साथ विभिन्न स्तरों पर उचित समन्वयन एवं सम्बद्धता।
- सरकारी एवं निजी क्षेत्रों को कार्य सम्पादन के आधार पर धन समर्थन।
- प्रसार सेवाओं को ठेके पर चलाना।

4. अनुसंधान-प्रसार-किसान सम्बद्धता में सुधार

- किसानों एवं वैज्ञानिकों के बीच सीधे सम्पर्क को विभिन्न स्तरों पर बढ़ाना।
- राष्ट्रीय, प्रादेशिक एवं जिला (कृषि विज्ञान केन्द्र) स्तरों पर अनुसंधान एवं विकास के बीच सीधे सम्पर्क को बढ़ाना।
- रणनीतिक अनुसंधान एवं प्रसार योजना में वर्णित नीचे/लघु स्तर पर चिन्हित अनुसंधान-प्रसार रणनीतिक बिन्दुओं को प्राथमिकता के आधार पर अनुसंधान प्रणाली को प्रदान करना।

5. क्षमता निर्माण/ विकास

- प्रत्येक राज्य द्वारा कौशल जरूरतों के विश्लेषण के आधार पर दीर्घकालीन प्रशिक्षण योजना का निर्माण।
- कार्य योजना के आधार पर भारत सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा संयुक्त रूप से प्रशिक्षण संस्थानों/केन्द्रों को एक बार कैच-अप अनुदान।
- राज्य कृषि प्रबंधन एवं प्रसार प्रशिक्षण संस्थान (समेति) की तर्ज पर संरचनात्मक परिवर्तन।
- मानव संसाधन विकास से सम्बंधित क्षमताओं में उन्नयन/सुधार हेतु राष्ट्रीय कृषि प्रसार प्रबंधन संस्थान (मैनेज) की महती भूमिका।

- मूल सक्षमता में विकास हेतु बाहरी स्रोतों से ठेके पर आधारित सहयोग/सहायता।
- राष्ट्रीय/राज्य स्तर पर निर्मित सूची के आधार पर मानव संसाधन विकास से सम्बंधित संसाधनों का चयन।
- मानव संसाधन विकास से सम्बंधित मामलों में सरकारी एवं निजी क्षेत्रों के बीच साझेदारी को बढ़ाना।
- विशेषज्ञता के आधार पर सरकारी एवं निजी संस्थानों के तंत्र का निर्माण।

6. किसानों का सशक्तीकरण

- विभिन्न स्तरों पर विभिन्न सामाजिक संवर्गों के सभी निर्णय निर्माण समितियों में किसानों का प्रतिनिधित्त्व।
- निर्णयों को किसानों द्वारा प्रभावित करने के उद्देश्य से कृषक व्यवहार समूहों/कृषक हित समूहों के माध्यम से कार्यक्रमों का नियोजन एवं क्रियान्वयन।
- सरकार, प्रसार सेवा देनेवालों एवं किसानों के बीच सहमति पैदा करने की व्यवस्था ठेकों के आधार पर।
- निम्नलिखित बिन्दुओं पर विशेष बल :
  - क्षेत्रीय आधार पर चिन्हित कौशलों को उपलब्ध कराना।
  - तकनीकों एवं प्रशिक्षणों की दिशाओं को तय करना।
  - किसानों/कृषक महिलाओं को सूचना प्रौद्योगिकी की तरफ प्रवृत करना।
  - कृषि प्रणाली आधारित टिकाऊ तकनीकों (समन्वित व्याधि प्रबंधन/समन्वित पोषण प्रबंधन) को बढ़ावा।
  - कृषि विपणन के क्षेत्र में किसानों का क्षमता निर्माण।

7. कृषि में महिलाओं को मुख्य धारा में लाना

- तकनीकी एवं प्रशिक्षण के लिहाज से कृषि प्रसार विधियों में लिंग से सम्बंधित चिन्ताओं को सम्मिलित करना।
- कृषि महिलाओं तक प्रसार सेवाओं की पहुँच बढ़ाने के लिये भारत सरकार एवं राज्य सरकारों द्वारा विशेष प्रयास।
- राज्य प्रसार कार्य योजनाओं में कृषक महिलाओं पर विशेष बल।
- कृषि प्रसार सेवाओं का पुनर्गठन कृषक महिलाओं पर विशेष ध्यान देने के उद्येश्य से।
- कृषि एवं तत्सम्बंधी क्षेत्रों में महिला प्रसार कार्यकर्त्ताओं को विशेष प्रोत्साहन।
- महिला कृषकों की जरूरतों के अनुरूप कृषि तकनीकों एवं उपकरणों का विकास एवं विस्तार।
- इ. ए. पी. के अन्तर्गत चयनित प्रदेशों में प्राप्त अनुभवों के आधार पर तकनीकों, प्रशिक्षणों, प्रदर्शनों एवं परिदर्शनों के माध्यम से कृषक महिला समूहों का सशक्तीकरण।

8. सूचना प्रौद्योगिकी का व्यवहार

- विभिन्न स्तरों पर सूचना प्रौद्योगिकी/जन संचार माध्यमों को बढ़ावा देना।
- कृषि विपणन में सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग।
- जन संचार माध्यमों का वृहत एवं सकारात्मक व्यवहार।
- देशी भाषा में कृषि संवादों का विस्तार/प्रसार।
- सूचना प्रौद्योगिकी/जन संचार माध्यमों के उपादानो में किसानों की सहभागिता।
- निजी क्षेत्र की सहभागिता द्वारा प्रखण्ड स्तर पर कृषि सूचना एवं सलाहकार केन्द्रों (एफ.आई.ए.सी.) एवं प्रखण्ड स्तर से नीचे सूचना दुकानों की स्थापना।

- सूचना प्रौद्योगिकी के व्यवहार हेतु क्षमता विकास।
- सैटेलाईट तकनीकों का प्रयोग।

9. संसाधन संग्रहण एवं वित्तीय स्थायित्व

- लघु/सीमांत किसानों, जोखिम उन्मुख/उपेक्षित क्षेत्रों के कृषि विकास में सरकार सम्पोषित प्रसार सेवाओं की महती भूमिका।
- कृषि सलाहकारों के दल जो एक तरफ वैज्ञानिकों के सम्पर्क में और दूसरी तरफ किसानों के सम्पर्क में रहेंगे की भूमिका प्रसार पर खर्च को प्रभावी बनाने में सहायक हो सकेंगे।
- निजी क्षेत्र का प्रसार सेवाओं में व्यापक प्रयोग हेतु उचित वातावरण का निर्माण।
- सरकारी प्रसार सेवाओं के लिये किसानों एवं कृषक संगठनों द्वारा सरकारी सहयोग पर खर्च भुगतान।
- कृषि विज्ञान केन्द्रों एवं सरकारी प्रक्षेत्रों के लिये रिवॉल्विंग निधि की व्यवस्था।
- अर्द्ध प्रसार कार्यकर्त्ताओं को कृषक समूहों द्वारा भुगतान।
- प्रसार सेवाओं के लिये शुल्क भुगतान।

10. सरकार की बदलती भूमिका

11. गुणवत्तापूर्ण प्रबोधन एवं नियंत्रण सुनिश्चित करना

- निजी क्षेत्र में कार्यरत प्रसार सेवा प्रदान करने वालों को दिशा निर्देश एवं समन्वयन प्रदान करना।
- निजी प्रसार सेवकों को उचित वातावरण प्रदान करना।
- स्वस्थ प्रतियोगी/प्रतिभागी वातावरण का निर्माण।
- कृषक संगठनों एवं निजी उद्यमियों को फसल कटनी के उपरान्त एवं मूल्य संवर्द्धन सेवाओं में मदद करना।
- सरकारी एवं निजी क्षेत्रों में कार्यरत प्रसार कार्यकर्त्ताओं/संस्थाओं को सहायक आधारभूत संरचनाओं के क्षेत्र में प्रोत्साहित करना।

निष्कर्षत:

भारतीय कृषि के सम्यक् विकास हेतु आर्थिक सुधारों के तहत उदारीकरण, निजीकरण एवं भूमण्डलीकरण के के परिप्रेक्ष्य में तैयार की गयी राष्ट्रीय कृषि नीति के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये प्रस्तावित कृषि प्रसार नीति के स्वरूप में वर्णित पाँच स्तम्भों एवं 10 प्रस्तावित सुधारों का अनुपालन करने की दिशा में सभी सरकारी, गैर सरकारी एवं निजी भागीदारों की अहम भूमिका होगी। कृषि प्रसार-नीति के तहत जिन मुख्य बातों पर बल दिया गया है, उनमें प्रमुख है - प्रसार का बहुअभिकरणीय होना, सुधारोन्मुख होना, राज्य स्तर पर निर्मित प्रसार कार्य योजना के आधार पर क्रियाशील होना, सुधार सम्बंधी खर्चों में केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों की साझेदारी, ए.टी.एम.ए. जैसी स्वशासी अभिकरणों के माध्यम से तथा निजी क्षेत्र एवं अर्द्ध प्रसार कार्यकर्त्ताओं की महती भूमिका प्रखण्ड स्तर से नीचे तक। कृषि प्रसार नीति के इस स्वरूप में जिस बात पर सबसे ज्यादा बल दिया गया है वह है किसानों का सशक्तीकरण तथा सरकारी प्रसार सेवाओं पर उनकी निर्भरता को धीरे-धीरे समाप्त करना। वर्त्तमान में इस स्वरूप को आगामी 20 वर्षों के परिप्रेक्ष्य में तैयार किया गया है।

▲▲▲

कृषि विकास में महिलाओं की सहभागिता एवं उनके सशक्तीकरण के उपाय

डा. (सुश्री) निभा बारा
प्रसार शिक्षा विभाग, कृषि संकाय, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834 006

कृषि विकास में महिलाओं की सहभागिता आदि काल से रही है। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि कृषि कला का सूत्रपात महिलाओं ने ही किया। प्राचीन काल में जब पुरूष शिकार की खोज में जाया करते थे तब महिलाएँ स्थानीय वनस्पतियों के बीजों को एकत्रित करके उनकी खेती द्वारा खाद्य, पशु-चारा एवं ईंधन सामग्रियों का प्रबन्ध करती थीं। यही कला कालान्तर में उन्नत कृषि प्रणाली में परिवर्तित हो गई।

कृषि में महिलाओं का योगदान

आज विश्व के ज्यादातर देशों में कृषि में महिलाओं का विशेष योगदान है और 60 से 80 प्रतिशत कृषि कार्य महिलाएँ करती है। बंगलादेश, नेपाल और भूटान में कृषक महिलाओं की संख्या 90 प्रतिशत है। भारत एवं अन्य विकासशील देशों में अधिकांश आहार उत्पादन महिलाएँ ही करती हैं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएँ विश्व आहार का लगभग 50 प्रतिशत पैदा करती है। भारतीय अर्थ-व्यवस्था खेती और पशुपालन पर निर्भर करती है। कृषक महिलाएँ भारतीय कृषि व्यवस्था की रीढ़ है। देश की करीब 75 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है जिसका 45 से 48 प्रतिशत हिस्सा महिलाओं का है। देश के आर्थिक विकास में कार्यरत महिलाओं में 84 प्रतिशत कृषि और इससे जुड़े कार्यों में संलग्न है। इसमें 50 प्रतिशत कृषि मजदूर हैं। अगर कहा जाये कि महिलाओं के असीम योगदान से आज हमारा देश खाद्यान्न एवं दुग्ध उत्पादन में आत्मनिर्भर बना है तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। मगर वहीं दूसरी ओर दुखद स्थिति यह है कि आज महिलाएँ उपेक्षित हैं। उनके परिश्रम, श्रम, उर्जा या समय का सही मूल्यांकन विश्व स्तर पर नहीं हो पाया है। संयुक्त राष्ट्र आयोग के अनुसार यद्यपि महिलाएँ विश्व की आबादी का 50 प्रतिशत है तथा दो तिहाई कार्य करती हैं। किन्तु मात्र एक तिहाई पारिश्रमिक पाती है, ये देश में प्रयुक्त की जाने वाली खाद्य सामग्री का 50 प्रतिशत उत्पादित करती हैं, किन्तु आय का केवल 10 प्रतिशत भाग प्राप्त करती हैं। महिलाओं की मालकियत में देश की केवल 10 प्रतिशत सम्पति है। झारखण्ड समेत भारत के अन्य राज्यों में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले 35 प्रतिशत परिवारों की मुखिया महिला ही हैं। भारत के श्रम बल का दो तिहाई से ज्यादा और आर्थिक रूप से सक्रिय महिला वर्ग का लगभग 50 प्रतिशत कृषि एवं उससे जुड़े व्यवसायों में लगा है। इनमें भी सबसे अधिक ग्रामीण महिलाएँ छोटे एवं सीमांत कृषक परिवारों की है और खेतिहर मजदूरों में भी अधिक संख्या इन्हीं की है। ये खेतिहर महिलाएँ रोजाना 14-16 घण्टे तक अपने हाथों से उत्पादन श्रम करती है। पहाड़ी इलाकों की महिलाओं का योगदान सर्वाधिक आँका गया है। झारखण्ड जैसे राज्यों में ये प्रतिदिन औसतन 14-15 घण्टे कृषि और इससे जुड़े कार्यों में लगाती है। कृषक महिलाएँ घर की देख-रेख और घरेलू कार्यों के साथ ही कृषि कार्य करती हैं। झारखण्ड में उदाहरण स्वरूप खेती कार्य करते, जलावन या पानी लाते समय बच्चे को पीठ में बाँधे रखती हैं। इतना ही नहीं जनजातीय महिलाएँ इन कार्यों को बहुत कम उम्र से ही करने लगती हैं। उदाहरण के लिए झारखण्ड में दस से पन्द्रह वर्ष की आयु की लड़कियाँ व्यस्क औरतों का करीब 20 प्रतिशत कार्य करती हैं।

महिलाओं कि वास्तविक स्थिति

उपर वर्णित विभिन्न योगदानों के बावजूद ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में अपेक्षित परिवर्तन नहीं आ सका है। ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं के विकास तथा राष्ट्रीय विकास में उनकी भूमिका को बल प्रदान करने के लिए अभी बहुत कम कार्य किये गये है। जनजातीय महिलाओं के संदर्भ में ये बातें और भी महत्वपूर्ण हो जाती है।जनजातीय कृषि व्यवस्था एवं पारिवारिक आय में महिलाओं का योगदान पुरूषों से अधिक है, परन्तु विश्व एवं देश के अन्य क्षेत्रों की भाँति इनके योगदान एवं सहभागिता को सही रूप में आँका नहीं जाता है तथा ये पर्दे पर दिखाई नहीं देने वाले पात्र की भूमिका निभाती हैं। इनमें व्याप्त घोर निरक्षरता एवं अज्ञानता के परिणामस्वरूप इनकी स्थिति और भी दयनीय हो जाती है जबकि विकास कार्यक्रमों के लाभ से इन्हें वंचित कर दिया जाता है।

सिंचाई सुविधाओं की कमी एवं वर्षा पर आधारित कृषि प्रणाली के परिणामस्वरूप एक फसली कृषि व्यवस्था लगभग 90 प्रतिशत कृषि भूमि में होती है। यहाँ की कुल खाद्यान्न आवश्यकता की लगभग आधी ही पूरी हो पाती है। इसके चलते भूख, कुपोषण, बीमारी एवं गरीबी की समस्या यहाँ की नियति बनी हुई, जिसका शिकार अधिकतर महिलाएँ ही होती है। इन विपदाओं से त्राण पाने के लिए जनजातीय पुरूषों के साथ-साथ महिलाओं को भी रोजी-रोटी के जुगाड़ के लिए अन्य जगहों पर पलायन करना पड़ जाता है। जिन परिवारों में सिर्फ पुरूष पलायन करते हैं, उन परिवारों में कृषि व्यवस्था का सम्पूर्ण दायित्व महिलाओं पर ही आ जाता है तथा महिलाओं का पलायन अन्य बड़ी-बड़ी समस्याओं को पैदा करता है। कुल मिलाकर कहा जाए तो महिलाएँ विकास के दौर में पुरूषों की तुलना में बहुत पीछे है। यह विडम्बना है कि कृषि में उनकी अहम् भूमिका के बावजूद महिलाओं की स्थिति सोचनीय है। इस परिप्रेक्ष्य में हमें कृषक महिलाओं की स्थिति और भूमिका की नितांत आवश्यकता है।

उपर वर्णित समस्याओं को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित उद्देश्यों से झारखण्ड में जनजातीय कृषि महिलाओं से सम्बंधित अध्ययन किया गया है:-

- कृषि विकास में महिलाओं की सहभागिता की विवेचना करना
- कृषि विकास में महिलाओं की सहभागिता बढ़ाने के उपाय प्रस्तुत करना
- खेतिहर महिलाओं की समस्याओं की विवेचना एवं उनके सशक्तीकरण के उपाय प्रस्तुत करना।

अध्ययन पद्धति

यह अध्ययन झारखंड के राँची एवं गुमला जिले के आठ प्रखण्डों के 16 गाँवों मे किया गया। आवश्यकतानुसार साक्षात्कार विधि, अवलोकन विधि, पी.आर.ए. (सहभागी ग्रामीण आकलन) विधि द्वारा आँकड़े एकत्रित किए गए। स्वॉट (एस.डब्ल्यू.ओ.टी.) विधि के द्वारा किये गये विवेचना (शक्तियाँ, कमजोरिया, अवसर एवं खतरे) के निम्नलिखित परिणाम आये हैं।

शक्तियाँ

- पारिवारिक एवं सामाजिक मुद्दों के निर्णयों में महिलाओं की भागीदारी।
- गैर जनजातीय महिलाओं की तुलना में जनजातीय महिलाएँ ज्यादा स्वतंत्र, स्वावलम्बी, परिश्रमी एवं साहसी।
- शस्य फसलों एवं बागवानी फसलों के उत्पादन में महिलाओं की सहभागिता पुरूषों की तुलना में बहुत अधिक तथा पशुपालन में लगभग बराबर।
- खेती के कुल कार्यों में पुरूषों, महिलाओं एवं दोनों की एक साथ सहभागिता दर क्रमश: 33, 45 एवं 22 प्रतिशत।
- फसलोत्पादन एवं पशुपालन के कार्यों को अगर एक साथ मिलाकर देखा जाये तो पता चलता है कि लगभग 75 प्रतिशत कार्य महिलाओं के द्वारा सम्पादित होते हैं तथा सिर्फ 25 प्रतिशत ही पुरूषों के द्वारा।
- प्रति एकड़ धान की खेती में कुल 65 कार्य दिवसों में औसतन 15 कार्य दिवस पुरूषों का तथा 50 कार्य दिवस महिलाओं का योगदान होता है।
- पशुपालन में चारा प्रबंधन के क्षेत्र में महिलाओं का योगदान पुरूषों से लगभग चार गुना अधिक होता है।
- जनजातीय कृषि व्यवस्था में महिलाओं के आर्थिक योगदान का अध्ययन, उनके द्वारा सम्बंधित कार्यों में दिये गये समय के आधार पर करने से पता चलता है कि वयस्क पुरूषों की तुलना में वयस्क महिलाएँ दो गुना से अधिक समय इन कार्यों में व्यतीत करती हैं तथा लड़कियाँ लड़कों की तुलना में तीन गुना से अधिक समय व्यतीत करती हैं।

कमजोरियाँ

- आर्थिक निर्णयों में बहुत कम भागीदारी।
- जनजातीय कृषक महिलाएँ अपनी कृषि व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं तथा पारिवारिक आय में आधा से अधिक योगदान करती है। परन्तु उन्हें वास्तविक किसान का दर्जा नहीं दिया जाता है।
- विकास के सभी सूचकों जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वावलम्बन रोजगार आदि में पुरूषो की तुलना में काफी पीछे।

- ❖ उपयुक्त शिक्षा, संचार और संस्थागत कार्यविधियो द्वारा विकास प्रक्रिया में महिलाओं की सहभागिता कम।
- ❖ विकास की तीव्रता एवं तकनीकी लाभों में महिलाओं की उपेक्षा।
- ❖ सामाजिक एवं आर्थिक ढाचें के तहत महिलाओं के कार्यो का अवमूल्यन।
- ❖ सामाजिक पूर्वाग्रह।
- ❖ समाज में आय एवं सम्पति की असमानताएँ जैसे कृषक महिलाओं का भू-स्वामित्व से वंचित होना।
- ❖ बेरोजगारी एवं पलायन।
- ❖ प्रति व्यक्ति उत्पादकता एवं दक्षता में कमी।
- ❖ घरेलू एवं कृषि कार्यों का अधिकतम बोझ।
- ❖ उपर्युक्त कार्यों से उत्पन्न शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा एवं थकान।
- ❖ अधिकांश महिलाएं व्यावसायिक स्वास्थ्य एवं जोखिमों का शिकार।
- ❖ गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले 35 प्रतिशत परिवारों की मुखिया महिला।
- ❖ पौष्टिक आहार न मिलना।
- ❖ रोजगार के समुचित अवसर न मिलना।
- ❖ पुरूषो की तुलना में कम एवं भेदपूर्ण मजदूरी।
- ❖ जागरूक्ता एवं नेतृत्व की कमी।
- ❖ आत्मविश्वास मे कमी एवं निर्णय लेने की कम क्षमता।
- ❖ सम्पति एवं संसाधन के सम्बंध में कम जानकारी।
- ❖ वित्तीय संस्थाओं से पारस्परिक सहयोग की कमी।
- ❖ महिला अनुकूल तकनीकों का अभाव।
- ❖ आधुनिक कृषि तकनीकों के ज्ञान एवं कौशल का लाभ महिलाओं को नहीं मिल पाना।

अवसर

- ❖ महिला सशक्तिकरण की असीम सम्भावनाएँ।
- ❖ कृषक महिलाओं के शारीरिक थकान को कम करके कौशल बढ़ाना जिससे कार्य सरलता, दक्षता एवं गुणवत्तापूर्वक हो सके।
- ❖ महिलाओं को पुरूष के समान प्रशिक्षण के अवसर प्रदान किया जाना ताकि तकनीकी हस्तांतरण सही तरीके से हो।
- ❖ लिंग आधारित शोध और तकनीकी विकास को मजबूती प्रदान करना।
- ❖ महिला अनुकूल तकनीकों की पहचान/चयन, परीक्षण एवं परिशोधन।
- ❖ महिला अनुकूल तकनीकों का विकास।
- ❖ शस्यजन्य महिला स्वास्थ्य जोखिमों का पता लगाना तथा उन्हें कम करने के लिए उपाय करना।
- ❖ उत्पादन पश्च गतिविधियों से सम्बंधित तकनीकों का विकास

खतरें

- ❖ आधुनिक कृषि तकनीकों का धनात्मक एवं ऋणात्मक प्रभाव महिलाओं के माध्यम से सामाजिक संरचना पर पड़ सकता है। सामाजिक भूमिका के परिवहन एवं सामाजिक निषेधों के उलंघन की संभावना।
- ❖ बेरोजगारी एवं पलायन।

- ❖ सामाजिक मूल्यों एवं रीति-रिवाजों पर असर।
- ❖ यथोचित अवसर पैदा अगर नहीं किये गये तो कृषि उत्पाद पर उल्टा असर पड़ने की सम्भावना।

कृषि में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के उपाय

कृषि में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यक्ता है। यह निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसके विभिन्न चरण हैं। इसे हम नीचे दर्शाए गए मॉडल/रेखाचित्र से समझ सकते हैं:-

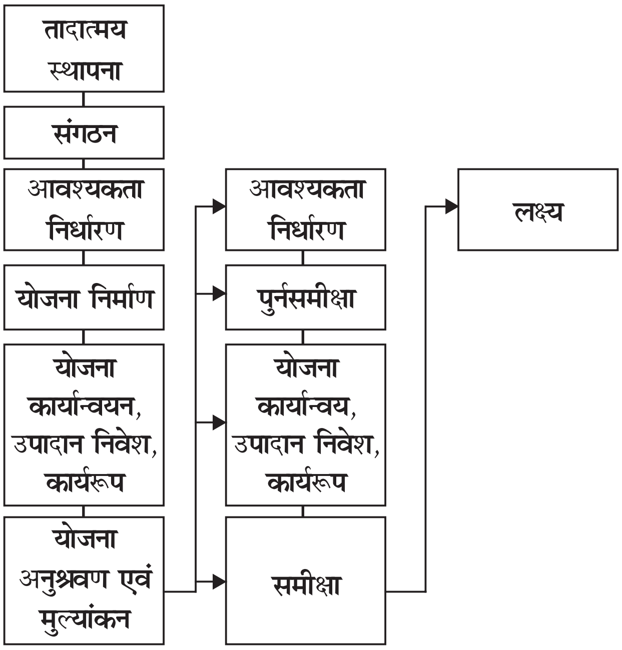

कृषि में महिलाओं की भागीदारी की प्रक्रिया

प्रथम चरण में महिलाओं से तादात्म्य एवं घनिष्ठता स्थापित करके उन्हें संगठित करना होगा। तत्पश्चात उन्हीं की भागीदारी से आवश्यकता का निर्धारण एवं परियोजना का निर्माण तथा योजना-संभावना का अध्ययन करना होगा। योजना शुरू करने के पहले योजना पूर्व तैयारी करनी होगी। योजना को कार्यरूप देने के लिए उपादान निवेश तथा प्रशिक्षण की सम्पूर्ण व्यवस्था करनी होगी। साथ ही योजना का अनुश्रवण एवं मूल्यांकन भी अति आवश्यक है। द्वितीय चरण में पुन: महिलाओं की सहभागिता से आवश्कताओं का निर्धारण करना होगा। कार्यान्वयन के पहले पुनर्समीक्षा अतिआवश्यक है। निर्धारित समीक्षा के आधार पर प्रशिक्षण, उपादान निवेश एवं कार्यक्रमों को कार्यरूप देना चाहिए। तत्पश्चात् पूरे काम की समीक्षा आवश्यक है। इस तरह निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया से हम लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

कृषक महिलाओं के सशक्तीकरण के उपाय

कृषक महिलाओं के सशक्तीकरण के उपायों को निम्नलिखित सामान्य एवं विशिष्ट उपागमों में विभक्त किया जा सकता है:-

सामान्य उपागम

- ❖ व्यापक पैमाने पर अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रमों का क्रियान्वयन।
- ❖ महिलाओं की सहभागिता पारिवारिक एवं सामुदायिक निर्णयों में बढ़ाने के लिये पुरूषों में शिक्षा का व्यापक प्रसार।
- ❖ कृषक महिलाओं द्वारा विभिन्न कृषि विकास कार्यक्रमों से लाभ उठाने के उद्देश्य से उन्हें असली किसान का दर्जा दिया जाना।
- ❖ महिलाओं द्वारा गठित हो रहे स्वयं सहायता समूहों के तकनीकी, आर्थिक एवं प्रबंधकीय क्षमता का विकास।

- कृषक महिलाओं के बीच विभिन्न उपादानों यथा बीज, उर्वरक, उपकरण आदि की व्यवस्था गाँवों में ही सुनिश्चित करने की व्यवस्था करना।
- जनजातीय कृषक महिलाओं के लिए सांस्थानिक ऋण, बाजार, परिवहन, संचार, आदि सुविधाओं की समुचित व्यवस्था।
- कृषक महिलाओं को भू-स्वामित्व का अधिकार प्रदान करना।
- पंचायती राज व्यवस्था में पुरूष एवं स्त्री दोनों के लिये बराबरी का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना।
- सरकार के विभिन्न विकास कार्यक्रमों में कृषक महिलाओं की सहभागिता बढ़ाने के लिए विशेष प्रावधान करना।
- कृषि कार्य जिन महीनों में कम होते हैं, उन महिनों में कृषक महिलाओं के लिए अन्य उद्यमों के सहारे रोजगार के तथा आमदनी के अतिरिक्त अवसर पैदा करने का अवसर प्रदान करना।
- कृषि विकास में लगे कार्यकर्त्ताओं, अधिकारियों आदि को कृषि के अतिरिक्त महिलाओं को कानूनी जानकारी तथा विकास के अन्य कार्यक्रमों की जानकारी प्रदान करना।

विशिष्ट उपागम

- जनजातीय कृषक महिलाओं के लिए आवश्यकता के अनुरूप उनके गाँवों/घरों/खेतों पर ही प्रशिक्षण कार्यक्रमों के आयोजन।
- उपयुक्त कृषि तकनीकों के विकास एवं प्रसार हेतु कृषक महिला सहभागी शोध एवं प्रसार कार्यक्रमों का क्रियान्वयन।
- सम्पूर्ण कृषि प्रणाली पर आधारित कृषि शोध एवं प्रसार कार्यक्रमों को अपनाना जिसमें कृषक महिलाओं के परिप्रेक्ष्य को लैंगिक मुद्दों के आधार को निरूपित किया जा सके।
- झारखण्ड में जनजातियों की बहुलता के मद्देनजर जनजातीय कृषक महिलाओं के लिए एक क्षेत्रीय अध्ययन, शोध एवं प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना।
- कृषि पदाधिकारियों/कार्यकर्त्ताओं के चयन में कृषक महिलाओं के लाभ हेतु कम से कम 50 प्रतिशत स्थान सुयोग्य महिला उम्मीदवारों के लिए सुनिश्चित करना।
- जनजातीय कृषक महिलाओं के पारम्परिक / देशज ज्ञान के संग्रहण तथा उसे और परिष्कृत कर प्रभावी बनाने के कार्यक्रमों पर बल।
- कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि विज्ञान केन्द्रों, क्षेत्रीय अनुसंधान संस्थानों तथा गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा कृषि विकास के कार्यक्रमों में जनजातीय महिलाओं की सहभागिता को सुनिश्चित करने के लिए ठोस पहल।

निष्कर्ष

विकास का संतुलित प्रयास वही हो सकता है जहाँ महिलाओं की क्षमता को पहचाना जाए तथा विकास की मुख्यधारा में उनकी सहभागिता सुनिश्चत् की जाए। इसके लिए जरूरी है उनके प्रति सामाजिक दृष्टिकोण एवं सामाजिक दायित्वों के बोध में परिवर्त्तन किया जाय। केन्द्रीय नीति-निर्माण स्तर पर महिलाओं के विकास के प्रति पर्याप्त प्रयत्न किए जाएँ तथा उन्हें इमानदारी पूर्वक लागू किए जाएँ। विकास कार्यक्रमों में महिलाओं की अधिक भागीदारी को प्रोत्साहित करने के सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार द्वारा नीति निर्देशों के अनुसार राज्य-स्तर पर सरकारी, गैर सरकारी संस्थाओं एवं स्वंय सहायता समूहों के सहयोग से योजना कार्यान्वयन, अनुश्रवण एवं सामाजिक मूल्यांकन की ठोस व्यवस्था हो। आवश्यकता पर आधारित नियोजन और कार्यक्रमों के लिए क्षेत्र योजना दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। जिसमे तकनीकी प्रसार, प्रशिक्षण एवं सूचना समर्थन की भरपूर व्यवस्था हो। तभी हम विकास की मुख्यधारा में महिलाओं की सहभागिता सुनिश्चत कर पाऐंगे।

▲▲▲

वर्षा आधारित खेती की उन्नत तकनीक

डॉ. अब्दुल राफे
सस्य विभाग, कृषि संकाय, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

झारखण्ड राज्य की स्थापना 15 नवम्बर 2000 में हुई। यह 22 जिलों में 79.70 लाख हेक्टेयर भूमि में फैला हुआ है। इस राज्य में सिंचाई की सुविधा खरीफ में 12 प्रतिशत, रबी में 8 प्रतिशत और गरमी में 1 प्रतिशत है। इस राज्य में सिंचाई की सुविधा केवल 20 प्रतिशत तक ही बढ़ाई जा सकती है। इससे अधिक होने की संभावना बहुत कम है, चूंकि यहाँ सालों भर बहने वाली नदियों की कमी है और जमीन के नीचे पहाड़ है। इस क्षेत्र में वर्षा तो करीब-करीब 1400-1550 मि.मी. तक होती है मगर इसकी अवधि केवल साढे तीन या चार माह का होता है (15 जून से अक्तूबर के दूसरे सप्ताह तक)। वर्षा की तीव्रता अधिक होने से भू-क्षरण की समस्या बराबर बनी रहती है। इसके विपरित वर्षा ऋतु खत्म होने पर नवम्बर और दिसम्बर में सुखाड़ रहता है यानी वर्षा नहीं होती है। जिससे वर्षा पर आधारित रबी फसलों को सुखाड़ का सामना करना पड़ता है।

झारखण्ड की जमीन की उपयोगिता :

क्र.सं.	वर्गीकरण	क्षेत्रफल (लाख हेक्टर)
1.	भौगोलिक क्षेत्रफल	7972.30
2.	कुल फसलों का क्षेत्रफल	20.39
3.	जिसमें खेती होती है	18.05
4.	जंगल	23.32
5.	ऊपर जमीन	5.66
6.	नहीं खेती योग्य भूमि	7.24
7.	खेती वाली ऊसर जमीन	3.14
8.	चारागाह	0.96
9.	अन्य पेड़ पौधे	0.88

इस तालिका से पता चलता है कि झारखंड की 27 प्रतिशत भूमि में जंगल अवस्थित है और 30-32 प्रतिशत में खेती होती है। यह पूरा राज्य पठारी है और इसकी ऊँचाई समुद्र तट से 1400-1200 मीटर है। यहाँ के अधिकतर किसान छोटे और सीमांत है।

अंगीकृत की जाने वाली उन्नत तकनीक :

शुष्क भूमि अनुसंधान का कार्य इस क्षेत्र में 1971 से भारतीय कृषि अनुसंधान, नई दिल्ली की मदद से आरंभ हुआ और अभी भी इसपर कार्य चल रहा है। शुष्क भूमि के शोध कार्य की अनुशंसाएं इस राज्य के लिए बहुत लाभदायक है और किसान इसे अपना रहे हैं। चूंकि 80-90 प्रतिशत क्षेत्र शुष्क भूमि पर ही आधारित है, और भविष्य में भी रहेगा, इसलिए अधिक सिंचाई की सम्भावना नहीं है। झारखण्ड राज्य की भूमि के बनावट के आधार पर तीन प्रकार में बाँटा गया है, 1. ऊपरी जमीन (टांड़), 2. मध्यम जमान (बीच वाला) और 3. नीचे वाली जमीन जिसे दौन कहते हैं। तीनों जमीनों की बनावट एक दूसरे से भिन्न है और जिनके वर्षा पर आधारित खेती के सिद्धान्त इस प्रकार हैं -

(क) मिट्टी तथा जल संरक्षण के उपाय किए जाए: इसके लिए छोटे-छोटे तालाब बनाकर वर्षा के पानी को जमा किया जा सकता है और सुखाड़ के दिनों में इसे सिंचाई के काम में लाया जा सकता है। इससे मिट्टी का क्षरण रुकता है और भूमि की उर्वरता तथा जल-धारण की क्षमता बढ़ती है।

(ख) ऊपरी जमीन की आम्लियता दूर करना: मिट्टी की उत्पादकता में वृद्धि लाने के लिए आम्लियता दूर करना होगा। खासकर दलहनी फसलों की बोआई के पहले खेतों में चूना का प्रयोग और जीवाणु खाद से बीजों को उपचारित करना बहुत लाभदायक है।

(ग) फसलों एवं किस्मों का चुनाव: फसलों तथा किस्मों का चुनाव बहुत महत्त्व रखता है, जैसे ऊँची टांड़ जमीन में धान की अपेक्षा, ज्वार, मडुआ, मूंगफली, मकई, सोयाबीन आदि की फसलें लें। कुछ निचली तथा भारी टाँड़ जमीन जिसकी जल-धारण क्षमता थोड़ी अधिक है, उन्नत गोरा, बी. आर. 23-19 या और कोई दूसरी किस्म जो 90 दिनों में तैयार होती हो को लेना चाहिए, इससे सुखाड़ पड़ने पर भी पैदावार में कोई कमी नहीं होगी।

अधिक जल-धारण कर सकने वाली जमीनों में खरीफ के बाद रबी में आगात बोआई करके तीसी, कुसुम, चना, जौ, मसूर आदि फसल भी ली जा सकती है। उसी प्रकार अधिक उपज देने वाली तथा कम दिनों में तैयार होनी किस्मों का चुनाव करना चाहिए। जल्दी पकने वाले प्रभेदों को लगाने से मिट्टी में नमी रहते हुए रबी फसल लगाना अधिक लाभप्रद होगा।

(घ) फसलों की आगात बोआई: यह तकनीक असंचित खेती के लिए बहुत महत्त्व रखता है। वर्षा की शुरुआत देर से होने पर धान और मूंगफली की सुखी बोआई भी की जा सकती है। इस प्राकर रबी की खेती में भी कोशिश यह रहे कि अक्तूबर के अंत तक मिट्टी की नमी के अनुसार बोआई कर लें। सबसे पहले चना और तोरी और इसके बाद तीसी और कुसुम तथा आखिर में जौ मसूर की बोआई करनी चाहिए।

(ङ) पौधों की पर्याप्त संख्या: शुष्क भूमि में पौधों की पर्याप्त संख्या बहुत आवश्यक है। इसके बिना उपज में कमी और अधिक होने का खतरा लगा रहता है। खरीफ में छिछली तथा रबी में गहरी बोआई करनी चाहिए।

(च) अनुसंशित उर्वरक का प्रयोग: असंचित खेती में मिट्टी में उर्वक का प्रयोग बहुत महत्व रखता है। मिट्टी तथा फसल के अनुसार उर्वरक का व्यवहार होना चाहिए। उर्वरकों को पंक्तियों में और गहराई पर फसल बोने के समय ही डालें।

(छ) खर-पतवार नियंत्रण : खेतों को खर-पतवार से हमेशा मुक्त रखें क्योंकि फसलों को उपलब्ध होने वाली जल एवं पोषक तत्त्वों को खर-पतवार ले लेते हैं और फसलों को उनकी उपलब्धी कम होती है, जिससे पैदावार कम हो जाता है।

(ज) पंक्तियों में बोआई करना : उन्नत खेती के लिए पंक्तियों में बोआई करना आवश्यक है। खरीफ मौसम में इस क्षेत्र में खेतों में बहुत खर-पतवार होता है। जिनको खुरपी द्वारा निकाला जाता है। पंक्तियों में लगाने पर पंक्तियों को कोड़ दें। उससे करीब 60-70 प्रतिशत खर-पतवार का नियंत्रण हो जाता है।

भूमि के बनावट के अनुसार अंगीकृत उन्नत तकनीक

ऊपरी जमीन : टाँड़ जमीन को हम दो प्रकार में बाँट सकते हैं (1) मिट्टी का गहराई 20-50 सेमी. तथा (2) मिट्टी की गहराई एक मीटर या अधिक। जहाँ मिट्टी की गहराई कम है, तो वहां -

क) जंगल के पौधे, सागवान, शीशम, सखुआ तथा गमहार को लगाना चाहिए जो कमान बनाने तथा दूसरे कामों में आता है।

ख) इस जमीन का प्रयोग फलदार वृक्ष लगाने के काम भी आ सकती है। जैसे आम, शरीफा, ऑवला, लीची, पपीता तथा अमरूद इत्यादि।

ग) इस प्रकार के जमीनों में उन्नत किस्म के घास इत्यादि लगाना उचित होगा। इससे भू-क्षरण की समस्य कम होगी तथा जानवरों को चारा भी मिलेगा।

ऊपरी जमीन जहाँ गहराई 80 सेमी. से अधिक हो

इस प्रकार की जमीन में 90-95 दिनों की फसलों को लगाना चाहिए, जैसे - मकई, ज्वार, दलहनी, मूंगफली, धान, मडुआ इत्यादि को पूर्ण सस्य विधि से लगायें। ऐसी जमीन में जैविक खाद, नेत्रजन, स्फुर, तथा सूक्ष्म पोषक तत्त्व की कमी है।

अन्तराल खेती : ऊपरी जमीन में अंतराल खेती की अनुशंसा की गई है। जिससे किसानों को फसल की अच्छी उपज मिलती है और आमदनी अधिक होती है। कभी-कभी सुखाड़ की हालत में एक फसल नष्ट हो जाती है तो दूसरी फसल हो जाती है। ऊपरी जमीन में मुख्य अन्तराल खेती जो अनुशंसा की गई तथा किसानों द्वारा अपनाया जा रहा है, वह इस प्रकार हैं -

अरहर + मकई	(1:1 पंक्ति)	अरहर + धान	(1:2 पंक्ति)
अरहर + मूंगफली	(1:4 पंक्ति)	अरहर + उरद/मूंग	(1:2 पंक्ति)
अरहर + सोयाबीन	(1:2 पंक्ति)		

अरहर + मूंगफली में, मूंगफली की पंक्तियों की दूरी 90-120 से.मी. तथा बाकी सभी अंतराल खेती में अरहर से अरहर के पंक्तियों की दूरी 75 सेमी. रखना चाहिए। ऊपरी जमीन में दिये फसल में बदलाव नीचे तालिका के अनुसार करना चाहिए।

फसल बदलाव का सस्य पैकेज

फसल	किस्म	दूरी (से.मी.)	बीज दर	खाद की मात्रा एन.पी.के. (कि./हे.)	बीज उपचार
धान	ब्राउन गोरा 23-19 बिरसा धान - 101, बंदना	20 x पंक्ति	100	40:30:20	कैप्टन/थीरम के.पी 3 कि.ग्रा.
मक्का	शंकर, गंगा सफेद-2 स्वान-1, बिरसा मक्का-1	60 x 20	18	100:60:40	,,
मूंगफली	बिरसा बोल्ड, बी.जी. - 2 ए.के. 12-24	30 x 10	125	20:40:30	सात दिन पहले बीज को जीवाणु खाद से उपचार एवं उसके बाद थीरम/कैप्टन 3 ग्राम/के.जी.
अरहर	बी.आर. 65 उपासा 120, आइ.सी.पी.एल 15 एवं बिरसा राहड़	60 x 25	18	20:40:30	,,
उरद	टी-9, पी.यू. 30	30 x 15	20	20:40:20	,,
मूंग	सुनैना, के-851	30 x 10	25	20:40:20	,,
तिल	कांके उजाला	20 x 10	5	30:20:20	थीरम/कैप्टन 2.3 ग्रा./किलो
मडुआ	ए. 404, बिरसा मडुआ	25 x पंक्ति	8	40:30:20	,,
रोपाई	ए. 404, बिरसा मडुआ	15-10 सेमी.	6	40:30:20	,,

बीच वाली जमीन : इस जमीन की जल धारण की क्षमता अधिक रहती है और ऐसे खेतों में जुलाई से जल का जमाव शुरु हो जाता है। इसमें मध्यम अवधि का धान 120-130 दिनों में तैयार होने वाला (आई.आर. 36 एवं 64, बिरसा 202) की रोपाई या बोआई करना चाहिए। धान को अक्तूबर में तुरन्त काट कर इसमें चना/मसूर/तोरी/तीसी तथा जौ की बोआई करें।

नीचे वाली जमीन : इस प्रकार की जमीन में पानी का जमाव जुलाई के आखिरी सप्ताह में लग जाता है। इसलिए ऐसे खेतों में लम्बी अवधि की धान लगानी चाहिए और धान काटकर टमाटर या गरमा सब्जी लगानी चाहिए।

उन्नत तकनीक को अंगीकृत करने से लाभ : उन्नत तकनीक अपनाने से किसानों के खतों में फसलों की उपज दोगुनी से तीगुनी बढ़ सकती है और इससे किसानों की आय बढ़ाने में मदद मिलती है।

अंगीकरण में समस्याएँ :

(क) ऊपरी जमीन आम्लीय है। (ख) यहाँ की ऊपरी जमीन में भू-क्षरण के कारण उपजाऊ ऊपरी परत बह जाती है। (ग) जमीन में कम जलधारक शक्ति। (घ) यहाँ वर्षा का वितरण बराबर नहीं है और कभी-कभी समय पर नहीं होती। (ङ) यहाँ परम्परागत खेती है। लोगों को फसल बदलाव की तकनीक नहीं मालूम है। (च) किसानों की हालत ठीक नहीं है। छोटे और सीमांत किसानों को ऋण दिलाने की सुविधा कराना चाहिए। (छ) अच्छे बीज तथा खाद्य का अभाव है और सरकार द्वारा समय पर बीज तथा खाद का प्रबंध करना चाहिए। (ज) किसानों के खेत में अच्छे तकनीक का प्रदर्शन करना चाहिए।

लाभ-मूल्य विश्लेषण : राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी योजना और शुष्क भूमि कृषि अनुसंधान के अन्तर्गत किसान के खेतों पर 3 वर्षों के अनुसंधान के बाद निम्नलिखित परिणाम ऊपरी जमीन के फसल प्रणाली के अनुकुल पाया गया है। जो निम्न है :

फसल	कुल लागत रु./ हे.	कुल लाभ रु./ हे.	लाभ लागत अनुपात
धान (बिरसा गोड़ा)	5,910	3,805	0.64
मक्का (कंचन)	10,240	19,510	1.90
मूंगफली (ए.के. 12-24)	8,840	15,960	1.80
धान+अरहर (3:1)	10,060	9,515	0.94
अरहर+मूंगफली (1:2)	12,060	18,205	1.50

प्रमुख अनुशंसाएँ :

क) फसल के उपज में बढ़ोतरी तथा स्थिरता लाना।

ख) खेती की सघनता बढ़ाना।

ग) प्राकृतिक संसाधनों का विकास तथा उनका समुचित उपयोग और पैदावार बढ़ाना।

घ) जमीन के अनुरूप पौधों, फसलों तथा किस्मों का चुनाव होना चाहिए।

ङ) वर्षा के अनुरूप फसल पद्धति तथा किस्मों का चुनाव करना चाहिए।

च) उचित प्रभेदों का चुनाव।

छ) फसलों की आगात बोआई तथा पौधों की पर्याप्त संख्या तथा ऊपरी जमीन के फसल का बदलाव।

ज) खेती योग्य जमीन में नमी संरक्षण के उपाय करना बहुत आवश्यक है।

झ) समय से खर-पतवार का नियंत्रण।

ञ) ऊपरी जमीन में अंतराल खेती और मध्यम जमीन/नीचे वाली जमीन में दोहरी फसल पद्धति।

ट) फसलों में खासकर खरीफ की फसलों में जैविक खाद तथा उर्वरक का प्रयोग करें। जिससे उपज में काफी वृद्धि होती है। खरीफ में नमी रहती है। इसलिए पौधे उर्वरक का प्रयोग अधिक करते हैं।

▲▲▲

अधिक उत्पादन हेतु उन्नतशील फसल प्रभेद

डॉ. जेड. ए. हैदर

पादप प्रजनन एवं आनुवांशिकी विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

झारखण्ड राज्य की कृषि योग्य भूमि मुख्यत: तीन वर्गों में विभाजित है। इनमें मुख्यत: टाँड़, मध्यम जमीन तथा नीची जमीन है। टाँड़ जमीन में किसान मुख्यत: वर्षा पर आधारित कृषि कार्य करते हैं और अधिकतर यहाँ खरीफ में धान, रागी, मक्का, उड़द, मूंग, अरहर, कुल्थी, मूंगफली, सरगुजा इत्यादि की खेती का जाती है। जबकि रबी में गेंहूँ, चना, सरसों, तीसी, मसूर इत्यादि का उत्पादन किया जाता है। यहाँ की भूमि, कुल वर्षा और जल छादन की स्थिति को ध्यान में रखते हुए बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक बराबर विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेद विकसित करते आ रहे हैं। जो झारखण्ड में खाद्यान्न उत्पादन के आत्मनिर्भरता की ओर एक कड़ी सिद्ध होगी। आइये हम कुछ प्रभेदों पर चर्चा करें।

खरीफ

झारखण्ड राज्य में लगने वाली खरीफ की मुख्य फसल - धान, रागी, मक्का, उड़द, मूंग, अरहर तथा कुल्थी है।

धान : धान, झारखण्ड राज्य की मुख्य फसल है। झारखण्ड के कुल 77 लाख हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि में से 18.2 लाख हेक्टेयर में धान की खेती जाती है। इसमें से टाँड़ जमीन 7.29 लाख हेक्टेयर, मध्यम जमीन (दोन-3 और दोन-2) 6.29 लाख हेक्टेयर और नीची जमीन (दोन-1) 4.81 लाख हेक्टेयर है। टाँड़ जमीन में जो कुल धान के क्षेत्रफल का लगभग 39 प्रतिशत है इसमें इस अवधि वाली प्रजातियों की खेती की जाती है। इसलिए हमें चाहिए कि काफी सोच-समझकर धान के उन्नतशील प्रभेद का चुनाव करें ताकि हमें अधिक से अधिक उत्पादन प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो सके।

ऊँची जमीन (टाँड़) : ऊँची जमीन में धान के वैसे प्रभेद का चुनाव करना चाहिए जो 80-95 दिन में पक कर तैयार हो जाए। टाँड़ में सिंचाई की सुविधा नहीं होती है और ज्यादातर वर्षा आधारित खेती ही की जाती है।

मध्यम जमीन (दोन-3 एवं दोन-2): मध्यम जमीन के खेतों में पानी कुछ दिन तक रहता है। यहाँ पर आवश्यकतानुसार सिंचाई की भी व्यवस्था रहती है, इसलिए इस जमीन में वैसे प्रभेद लगाना चाहिए जो लगभग 120-135 दिन में पक कर तैयार हो जाए।

नीचे जमीन (दोन-2) : नीची जमीन में पानी की कोई समस्या नहीं होती है। इसलिए इसमें वैसे प्रभेद का चुनाव करना चाहिए जो लगभग 140-150 दिन में पक कर तैयार हो जाए। इसमें मुख्य प्रभेद इस प्रकार हैं -

किस्म	तैयार होने की अवधि (दिन)	उपज क्षमता (कि./हे.)
राजश्री	140-150	50-55
एम.टी.यू - 7029	150-155	60-65
बी.पी.टी. - 5204	145-150	55-60
आई.ई.टी. - 5656	140-145	45-50
तुलसी	145-150	30-35
पूसा - 44	130-140	55-60

रागी (मड़ुँआ) :

धान के बाद राज्य में अधिक लगाई जाने वाली दूसरी फसल 'रागी' है जिसे लोग 'मड़ुँआ' के नाम से भी पुकारते हैं। इसकी खेती टाँड़ जमीन पर की जाती है। सूखा पड़ने पर भी रागी कुछ-न-कुछ उपज दे जाती है। जबकि टाँड़ जमीन पर लगाई जाने वाली दूसरी फसल बिलकुल फेल हो जाती है। इसलिए रागी को ''फेमिन कराप'' भी कहा जाता है। कुछ वर्षों से खरीफ के मौसम में बराबर सुखाड़ की स्थिति के कारण किसान भाईयों ने टाँड़ जमीन पर गोड़ा धान की जगह मड़ुँआ की खेती शुरु कर दी है। इस क्षेत्र के लिए रागी के उपयुक्त प्रभेद निम्न हैं :

(1) ए-404 : 115-120 दिनों में तैयार होती है, इसकी औसत उपज 30 कि./हे. है।

(2) बी.एम.-1 : करीब 80 दिनों में तैयार होती है और इसकी औसत उपज 16 कि./हे. है। अगर मड़ुँआ को काट कर कोई दूसरी फसल लगानी हो तभी इस प्रभेद को लगाना उपयोगी है।

(3) बी.एम-2 : 100-105 दिनों में तैयार होती है और इसकी औसत उपज 24 कि./हे. है।

गोन्दली : गोन्दली खरीफ में सबसे पहले कटने वाली फसल है। कभी इसकी खेती काफी होती थी पर इधर 10-15 वर्षों में इसकी खेती में काफी कमी आई है और अब जहाँ तहाँ पहाड़ों पर इसकी फसल दिखती है। जो किसान भाई गोन्दली की खेती करते हैं या करना चाहते हैं वह 'बिरसा गोन्दली-1' प्रभेद लगाकर अच्छी उपज ले सकते हैं। यह प्रभेद 55-60 दिनों में तैयार हो जाती है और इसकी औसत उपज 6 कि./हे. है।

मक्का : मक्का भी झारखण्ड राज्य में अधिक क्षेत्रफल में लगाई जाती है। मक्का के उन्नतशील प्रभेद निम्नलिखित हैं -

1. सुआन कम्पोजिट-1 : यह प्रभेद सिंचित अवस्था में खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी उपज क्षमता 45-50 कि./हे. (खरीफ में) तथा 55-60 कि./हे. (रबी में) है। यह प्रभेद लगभग 100 दिन में पक कर तैयार हो जाती है।
2. बिरसा मकई-1 : यह प्रभेद 80-85 दिन में पक कर तैयार हो जाता है तथा इसकी उपज क्षमता 45-50 कि./हे. (खरीफ में) तथा 50-55 कि./हे. (रबी में) है।
3. बिरसा विकास मक्का-2 : यह लगभग 75-80 दिन में पक कर तैयार हो जाता है तथा इसकी उपज क्षमता 40-50 कि./हे. है। यह रबी के लिए बहुत ही उपयुक्त प्रभेद है।

उरद : उरद एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है जो खरीफ में लगाया जाता है। इसके प्रमुख उन्नतशील प्रभेद टी-9, पन्त यू.-19 तथा बिरसा उरद-1 है। यह प्रभेद 80 दिनों में पक कर तैयार हो जाता है तथा इन प्रभेदों की औसत उपज क्षमता 10-12 कि./हे. है।

मूंग : मूंग भी एक खरीफ दलहनी फसल है। इसके मुख्य प्रभेद सूनयना, पूसा विशाल, पी.एस.-16 पन्त मूंग-2 तथा के. 815 है। यह प्रभेद लगाने के 60-65 दिन पश्चात् पक कर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसत उपज क्षमता 10-12 कि./हे. है।

कुल्थी : कुल्थी की उन्नतशील प्रभेद बिरसा कुल्थी-1, मधु तथा बी.आर.-10 है। कुल्थी के ये प्रभेद 100-105 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसज उपज क्षमता 10-12 कि./हे. है।

अरहर : अरहर भी एक महत्त्वपूर्ण खरीफ दलहनी फसल है। बिरसा अरहर-1, बी.आर.-65 इसके उन्नतशील प्रभेद है। जो लगभग 180-185 दिन में पक कर तैयार हो जाता है। इसकी औसत उपज क्षमता 20 कि./हे. है।

मूंगफली : मूंगफली भी झारखण्ड राज्य की एक प्रमुख तेलहनी फसल है। मूंगफली को तैयार होने के अवधि के अनुसार इसे मुख्यत: तीन भागों में बाँटा गया है -

1. आगात : आगात किस्म वाली उन्नतशील प्रभेद 100-105 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। आगात किस्म की प्रमुख प्रभेद ए.के. 12-24, जे.एल.-24 (फुले प्रगति), जी.जी.-2 तथा टी.जी.-22 है। ए.के. 12-25 की उपज क्षमता 15-17 कि./हे. हैं। फूलें प्रगति की उपज क्षमता 12-24 कि./हे. तथा जी.जी-2 और टी.जी.-22 की उपज क्षमता 22-24 कि./हे. है।

2. **मध्य आगात : मध्य आगात वाली किस्म 115-120 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इनमें निम्नलिखित उन्नत प्रभेद हैं –**

किस्म	उपज क्षमता (कि./ हे.)
बिरसा मूंगफली-1	22-24
बिरसा मूंगफली-2	25-30
बिरसा मूंगफली-3	25-30
बिरसा बोल्ड	25-30

इनमें बिरसा बोल्ड-1 निर्यात के लिए सर्वोतम प्रभेद है।

इस तरह से हम पाते हैं कि अगर विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेदों का चुनाव करें तो हमें प्रति हेक्टेयर अधिक से अधिक पैदावार मिलेगी। जिससे झारखण्ड राज्य भी खाद्यान्न उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भर हो सकेगा।

▲▲▲

अधिक उत्पादन हेतु उन्नतशील फसल प्रभेद

डॉ. डी. एन. सिंह एवं डॉ. परवेज आलम
पादप प्रजनन एवं आनुवांशिकी विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

झारखण्ड राज्य में अनुसूचित जनजातियाँ, अनुसूचित जातियाँ और पिछड़े वर्ग की जनसंख्या कुल आबादी का 60 प्रतिशत है, जिनकी आर्थिक समृद्धि कृषि पर आधारित है। झारखण्ड राज्य में कुल कृषि योग्य भूमि 77 लाख हेक्टेयर है जो कि यहाँ पर रहने वाले कुल जनसंख्या को खाद्यान्न उपलब्ध कराने के लिए काफी नहीं है। अत: ऐसे प्रयासों की आवश्यकता है जिससे हम खाद्यान्न उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भर बन सकें। पठारी भूभाग, वर्षा आश्रित परम्परागत खेती कृषि को जीवन यापन साधन ही उपलब्ध करा सकती है, लेकिन आदिवासी कृषकों को उबारने के लिए यह अधिक नहीं है। झारखण्ड राज्य की कुल कृषि भूमि मुख्यत: तीन वर्गों में विभाजित है। इनमें मुख्यत: टाँड़, मध्यम जमीन तथा नीची जमीन है। टाँड़ जमीन में किसान मुख्यत: वर्षा पर आधारित कृषि कार्य करते हैं तथा इस जमीन की उपज क्षमता भी बहुत कम होती है। जहाँ पर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है वहाँ पर किसान मध्यम तथा नीची जमीन में खेती करते हैं तथा इसकी उपज क्षमता टाँड़ जमीन के मुकाबले अधिक होती है। झारखण्ड में फसल सघनता 110 प्रतिशत है, अर्थात यहाँ रबी में बहुत कम खेती का कार्य किया जाता है। ज्यादातर यहाँ खरीफ में धान, रागी, मक्का, उड़द, मूंग, अरहर, कुल्थी, मूंगफली, सरगुजा इत्यादि का उत्पादन किया जाता है, जबकि रबी में गेंहूँ, चना, सरसों, तीसी, मसूर इत्यादि का उत्पादन किया जाता है। इसलिए उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए हमें विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेदों का उपयोग करना होगा, ताकि सीमित संसाधनों में भी हम अधिक से अधिक उत्पादन प्रति हेक्टेयर प्राप्त कर सकें। बिरसा कृषि विश्वविद्यालय ने इस ओर कदम उठाते हुए विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेद विकसित किए हैं जिनको लगाने से न केवल गरीब किसानों की आर्थिक व्यवस्था सुदृढ़ होगी, बल्कि खाद्यान्न उत्पादन के मामले में भी हम आत्मनिर्भर हो सकेंगे। खरीफ तथा रबी में लगने वाले विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेदों के बारे में हम आगे विस्तृत रूप से चर्चा करेंगे।

खरीफ

खरीफ में यहाँ लगने वाले मुख्य फसल धान, रागी, मक्का, उड़द, मूंग, अरहर तथा कुल्थी है। अब बारी-बारी से प्रत्येक फसल के उन्नतशील प्रभेद की जानकारी लेंगे।

धान :

झारखण्ड राज्य की मुख्य फसल धान है। झारखण्ड के कुल 77 लाख हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि में से 18.2 लाख हेक्टेयर में धान की खेती की जाती है। इसमें से टाँड़ जमीन 7.29 लाख हेक्टेयर, मध्यम जमीन (दोन-3 और दोन-2) 6.29 लाख हेक्टेयर और नीची जमीन (दोन-1) 4.81 लाख हेक्टेयर है। टाँड़ जमीन में जो कुल धान के क्षेत्रफल का लगभग 39 प्रतिशत है इसमें कम अवधि वाली प्रजातियों की खेती की जाती है। इसलिए हमें चाहिए कि काफी सोच-समझकर धान के उन्नतशील प्रभेद का चुनाव करें ताकि हमें अधिक से अधिक उत्पादन प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो सके।

ऊँची जमीन (टाँड़) : ऊँची जमीन में धान के वैसे प्रभेद का चुनाव करना चाहिए जो 80-95 दिन में पक कर तैयार हो जाए। टाँड़ में सिंचाई की सुविधा नहीं होती है और ज्यादातर वर्षा आधारित खेती ही की जाती है। इनमें से कुछ उन्नतशील प्रभेद इस प्रकार हैं :

किस्म	तैयार होने की अवधि (दिन)	उपज क्षमता (कि./ हे.)
बिरसा धान 101	80–85	25–30
बिरसा गोड़ा 102	95–100	20–25
बिरसा धान 103	95–100	35–40
बिरसा धान 104	90–95	30–35
बिरसा धान 105	90–95	30–35
बिरसा धान 106	90–95	30–35
बिरसा धान 107	90–95	30–35
बिरसा धान 108	70–75	25–30
बिरसा विकास धान 109	85–90	30–35
बिरसा विकास धान 110	90–95	30–35
बिरसा धान।।।	85–90	25–30
बन्दना	90–95	30–35
कलिंगा –।।।	85–90	25–30
नरेन्द्र – 97	95–100	35–90

मध्यम जमीन (दोन–3 एवं दोन–2): मध्यम जमीन के खेतों में पानी कुछ दिन तक रहता है। यहाँ पर आवश्यकतानुसार सिंचाई की भी व्यवस्था रहती है, इसलिए इस जमीन में वैसे प्रभेद लगाना चाहिए जो लगभग 120–135 दिन में पक कर तैयार हो जाए। इनमें निम्नलिखित मुख्य प्रभेद हैं :

किस्म	तैयार होने की अवधि (दिन)	उपज क्षमता (कि./ हे.)
आई.आर – 36	120–125	40–45
बिरसा धान 201	115–120	30–35
राजेन्द्र धान 202	130–135	40–45
आई.आर. – 64	120–125	40–45
बिरसा धान 202	120–125	35–40
सीता	130–140	45–45
कनक	130–140	55–60
बी.आर. – 9	145–150	30–35
बी.आर. – 10	145–150	30–35
पूसा बासमती	120–125	35–40
बासमती	130–135	30–35
बिरसामति	130–135	35–40
पी.एस.बी. –71	130–135	65–70
के.एच.आर. – 2	125–130	50–60

नीचे जमीन (दोन-2) : नीची जमीन में पानी की कोई समस्या नहीं होती है। इसलिए इसमें वैसे प्रभेद का चुनाव करना चाहिए जो लगभग 140-150 दिन में पक कर तैयार हो जाए। इसमें प्रमुख प्रभेद इस प्रकार हैं :

किस्म	तैयार होने की अवधि (दिन)	उपज क्षमता (कि./हे.)
राजश्री	140-150	50-55
एम.टी.यू - 7029	150-155	60-65
बी.पी.टी. - 5204	145-150	55-60
आई.ई.टी. - 5656	140-145	45-50
तुलसी	145-150	30-35
पूसा - 44	130-140	55-60

मक्का : मक्का भी झारखण्ड राज्य में अधिक क्षेत्रफल में लगाई जाती है। मक्का के उन्नतशील प्रभेद निम्नलिखित हैं -

1. सुआन कम्पोजिट-1 : यह प्रभेद सिंचित अवस्था में खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी उपज क्षमता 45-50 कि./हे. (खरीफ में) तथा 55-60 कि./हे. (रबी में) है। यह प्रभेद लगभग 100 दिन में पक कर तैयार हो जाती है।
2. बिरसा मकई-1 : यह प्रभेद 80-85 दिन में पक कर तैयार हो जाता है तथा इसकी उपज क्षमता 45-50 कि./हे. (खरीफ में) तथा 50-55 कि./हे. (रबी में) है।
3. बिरसा विकास मक्का-2 : यह लगभग 75-80 दिन में पक कर तैयार हो जाता है तथा इसकी उपज क्षमता 40-50 कि./हे. है। यह रबी के लिए बहुत ही उपयुक्त प्रभेद है।

उरद : उरद एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है जो खरीफ में लगाया जाता है। इसके प्रमुख उन्नतशील प्रभेद टी-9, पन्त यू.-19 तथा बिरसा उरद-1 है। यह प्रभेद 80 दिनों में पक कर तैयार हो जाता है तथा इन प्रभेदों की औसत उपज क्षमता 10-12 कि./हे. है।

मूंग : मूंग भी एक खरीफ दलहनी फसल है। इसके मुख्य प्रभेद सूनयना, पूसा विशाल, पी.एस.-16 पन्त मूंग-2 तथा के. 815 है। यह प्रभेद लगाने के 60-65 दिन पश्चात् पक कर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसत उपज क्षमता 10-12 कि./हे. है।

कुल्थी : कुल्थी की उन्नतशील प्रभेद बिरसा कुल्थी-1, मधु तथा बी.आर.-10 है। कुल्थी के ये प्रभेद 100-105 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसज उपज क्षमता 10-12 कि./हे. है।

अरहर : अरहर भी एक महत्त्वपूर्ण खरीफ दलहनी फसल है। बिरसा अरहर-1, बी.आर.-65 इसके उन्नतशील प्रभेद है। जो लगभग 180-185 दिन में पक कर तैयार हो जाता है। इसकी औसत उपज क्षमता 20 कि./हे. है।

मूंगफली : मूंगफली भी झारखण्ड राज्य की एक प्रमुख तेलहनी फसल है। मूंगफली को तैयार होने के अवधि के अनुसार इसे मुख्यत: तीन भागों में बाँटा गया है -

1. आगात : आगात किस्म वाली उन्नतशील प्रभेद 100-105 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। आगात किस्म की प्रमुख प्रभेद ए.के. 12-24, जे.एल.-24 (फुले प्रगति), जी.जी.-2 तथा टी.जी.-22 है। ए.के. 12-25 की उपज क्षमता 15-17 कि./हे. हैं। फूलें प्रगति की उपज क्षमता 12-24 कि./हे. तथा जी.जी-2 और टी.जी.-22 की उपज क्षमता 22-24 कि./हे. है।
2. मध्य आगात : मध्य आगात वाली किस्म 115-120 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इनमें निम्नलिखित उन्नत प्रभेद हैं-

किस्म	उपज क्षमता (कि./हे.)
बिरसा मूंगफली-1	22-24
बिरसा मूंगफली-2	25-30
बिरसा मूंगफली-3	25-30
बिरसा बोल्ड	25-30

इनमें बिरसा बोल्ड-1 निर्यात के लिए सर्वोतम प्रभेद है।

रबी

झारखण्ड राज्य में रबी में लगने वाले प्रमुख फसल गेहूँ, चना, तोरी-राई, तीसी, मसूर इत्यादि है।

गेहूँ : गेहूँ की खेत रबी के मौसम में सिंचित तथा असिंचित दोनों अवस्था में की जाती है।

सिंचित अवस्था में समय पर बोआई :

समय पर बोआई के लिए सिंचित अवस्था में प्रमुख उन्नतशील प्रभेदों में एच.डी.-2733, एच.यू.डब्लू.-468, एच.डी.-2402, पी.वी.डब्लू.-343, के.-9107, के.-8804 तथा एन.डब्लू.-1012 प्रमुख हैं। इनकी औसत उपज क्षमता 35-40 क्विं./हे. है।

सिंचित अवस्था में विलम्ब से बोआई :

सिचिंत अवस्था में विलम्ब से बोआई के लिए उन्नतशील प्रभेदों में एच.डी.-2402, यू.डब्लू.-234, एच.पी.-1744, एम.डब्लू.-2045, गंगा तथा डब्लू-372 प्रमुख है। इनकी औसत उपज क्षमता 35-40 क्विं./हे. है।

असिंचित अवस्था में समय पर बोआई :

असिंचित अवस्था में समय पर बोआई के लिए उन्नतशील प्रभेदों में सी.-306, के.-8027, एच.डी.आर.-77, के.-8962 प्रमुख हैं। इन प्रभेद की औसत उपज क्षमता 20-25 क्विं./हे. है।

असिंचित अवस्था में विलम्ब से बोआई :

असिंचित अवस्था में विलम्ब से बोआई के लिए के.-8962 (इन्द्रा), जी.डब्लू.-173, डी.एल.-788-2 प्रभेद प्रमुख हैं एवं इनकी औसत उपज क्षमता 15-20 क्विं./हे. है।

चना : चना झारखण्ड राज्य की रबी की मुख्य दलहली फसल है। इसके प्रमुख उन्नत प्रभेद पन्त जी.-114, राधे, सी-235, बी.जी.-256, एवं एच.-208 प्रमुख है। एच.-208 प्रभेद असिंचित क्षेत्र एवं विलम्ब से बोआई के लिए उपयुक्त है। ये प्रभेद 135-145 दिनों में पककर तैयार हो जाते हैं तथा इनकी औसत उपज क्षमता 18-20 क्वि./हे. है।

तोरी-राई : तोरी-राई एक तेलहनी फसल है। इनके उन्नतशील प्रभेद निम्नलिखित हैं -

	तोरी	राई
किस्म	बी.आर.-23, टी.-9	शिवानी, वरुणा, पूसा बोल्ड, क्रांति
उपज क्षमता	4-5 क्विं./हे.	8-10 क्विं./हे.

तीसी : झारखण्ड राज्य में तीसी के खेती तेलहनी फसल के रूप में की जाती है। तीसी की प्रमुख श्वेता, शुभ्रा तथा टी-397 है। इन सब प्रभेदों की उपज क्षमता 7-8 क्विं./हे. है।

मसूर : मसूर एक प्रमुख दलहनी फसल है। मसूर के प्रमुख प्रभेदों में बी.आर.-25, पी.एल.-639, पी.एल.-406, डी.पी.एल.-62 हैं। यह सारे प्रभेद 120-130 दिनों में पककर तैयार हो जाते हैं।

इस तरह से हम पाते हैं कि अगर किसान भाई विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेदों का चुनाव फसलोत्पादन में करें तो उन्हें प्रति हेक्टेयर अधिक से अधिक पैदावार मिलेगी। जिससे झारखण्ड राज्य भी खाद्यान्न उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भर हो सकेगा।

▲▲▲

ROLE OF BIOTECHNOLOGY IN AGRICULTURE

Dr. Z. A. Haider
Biotechnology Centre, Birsa Agricultural University, Ranchi - 834 006

Since land is a limiting resource for agriculture, there is no way to produce more food and other agricultural commodities except from less per capita of land. Alternatively, development of crops suitable for growing in waste and marginal lands may constitute another way for increasing crop productivity but to a limited manner. As the cultivable land is continuously shrinking due to the urbanization and industrialization, there is no way to produce more food and other agricultural commodities except by increasing productivity per unit area of land and/or by developing crops suitable for cultivation in waste and marginal lands. Fortunately, we have entered in the new millennium with certain most advance methods, to combat the hunger.

With the advent of the modern technologies, we are approaching towards major revolutions that are going to influence agricultural technologies at the grass root level. The most important is ‘gene revolution’ at the door of the new millennium. The advent of modern techniques of genetic engineering and biotechnology is capable of providing critical insights into the understanding of the genetic basis of living organisms at the molecular level. Scientists are very optimistic that such and understanding can constitute the basis for developing newer environment friendly processes and products for improving agriculture and human health.

In the last decade, we have seen many dramatic advances in the field of biological sciences. Our understanding about the scientific basis of organisms at the biochemical and molecular level have increased enormously. The hidden truth of ‘genes’ are coming on the surface through the manipulation of DNA molecules the biological materials from which the’ genes’ of all the organisms are composed. Now, there are enough scientific information to believe that while the battle of the ‘green revolution’ was fought in the field, the new revolution, the ‘gene revolution’, which is certainly able to revolutionize crop production through genetic engineering and biotechnology will be fought in the laboratory.

Biotechnology has been global term since the last few decades. David Balltimore, Nobel laureate, defined biotechnology as ‘the application of scientific and engineering principles to the processing of materials by biological agents to provide good and services’. It is simply the application of science and technology to accelerate and improve the biological system to produce large scale products or even new variety of organism(s) to fulfill man’s ever increasing needs for a good living. Some times, the terms like gene cloning, transgenics, genetic engineering, recombinant DNA techniques etc. are used synonymously. However, biotechnology, actually is an interdisciplinary area of science, encompassing the sophistication of genetics, molecular biology, microbiology, biochemistry, biophysics, bioengineering and bioinformaties. The technological development for the analysis and manipulations of genes are directly applicable to all the organisms including microbes, plants and animals. This has produced many new powerful tools that can be used in agriculture and can help to promote agro-based biotech industries.

The prime technological developments that have been observed in the area of biotechnology since past few years include tissue culture, genomics, gene cloning, transformations, molecular breeding, diagnostics, vaccine technologies, bioinformatics etc.

The ‘spin off’ of biotechnology brought hopes on the agricultural front and crop productivity and quality improvements were the primary goals to be achieved. In the beginning of the seventies, techniques began to emerge for the transfer of desired DNA fragments-gene from one organism to

another. The eighties observed those techniques which caused industrialization of biotechnology based on engineered strains of microbes such as yeast and bacteria. At present, genetic engineering is flourishing within the realms of crop improvement.

Crop improvement programmes through genetic engineering emerged with three main possibilities; the first to acquire 'genes' conferring desirable traits from plants unrelated to the crop(s) in hand which cannot be crossed by sexual means. Introduction of appropriate genes conferring disease resistance from wherever, they may occur are among the most ambitious tasks. Secondly, removal of genes from plants, alteration of the same in desired manner and re-insertion into the plant. Through such controlled 'mutagenesis', alterations in many fundamental properties of the plants can be achieved e.g. some of the genes can be transformed that control protein quality in cereals. Alternatively, improvement in some crucial enzymes involved in the basic physiological processes e.g. photosynthesis and nitrogen fixation can be achieved which can improve the efficiency of the most important of all the processes that occur in plants. The third possibility is to prepare synthetic genes after knowing the amino acid sequence of a protein with an ultimate aim to produce novel properties, of a kind that have never ever been seen.

Plasmids, the stable genetic elements in the cytoplasm of cells serve as vectors for transferring DNA from once cell to another. Foreign genes e.g. 'nif' genes which govern the characteristics of biological nitrogen fixation have been transferred successfully into non-nitrogen fixing bacteria. The transfer of these genes into plants via plasmids of Agrobacterium tumefaciens causing crown galls of plants is being contemplated.

Carbon dioxide fixation is the most important reaction in photosynthesis catalyzed by Ribulose biphosphate carboxylase/oxygenase (RubisCo) enzyme. This bifunctional enzyme is present as a major soluble protein in chloroplasts of leaves and is responsible for fixing 10 tonnes of carbon dioxide annually from the air. Statistics suggest that approximately 20 lbs of RubisCo is required to feed each person on the earth. The high molecular weight enzyme contains subunit which are coded by eight or more genes. Unfortunately, RubisCo has a greater affinity to oxygen, therefore modification of cloned genes might yield enzyme having lesser affinity for oxygen which could lead to conserve more food and energy in the form of carbohydrates in the plants. Results obtained with barley in this regard are quite encouraging.

Not only productivity but the product quality is also a serious concern to public health and success at some level has been achieved in obtaining good quality crops through biotechnology. Selflife after harvest of many delicate agroproducts e.g. banana, tomato, apple, mushrooms and flowers have been improved by using 'antisense' gene. For polygalacturonase enzyme which regulate the early softening process, a softening-resistant tomato has been produced and marketed in USA by the trade name 'FlavrSavr'. Promising success in improving nutritional quality of vegetable proteins to contain more essential amino acids like lysine and methionine has been achieved transgenic plants able to function as 'bioreactors' or 'biochemical factories' can produce large variety of industrial chemicals, vaccines and antibiotics. Indian mustard oil is of low nutritionally quality because of its high content (approximately 50%) of erucic acid. However, biotechnologically improved canala-brand rape seed oil is being marketed in many countries including India.

With the help of gene cloning technology, it is now possible to improve the capability of the microorganisms and even higher plants with-stand against diseases and pests. It is believed that leaf surface bacteria play an important role in frost injury, These bacteria actually contain a protein coded by a single gene which help in ice nucleation. Mutants of these bacteria which lack such protein and also, tolerant to antiiotics when spread on leaf surface compete successfully with native bacteria and prevent frost injury.

Introduction of foreign genes into crops have provided many potential properties to plants among which development of disease resistance is the most desirable since long. The problems associated with gene insertion is partially solved by exploiting bacterial organism and Agrobacterium tumefaciens is proved to be an important tool. Some spectacular success has been achieved in developing insect-resistant transgenic cotton, soybean, tomato and rice plants by introducing soybean trypin inhibitor or Bacillus (Bt) toxin gene in these plants. Some vegetable and fruit crops such as tomato, potato, cucumber, papaya and bean have been made virus-resistant by inserting pathogenic virus coat protein genes in these plants, herbicide-resistant plants have been produced by putting the herbicide-resistant gene from bacteria into plants Bolly worm resistant engineered Bt-cotton developed by the multinational company Monsanto accounted for over 25% US cotton cultivation and Monsanto Bt potato is being cultivated on small scale. Field trails of this cotton variety are being conducted in various parts of India. Besides this, more than 200 transgenic crops are under field trails at advanced level in various parts of USA and Europe and some day they may hit agricultural market. *Agrobacterium tumefaciens,* a bacterium attacks on wounds of the plants and induces the cells to multiply and cause crown galls (tumors), especially of fruit plants of Rosaceae family. The genes controlling the pathogenecity is identified as Ti (tumor inducing) made is located in large plasmid. Part of this gene enters the plant cells and results in unchecked cell division causing cancerous growth or galls. Once the uncontrolled cell division starts in plants, bacterial tumor inducing DNA (T-DNA) regulate the synthesis of 'opines' called 'nopaline' and 'agrocinopine'. The disease causing bacterium is also controlled by another species of Agrobacterium radiobactor strain 84 which produces an antibiotic called 'Agrocin 84' that specifically kills A tumefaciens.

With the search of *Bacillus thuringiensis* (Bt) pathogen bacterium attacking several insect-pests, a new era of biocontrol products developed for pest control and many formulations such as 'Dipel', Thuricide, Agrito etc. are available in market. Scientists inserted genes coding Bacillus thuringiensis toxin that kills lepidopteran insects into Psedomonas fluorescence, a bacterium which inhibit corn roots, thereby enabling the coron to withstand cutworm attack. Recently, the insertion of Bt-toxin gene into the cells of the freshwater cyanobacterium, Synechococcus, which is preferably fed by mosquito larvae remain successful. This cynobacteruim, thereby, made capable of producing Bt-toxin which after ingestion by the larvae, get metabolized into the gut system, disrupt epithelial cell lining and kill the larvae. These developments may have a far-reaching potential in the field of mosquito control.

One of the potential alternatives to replace the chemical inputs in agriculture is to develop biofertilizers from nitrogen fixing, phosphate solubilizing and nutrient mobilizing native microorganisms. The use of various groups of symbiotic bacteria is well known. Rhizobium cultures are effectively used to cultivate food grains and fodder legumes, while use of blue green algae (BGA) in rice cultivation is being increasingly adopted. Besides, many species and strains of plant growth promoting rhizobacteria (PGPR) such as Pseudomonas, Bacillus etc. are being developed to improve the soil fertility and crop productivity through the mobilization of various nutrients and imparting disease resistance against pathogens. Genetically engineered strains of these bacteria may some day reach farmers field as efficient biofertilizers. Besides these, exploitation of the potentiality of vesicular arbuscular mycorhizae (VAM) fungi, found associated with roots of the plants is under study. These fungi transfer phosphate from the soil to root system. It is hoped that in future, putting 'nif' genes into hyphae of VAM fungi shall place crops in a position to obtain both nitrogen and phosphorus from the same source.

▲▲▲

झारखण्ड की मिट्टी में पोषक तत्वों की समस्या और समाधान

डॉ. ए.के. सरकार एवं डॉ. आर.पी. सिंह
मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची

खेती योग्य मिट्टी में पोषक तत्वों की समस्या :

झारखण्ड राज्य के कुल 80 लाख हेक्टेयर भूमि में 20 लाख हेक्टेयर भूमि खेती योग्य है। इन मिट्टीयों में फसल उत्पादन के लिए पोषक तत्वों का उपयोग किया जाता है। मिट्टी जाँच के आधार पर यह पाया गया है कि अनेक जगहों में पोषक तत्वों का समुचित प्रबंधन नहीं किया जा रहा है। कुछ पोषक तत्वों की कमी से फसलों के उपज में आशानुकूल वृद्धि नहीं हो पा रही है, इसे दूर करना आवश्यक है।

सर्वेक्षण के आधार पर पता चला है कि राँची, सिहभूम, पलामू तथा संथाल परगना क्षेत्र की मिट्टी में नेत्रजन तथा स्फुर के साथ-साथ पोटाश, गंधक, बोरन तथा मेलिब्डेनम की कमी है।

तालिका -1 : झारखण्ड राज्य की मिट्टी में पोषक तत्त्व की कमी

जिला	मिट्टी में कमी (प्रतिशत में)			
	पोटाश	सल्फर	बोरन	मेलिब्डेनम
राँची	30.2	74.0	36.0	84
सिंहभूम	48.5	42.8	36.0	58
पलामू	5.0	72.6	46.0	38
दुमका	29.0	19.3	......	.....
गुमला	.....	57.0	......	.....
लोहरदगा	.....	53.0	.....	.....

इसी तरह शोध के आधार पर राज्य के विभिन्न फसल-चक्रों में भी पोषक तत्त्व की कमी पाई गई हैं।

तालिका -2 : झारखण्ड राज्य के कुछ फसल-चक्रों में महत्वपूर्ण तत्वों की कमी

फसल चक्र	पोषक तत्वों की कमी
वर्ष में तीन से चार बार एक ही खेत में सब्जी उगाने वाले क्षेत्र	बोरन, कैलशियम, सल्फर, मोलिब्डेनम
धान-परती	फास्फोरस, पोटाश
सोयाबीन-गेहूँ, धान-मटर	फास्फोरस, सल्फर, कैलशियम
मूँगफली-अरहर	फास्फोरस, कैलशियम, बोरन
धान-सब्जी	पोटाश
मक्का-गेहूँ	नेत्रजन, फास्फोरस

अम्लीय मिट्टी की समस्याऐं :

झारखण्ड राज्य की लगभग 16 लाख हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि उँचा या मध्यम है। मृदा सर्वेक्षण के आधार पर यह पाया गया है कि 4 लाख हेक्टेयर जमीन में अम्लीयता की समस्या (पी.एच 5.5 से कम) है। संथाल परगना की 2 लाख हेक्टेयर जमीन में इस तरह की समस्या है। इस प्रकार की मिट्टी अम्लीय प्रकृति की है। अम्लीय मिट्टी में गेहुँ, मक्का, दलहनी एवं तेलहनी फसलों की उपज

संतोषजनक नहीं हो पाती है। भूमि में अम्लीयता की समस्या मुख्यरूप से अधिक वर्षा के साथ मिट्टी के कटाव एवं केवल नेत्रजन युक्त खाद के प्रयोग के कारण है। इस प्रकार की मिट्टी में अनेक पोषक तत्वों की उपलब्धता में कमी हो जाती है। अधिक मृदा अम्लता के कारण एल्यूमिनियम, मैगनीज तथा लोहा अधिक घुलनशील बन जाते हैं और पौधों को इनकी अधिक मात्रा में उपलब्धि होने से हानिकारक प्रभाव पड़ता है। अम्लिक मिट्टी में मुख्यत: फास्फेट की कमी तथा कैलशियम की कमी के कारण फसल उत्पादन में कमी होती है। इसका निराकरण चूना के प्रयोग से किया जाता है।

अम्लीय मिट्टी में चूना का प्रयोग :

मिट्टी की अम्लियता में सुधार करने और उससे पौधों की बढ़वार के लिए अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न करने के लिए चूना का प्रयोग किया जाता है। जब फसलों के बुवाई के लिए कुंड खोला जाता है उसमें चूना का चूर्ण 2 से 4 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से डालने के बाद उसे पैर से ढक दिया जाता है। उसके बाद फसलों के लिए अनुशंसीत उर्वरकों एवं बीज की बुवाई की जाती है। चूना, डोलोमाईट तथा बेसिक स्लेग का उपयोग आम्लिक मिट्टी के सुधार के लिए करना चाहिए।

अम्लीय मिट्टी में रॉकफास्फेट का व्यवहार :

अम्लीय मृदाओं में पौधे के उचित विकास के लिए फास्फोरस की उपलब्धता बहुत कम है। मिट्टी में प्रयोग किया जाने वाला फास्फोरस का 46 से 80 प्रतिशत भाग अधुलनशील एल्युमिनियम तथा आयरन फास्फेट में परिणत हो जाता है। इससे पौधों को फास्फोरस की उपलब्धि कम हो जाती है। फास्फोरस की कमी को दूर करने के लिए मिट्टी में रॉकफास्फेट का प्रयोग अनुशंसित है।

इसके लिए निम्नलिखित तकनीकों को अपनाया जाता है :

- फास्फोरस की अनुशंसित मात्रा से 2.5 गुणा अधिक रॉकफास्फेट का छिड़काव मिट्टी में बुआई की अन्तिम तैयारी के समय करना चाहिए। या
- फसलो के लिए अनुशंसित फस्फोरस का 2/3 भाग रॉकफास्फेट एवं 1/3 भाग सुपर फास्फेट एक साथ मिलाकर बुआई के समय कुड़ में डाला जाता है। या
- फसलों के लिए अनुशंसित फोस्फारस की पूरी मात्रा रॉक फास्फेट के द्वारा देने के लिए बुआई के 20 -25 दिन पहले मिट्टी में आर्द्रता की उपस्थिति में छिड़काव किया जाता है या रॉकफास्फेट के साथ-साथ समुचित मात्रा में कम्पोस्ट गोबर की खाद का प्रयोग अनुशंसित है।

कम्पोस्ट बनाने की उन्नत विधि :

कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की अच्छी उपलब्धता के लिए इसे तैयार करते समय ट्राईकोरस स्पीरालीस, पैलीलोमाईसीज फुजीस्फारोरस, एसपरजीलस एवामोरी, एजोटोबैक्टर क्रोकोकम और रॉकफास्फेट (1 से 5 प्रतिशत) कम्पोस्ट के गड्डा में डालने के लिए अनुशंसित है। पौधों के अवशेषों के साथ भी उपरोक्त चीजो को मिलाकर अच्छा कम्पोस्ट बनाया जा सकता है।

गढ़ढें का आकार	:	1 मी. x 1 मी. x 1 मी.
सामग्री	:	खरपतवार, कूड़ा-कचरा, फसलो के डंठल, जलकुम्भी, पशुओं के मल-मूत्र एवं इनसे सने पुआल इत्यादि।
मात्रा	:	100 कि.ग्रा. प्रति गढ़ढा
यूरिया खाद	:	1/2 किलो ग्राम प्रति गढ़ढा
फास्फोरस	:	5 कि0 ग्रा0 म्यूरेट रॉकफास्फेट प्रति गढ़ढा
गोबर का पतला घोल	:	10 कि0 ग्रा0 (प्रारम्भ में)
आर्द्रता	:	80 से 100 प्रतिशत
अवशिष्ठ की पलटाई	:	15, 30 और 45 दिनों पर
तैयार होने का समय	:	4 महीना

जीवाणु खाद का व्यवहार :

कम्पोस्ट के व्यवहार में उसकी गुणवक्ता तथा उसकी परिपक्वता का ध्यान देना आवश्यक है। अच्छे कम्पोस्ट में कम से कम 16-20 प्रतिशत जैविक कार्बन, 0.8 प्रतिशत नेत्रजन, 0.5-0.8 प्रतिशत फास्फेट तथा 1.2 प्रतिशत पोटाशियम होना चाहिए और कार्बन/नेत्रजन अनुपात 20:1 से कम होना चाहिए। दलहनी फसलो में 0.5 कि.ग्रा./ हेक्टेयर राइजोबियम कल्चर का प्रयोग कर 25 से 30 कि.ग्रा. नेत्रजन उर्वरक प्रति हेक्टेयर बचत किया जा सकता है। धान की फसलों में जहाँ पानी का जमाव होता है वहाँ 10 कि.ग्रा. नील हरित शैवाल का प्रयोग कर 30 कि.ग्रा. नेत्रजन उर्वरक प्रति हेक्टेयर बचाया जा सकता है। उपरोक्त दोनों जीवाणु खाद का उत्पादन बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग में किया जाता है। जिसे किसान भाई आठ रूपये प्रति पैकेट (100 ग्राम) की दर से खरीफ एवं रबी मौसम में प्राप्त कर सकते हैं।

सुक्ष्म पोषक तत्वों का व्यवहार :

अम्लीय मिट्टी में प्राय: बोरन और मोलिब्डेनम की उपलब्धता पौधों के लिए कम होता है। इस प्रकार के मिट्टी में इनकी कमी को दूर करने के लिए 1 से 1.5 कि.ग्रा. मोलिब्डेनम (अमोनियम या सोडियम मौलिब्डेट) का प्रयोग प्रति हेक्टेयर के दर से किया जाता है। यदि अमोनियम मोलिब्डेट का 0.1 प्रतिशत घोल का छिडकाव पौधों पर किया जाये तो इसकी कमी दूर हो सकती है। बोरन की कमी दूर करने के लिए 1.5 कि.ग्रा. बोरन प्रति हेक्टेयर (15 कि.ग्रा. बोरेक्स) सब्जी उगाने वाले क्षेत्रों में डालना चाहिए। 0.2 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव भी किया जा सकता है।

पौधें के लिए संतुलित पोषक तत्वों का प्रबंधन :

एक लम्बे समय से विभिन्न उर्वरकों पर किए गये अनुसंधान के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि सोयबीन, मक्का, धान एवं गेहूँ की अच्छी उपज के लिए अनुशंसित नेत्रजन, फासफोरस एवं पोटाश के साथ-साथ चूना एवं गोबर की खाद के प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता में ह्रास नहीं होता है। यहाँ पर आवश्यक होगी कि किसान भाई खाद का व्यवहार मिट्टी जाँच के आधार पर ही करें।

झारखण्ड राज्य में मिट्टी जाँच व्यवस्था :

झारखण्ड राज्य में मिट्टी जाँच की सुविधा में बहुत कमी है। इसके 22 जिलों के 212 प्रखण्ड में इसकी समुचित व्यवस्था करनी होगी। इससे किसानों को मिट्टी जाँच के आधार पर संतुलित मात्रा में खाद का व्यवहार करने की जरूरत पूरी होगी।

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग के मृदा परीक्षण ईकाई में मिट्टी की जाँच की जाती है। विभाग द्वारा किसानों को नि:शुल्क मिट्टी जाँच की सुविधा दी जाती है।

मिट्टी की जाँच की सुविधा के लिए तर्कसंगत प्रयास की आवयकता :

- वर्त्तमान प्रयोगशाला के कार्य क्षमता को बढ़ाना।
- चलन्त यान, प्रयोगशाला की संख्या को बढ़ाना।
- किसानों को मिट्टी जाँच के महत्व को समझाना।
- प्रसार कार्यकर्त्ताओं की कार्यक्षमता को बढ़ाना।
- किसानों द्वारा वैज्ञानिकों के अनुशंसा के अनुसार खेती करना।
- मिट्टी जाँच के कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षण देना।
- मिट्टी स्वास्थ पत्र (स्वायल हेल्थ कार्ड) की शुरूआत करना।
- सब्जी उगाने वाले क्षेत्रों में सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ-साथ सल्फर, कैलशियम एवं मैगनीशियम की मिट्टी में जाँच की आवश्यकता।

▲▲▲

समन्वित पोषक तत्त्व प्रबंधन

डॉ. नन्द किशोर राणा
मृदा विज्ञान विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

हरित क्रांन्ति तो आ गई परन्तु अत्यधिक उर्वरकों के प्रयोग के कारण दुष्प्रभाव भी सामने आने लगा। भूगर्भीय जल एवं वातावरण प्रदूषित होने लगा साथ ही साथ मृदा पर भी दुष्परिणाम आने लगा। खासकर अम्लीय मिट्टियाँ अधिक प्रभावित होने लगी। अम्लीय मिट्टियों की अम्लीयता और अधिक बढ़ने लगी। मिट्टियों पर दुष्प्रभाव के कारण और अधिक उर्वरकों के प्रयोग करने पर भी अपेक्षित उपज प्राप्त नहीं होने लगा। कृषक उर्वरकों का प्रयोग करते थे परन्तु गोबर खाद एवं हरी खाद इत्यादि का प्रयोग बहुत कम करने लगे फलतः मिट्टियों की उर्वरा शक्ति घट गई। कई दूसरे पोषक तत्त्वों की कमी होने लगी जो पहले मिट्टी में काफी मात्रा में विद्यमान थी। अत्याधिक उर्वरकों के प्रयोग से फसलों की उत्तमता भी घट गई। अब इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए अनुसंधान हो रहे हैं।

सिर्फ कार्बनिक पदार्थों के प्रयोग से हम बहुत अधिक उपज प्राप्त नहीं कर सकते हैं और केवल उर्वरकों के प्रयोग से भी। अतः उर्वरकों के साथ-साथ कार्बनिक पदार्थों जैसे गोबर खाद, हरी खाद, तिलहन खल्ली, जीवाणु खाद इत्यादि का प्रयोग करके ही हम अधिक उपज के साथ-साथ उत्तम गुण वाले फसल प्राप्त कर सकते हैं एवं वातावरण तथा मिट्टी के स्वास्थ्य को भी बरकरार रख सकते हैं और इस तरह एक नई तकनीक की खोज प्रारंभ हुई जिसे ''समन्वित पोषक तत्त्व प्रबंधन'' कहते हैं।

इस प्रबंधन का मुख्य उद्देश्य सभी श्रोतों से पोषक तत्त्वों को प्राप्त कर मिट्टी में डालें जिससे अच्छी एवं टिकाऊ उपज प्राप्त हो तथा मिट्टी को उर्वरा शक्ति पर ऋणात्मक प्रभाव भी न पड़े। समन्वित पोषक तत्त्व प्रबंधन में पोषक तत्त्वों की प्राप्ति के निम्न स्रोत हैं -

रसायनिक उर्वरक, कार्बनिक खाद, हरी खाद, जीवाणु खाद, फसल अवशिष्ट, कृषि-उद्योग का बाई-प्रोडक्ट

पोषक तत्त्व प्रबंधन के उद्देश्य

(1) मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बनाये रखना, (2) उपजाऊ और टिकाऊ कृषि को स्थिर करना, (3) गोबर एवं फसल अवशिष्ट का प्रयोग कर कृषि पर होने वाले खर्च में कमी करना, (4) हरी खाद, दलहनी फसल एवं जीवाणु खाद से संभावित लाभ का उपयोग, (5) वातावरण क्षरण को रोकना, (6) कृषि उत्पादन के प्राकृतिक आधार को बिना नुकसान पहुँचाए महत्त्वकांक्षा को पूरा करना।

समन्वित पोषक तत्त्व प्रबंधन के लिए हमें विभिन्न खादों पर विचार करना होगा। परन्तु खादों पर विचार करने के पहले पोषक तत्त्वों पर विचार करना होगा।

जब किसी तत्त्व की अनुपस्थिति के कारण पौधों की जीवन-चक्र पूरा नहीं हो तो उस तत्त्व को पोषक तत्त्व कहते हैं। पौधों के लिए 16 पोषक तत्त्व हैं, वे हैं - कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाशियम, कैल्सियम, मैग्नेशियम, सल्फर, लोहा, ताँबा, जस्ता, मैग्नीज, मौलिब्डेनम, बोरन एवं क्लोरिन। इनमें पहला तीन पोषक तत्त्व हवा एवं पानी से पौधे प्राप्त करते हैं। बाकी पोषक तत्त्वों की प्राप्ति मिट्टी से होती है। झारखण्ड की मिट्टियों में नाइट्रोजन एवं फास्फोरस की अत्याधिक कमी है। पोटाश की कमी पहले उतनी नहीं थी जितनी अब हो रही है। अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए मिट्टी में पोषक तत्त्व,

जिसकी कमी है डालते हैं और जिस स्रोत से डालते हैं उसे ही खाद कहते हैं। पोषक तत्त्वों के मुख्यत: दो स्रोत हैं (1) कार्बनिक खाद एवं (2) रासायनिक खाद या उर्वरक। इसके अतिरिक्त प्रकृति में कुछ ऐसे जीवाणु मौजूद हैं जो वायुमंडल से नाइट्रोजन लेकर पौधों को देते हैं।

कार्बनिक खाद :

इसमें मुख्यत: गोबर खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद, तिलहन की खल्ली, मानव मल इत्यादि आते हैं।

रासायनिक खाद :

यूरिया, अमोनियम सल्फेट, सुपर फास्फेट, म्यूरियेट ऑफ पोटाश इत्यादि।

जीवाणु खाद :

राइजोबियम कल्चर, एजोटो बैक्टर कल्चर, अजोस्पिरिलम कल्चर, नील हरित शैवाल, अजोला-एनोबेना तथा स्फुर विलायक सूक्ष्म जीव।

कार्बनिक खादों में उपस्थित मुख्य पोषक तत्त्वों (नेत्रजन, स्फुर, पोटाश) की मात्रा निम्न सारणी में दी गई है:-

सारणी-1 : कार्बनिक खादों में उपस्थित पोषक तत्त्व

खाद	पोषक तत्त्व (प्रतिशत में)		
	नेत्रजन	स्फुर	पोटाश
गोबर खाद	0.5	0.2	0.5
प्रक्षेत्र लिटर कम्पोस्ट	0.5	0.15	0.5
नगर कम्पोस्ट	1.4	1.0	1.5
मानव मल कम्पोस्ट	5.5	4.0	2.0
हरी खाद (प्रति हे.)	35-120	(फसल के अनुसार)	(फसल के अनुसार)
तिलहन खल्ली	2.5-7.9	0.8-2.9	1.2-2.2
ब्लडमील	10-12	1-2	...
मीटमील	10.5	2.5	...
मछली खाद	4-10	3-9	0.3-1.5

मुख्य तत्त्व के अतिरिक्त दूसरे पोषक तत्त्व भी इन खादों में विद्यमान रहते हैं।

कुछ वैसे पदार्थ भी हैं, जो किसी उद्योग का बाइप्रोडक्ट होता है, जिसे मिट्टी में डालने पर पोषक तत्त्व की प्राप्ति होती है, जैसे लौह में कैल्सियम तथा अल्प मात्रा में फास्फोरस पाया जाता है।

समन्वित पोषक तत्त्व प्रबंधन पर बहुत अनुसंधान हो चुका है और अभी भी हो रहा है, जरूरत है अनुसंधान को खेतों तक ले जाना।

अब यहाँ अनुसंधान के कुछ फल दिये गये हैं -

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विज्ञान विभाग में स्थायी खाद प्रयोग प्रत्यक्षण शोध 1956 से चल रहा है। जिसमें देखा जा रहा है कि नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, गोबर खाद एवं चूना का लम्बी अवधि तक प्रयोग करने पर फसल एवं मिट्टी पर क्या प्रभाव पड़ता है।

सारणी-2 : लम्बी अवधि तक उर्वरक कार्बनिक खाद एवं चूना का मकई के उपज पर प्रभाव (क्वि./ हे.)

उपचार	मकई उपज (हे.)
1. बिना कोई खाद के	4.07
2. सिर्फ नाइट्रोजन	0.90
3. नाइट्रोजन+फास्फोरस	6.5
4. नाइट्रोजन+फास्फोरस+पोटाश	11.88
5. नाइट्रोजन+फास्फोरस+पोटाश+चूना	51.67
6. सिर्फ गोबर खाद	33.00
7. पूरा गोबर खाद+थोड़ा फास्फेट	37.33
8. पूरा गोबर खाद+थोड़ा फास्फेट+थोड़ा पोटाश	38.60
9. आधा गोबर खाद+आधी मात्रा नाइट्रोजन, फास्फेट एवं पोटाश	47.90

ऊपर वर्णित सारणी से साफ पता चलता है कि सिर्फ गोबर खाद डालने से भी बहुत अच्छी फसल प्राप्त नहीं कर सकते हैं। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये उर्वरक के साथ-साथ या तो चूने का प्रयोग करें या गोबर खाद का प्रयोग करें।

राष्ट्रीय कृषि तकनीकी परियोजना के अन्तर्गत समन्वित पोषक तत्त्व प्रबंधन पर कृषक के खेतों में अनेकों प्रयोग हुए हैं। प्रयोग फल से स्पष्ट हुआ कि जब हम उर्वरकों के साथ-साथ गोबर खाद या हरी खाद खेत में डालते हैं तो सिर्फ उर्वरक की तुलना में अधिक उपज प्राप्त होता है। इतना ही नहीं; मिट्टी की उर्वरता में भी वृद्धि हो जाती है। ये बातें निम्न सारणी से स्पष्ट है -

सारणी-3 : समन्वित पोषक तत्त्व प्रबंधन का ऊँची भूमि एवं धान के उपज एवं मिट्टी की उर्वरा शक्ति पर प्रभाव

	उपचार	उपज (क्वि./ हे.)		उपलब्ध मुख्य तत्त्व (कि./ हे.)		
		अनाज	भूसा	नेत्रजन	स्फुर	पोटाश
1.	10 किलो नेत्रजन+1 टन गोबर खाद (कृषक विधि)	12.60	14.75	188.0	14.2	186.0
2.	अनुशंसित उर्वरकों की पूरी मात्रा	20.25	22.10	198.0	15.5	199.0
3.	अनुशंसित उर्वरकों की तीन चौथाई मात्रा + गोबर खाद	25.43	26.45	202.7	16.4	201.6
4.	अनुशंसित उर्वरकों की चौथाई मात्रा + हरी खाद	30.10	30.90	210.2	16.7	212.4
5.	मिट्टी जाँच आधारित नेत्रजन स्फुर, पोटाश एवं सल्फर + 5 टन गोबर खाद + हरी खाद	33.60	35.30	211.0	16.5	212.4

नोट : अनुशंसित उर्वरकों की पूरी मात्रा = 60 कि. नेत्रजन+40 कि. स्फुर+30 कि. पोटाश प्रति हेक्टेयर

स्रोत : डॉ. एस. सिंह एवं डॉ. आर. एन. सिंह, राष्ट्रीय कृषि तकनीकी परियोजना, समन्वित पोषक तत्त्व प्रबंधन की अन्तिम रपट 1999-2003)

मिट्टियों में कुछ ऐसे जीवाणु पाये जाते हैं जो हवा से नाइट्रोजन लेते हैं और पौधों को दे देते हैं। इनमें पहला नाम राइजोबियम जीवाणु का है जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन को अपने शरीर में रखते हैं। ये जीवाणु दलहनी फसलों के जड़ में गांठ बनाते हैं और फिर वहीं से नाइट्रोजन पौधों को देते हैं। परन्तु प्रकृति में पाये जाने वाले राइजोबियम जीवाणु उतना सक्षम नहीं होते हैं। गाँठों से इन जीवाणुओं को लेकर प्रयोगशाला में मजबूत किया जाता है और फिर उसे कल्चर के रूप में बीजों को उपचारित किया जाता है। उपचारित बीज को खेत में बोने से पैदावार में बढ़ोतरी हो जाती है और इस तरह नाइट्रोजन युक्त उर्वरक की बचत हो जाती है।

सारणी-4 : राइजोबियम उपचार का विभिन्न फसलों पर प्रभाव (कृषक खेत में)

फसल	उपज (क्वि./ हे.)		बढ़ोतरी	प्रतिशत बढ़ोतरी
	अनाज	भूसा		
उड़द	12.05	14.20	2.15	18
	8.25	10.50	2.25	27
बोदी	10.30	12.50	2.20	21
चना	8.95	11.05	2.10	23
	8.85	10.55	1.70	19
रहर	18.50	19.85	1.35	7
	4.95	5.89	0.94	19
मसूर	13.5	15.75	2.25	17

स्रोत : रेवारी (1984, 1985) : जीवाणु खाद, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली, पृष्ठ 28

ऊपर के सारणी से स्पष्ट है कि राइजोबियम उपचार से दलहनी फसलों के उपज में 7 से 27 प्रतिशत की बढ़ोतरी हो जाती है। इतना ही नहीं राइजोबियम उपचार से मिट्टी की उर्वरता भी बढ़ जाती है और बाद वाले फसल पर उसका प्रभाव पड़ता है जो सारणी-5 में स्पष्ट है।

सारणी-5 : राइजोबियम उपचार का बाद वाले फसल पर प्रभाव -

	उपज (क्वि./ हे.)		
पूर्ववर्त्ती फसल	राइजोबियम उपचार रहित	राइजोबियम उपचार के साथ	बाद वाले फसल का नाम
राहर	20.75	24.15	गेहूँ
उड़द	20.75	21.25	गेहूँ
चना	25.15	27.15	धान
मसूर	22.75	25.55	धान

स्रोत : सुब्बाराव, एन.एस. एवं तिलक के.भी.बी.आर., 1977; सौमनीर बुलेटिन, दलहन विकास निदेशालय, भारत सरकार (जीवाणुखाद, पृष्ठ 29)

एजोटो बैक्टर नामक एक जीवाणु है जिससे अगर बीज उपचारित कर बोया जाय तो बाजरा, मकई कपास आदि फसलों के उपज बढ़ जाते हैं।

सारणी-5 : एजोटो बैक्टर जीवाणु उपचार का फसलों के उपज पर प्रभाव

फसल	स्थान	बिना नाइट्रोजन के (क्वि./ हे.)	एजोटो बैक्टर उपचार (क्वि./ हे.)	प्रतिशत बढ़ोतरी
बाजरा	पाली	12.8	14.0	9.3
	धाड़वाड़	23.6	32.6	38.1
मकई	नई दिल्ली	7.8	13.4	71.7
	धाड़वाड़	32.6	43.7	36.5
कपास	सूरत	12.54	13.39	6.7
	इन्दौर	3.66	4.01	9.5
	खान्डवा	5.59	7.08	26.6

स्रोत : जीवाणु खाद, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली, पृष्ठ 37

एक तीसरा जीवाणु है जिसका नाम अजोस्पिरिलम है। इस जीवाणु से बीज उपचार कर बोने से फसल के उपज में काफी वृद्धि होती है, जिसे सारणी-6 में दिखाया गया है।

सारणी-6 : अजोस्पिरिलम उपचार का बाजरा के उपज पर प्रभाव (क्वि./ हे.)

	प्रयोग के स्थान						
उपचार	उदयपुर	कोयम्बतूर	धाड़वाड़	हैदराबाद	अंकोला	पंतनगर	औसत
बिना उपचार के	26.26	29.43	16.45	34.13	6.9	19.5	22.11
अजोस्पिरिलम उपचार	31.85	34.12	20.73	40.13	7.73	24.03	26.43
40 कि. नेत्रजन प्रति/हे.	44.80	41.68	30.23	43.43	20.73	24.30	34.20
40 कि. नेत्रजन+अजोस्पिरिलम	45.78	47.78	31.63	43.97	19.97	28.10	36.20

स्रोत : जीवाणु खाद, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली, पृष्ठ 44

इसी तरह मडुआ फसल पर अजोस्पिरिलम उपचार का प्रभाव पाया जाता है जो सारणी-7 से स्पष्ट है।

सारणी -7 : अजोस्पिरिलम उपचार का मडुआ के फसल का प्रभाव (क्वि./ हे.)

उपचार	बंगलौर	ढोली	अल्मोड़ा	दिन्दोरी	औसत
1. बिना उपचार के	33.59	11.32	12.90	8.36	16.54
2. अजोस्पिरिलम उपचार	40.30	13.58	14.33	9.12	19.47
3. 10 कि. नेत्रजन	40.84	14.81	16.23	9.03	20.23
4. 10 कि. नेत्रजन + अजोस्पिरिलम	41.71	15.84	15.67	10.11	20.87
5. 20 कि. नेत्रजन	41.56	15.43	17.33	11.37	21.42
6. 20 कि. नेत्रजन + अजोस्पिरिलम	43.66	16.26	12.43	12.27	21.16
7. 40 कि. नेत्रजन	46.43	19.54	13.9	12.50	23.07
8. 40 कि. नेत्रज + अजोस्पिरिलम	47.09	20.58	31.67	13.02	28.09

स्रोत : जीवाणु खाद, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली, पृष्ठ 45

नील हरित शैवाल धान के फसलों के लिए लाभदायक है। नील हरित शैवाल हवा से नाइट्रोजन लेकर अपने शरीर में शोषित करता है एवं बाद में यही धान के पौधों को प्राप्त होता है। नील हरित शैवाल करीब 30 कि. नाइट्रोजन हवा से लेकर धान के पौधे को देता है।

सारणी-8 : नील हरित शैवाल उपचार का धान के उपज पर प्रभाव (क्वि./ हे.)

	राज्य							
उपचार	उड़ीसा	बिहार	म.प्र.	महाराष्ट्र	त.नाडू	केरल	यू.पी	आ.प्र.
बिना नील हरित शैवाल के	29.76	23.05	24.16	20.66	–	–	35.25	36.36
नीलहरित शैवाल (बी.जी.ए.)	37.10	30.62	28.20	25.55	–	–	45.36	44.34
60 कि. नेत्रजन/हे.	–	–	34.96	–	–	–	–	–
40 कि. नेत्रजन+बी.जी.ए.	–	–	36.30	–	–	–	–	–
75 कि. नेत्रजन/हे.	–	–	–	34.44	52.40	–	–	–
50 कि. नेत्रजन+बी.जी.ए.	–	–	–	34.44	51.15	–	–	–
90 कि. नेत्रजन/हे.	–	–	–	–	–	35.62	–	–
60 कि. नेत्रजन+बी.जी.ए.	–	–	–	–	–	38.38	–	–
100 कि. नेत्रजन/हे.	–	–	–	–	–	–	50.50	–
75 कि. नेत्रजन+बी.जी.ए.	–	–	–	–	–	–	50.38	–

स्रोत : जीवाणु खाद, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली, पृष्ठ 48

कुछ ऐसे भी जीवाणु होते हैं, जिसे अगर मिट्टी में समाहित किया जाय तो वे अनुपलब्ध फास्फोरस को उपलब्ध कर देता है। इस जीवाणु को ''फास्फो बैक्टीरिया'' कहा जाता है। गौड़ (1985) ने अपने अनुसंधान में पाया है कि फास्फो बैक्टीरिया कल्चर को बीज में मिलाकर प्रयोग करने पर फास्फोरस की घुलनशीलता 7 से 50 प्रतिशत बढ़ जाती है जो सारणी-9 से स्पष्ट है –

सारणी-9 : माइक्रोफास जीवाणु का फसलों के उपज पर प्रभाव –

फसल	माइक्रोफास से उपज में प्रतिशत बढ़ोतरी		
	प्रयोग की संख्या	बिना स्फुर के	राक फास्फेट, 60 कि./ हे.
धान	7	10–20	5–15
गेहूँ	8	7–42	5–50
चना	3	10–30	15–25
मसूर	2	–	13–15
आलू	2	30–50	–

स्रोत : जीवाणु खाद, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली, पृष्ठ 52

इस तरह हम देखते हैं कि उक्त जीवाणुओं को खेत में डालने पर उपज में वृद्धि होती है एवं नाइट्रोजन की बचत होती है।

समन्वित पोषक तत्त्व प्रबंधन के लिए पोषक तत्त्व किस श्रोत से कितना दें, यह उस स्रोत की उपलब्धता पर निर्भर करती है। हमें अधिक से अधिक कार्बनिक खाद का प्रयोग करना चाहिए और पोषक तत्त्वों की बाकी मात्रा को उर्वरकों से पूरी करनी चाहिए। ऐसा करके ही हम उपज के साथ-साथ वातावरण को स्वच्छ रख सकेंगे।

▲▲▲

जीवाणु एवं जैविक खाद

डॉ. डी.के. शाही, डॉ. एन.के. राय एवं डॉ. ए. शर्मा
मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

आजकल रासायनिक खादों के प्रयोग से मृदा की प्राकृतिक उर्वरा-शक्ति दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है। आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यह महसूस किया जा रहा है कि रासायनिक खादों एवं विभिन्न कृषि रसायनों (कीटनाशक, फफूंद नाशक एवं खर-पतवार नाशक) के प्रयोग से मृदा, जल, वायु एवं मानव सभी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। जो मानव शरीर में किसी न किसी रूप में जाकर विभिन्न रोगों (विकृतियों) को जन्म दे रहा है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो गया है कि इन रासायनिक खादों के विकल्प के रूप में जीवाणु एवं जैविक खाद का प्रयोग किया जाये। जीवाणु खाद में दलहनी फसलों के लिए मुख्य रूप से *''राइजोबियम कल्चर''*, अनाज और सब्जी वाली फसलों के लिए *''एजोटोबैक्टर कल्चर''*, मक्का, सरसों, राई और चारे वाली फसलों के लिए *''अजोस्पिरिलम कल्चर''* और धान फसल के लिए *''नील हरित शैवाल''* (ब्लू ग्रीन एल्गी) कल्चर एवं जैविक खाद में मुख्य रूप से *''वर्मी कम्पोस्ट''* एवं *''इनरिच्ड''* का प्रयोग किया जाये।

जीवाणु खाद :

राइजोबियम कल्चर : दलहनी फसलों के जड़ों में गुलाबी रंग का गांठ बनता है। इन गाठों में ही राइजोबियम नामक जीवाणु रहता है जो वायुमंडलीय नेत्रजन गैस को भूमि में स्थापित करता है, जिन्हे पौधों द्वारा आसानी से शोषित कर लिया जाता है। राइजोबियम कल्चर के प्रयोग से भूमि में लगभग 15 से 20 कि0 ग्रा0 प्रति हेक्टेयर नेत्रजन खाद का लाभ होता है। इसके अलावा उपज में लगभग 10 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इस कल्चर खाद का प्रयोग मूंग, उरद, अरहर सोयाबिन, मटर, चना, मूँगफली, मसूर एवं बरसीम के फसल में करते हैं। अलग-अलग फसलों के लिए अलग-अलग राइजोबियम कल्चर का प्रयोग किया जाता है।

एजोटोबैक्टर कल्चर :-

यह सुक्ष्म जीवाणु भी राइजोबियम जीवाणु के तरह ही वायुमण्डलीय नेत्रजन को भूमि में स्थापित करता है। इसकी कुछ प्रजातियाँ जैसे - एजोटोबैक्टर, बिजरिंकी, क्रूकोकम, एजीलिस इत्यादि विभिन्न फसलों में वायुमंडलीय नेत्रजन उपलब्ध कराने में सक्षम् होते हैं। ये जीवाणु जड़ों में किसी प्रकार का गांठ नहीं बनाते हैं। ये जीवाणु मिट्टी में पौधों के जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप में पाये जाते हैं तथा नेत्रजन गैस को अमोनिया में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इस जीवाणु खाद के प्रयोग से 10-20 किलोग्राम नेत्रजन प्रति हेक्टर की प्राप्ति होती है तथा अनाज वाली फसलों में 10-20 प्रतिशत एवं सब्जियों में 10 प्रतिशत तक की उपज में वृद्धि पायी गयी है। ये जीवाणु खाद बीजों के अंकुरण में भी सहायता करते हैं एवं इनके प्रयोग से जड़ों में होने वाली फफुंद रोग से भी बचाव होता है। इस कल्चर का प्रयोग गेहूँ, जौ, मक्का, बैंगन, टमाटर, आलू एवं तेलहनी फसलों में करते हैं।

एजोस्पिरिलम कल्चर :

इसके जीवाणु पौधों के जड़ों के आसपास और जड़ों पर समूह बनाकर रहते हैं तथा पौधों को वायुमण्डलीय नेत्रजन उपलब्ध कराते हैं। इस कल्चर का प्रयोग ज्वार, बाजरा महुँआ, मक्का, घास एवं चारे वाली फसलों के पैदवार बढ़ाने के लिए करते हैं। इस जीवाणु खाद के प्रयोग से 15-20 किलोग्राम नेत्रजन प्रति हेक्टेयर की प्राप्ति होती है। इसके अतिरिक्त इसके जीवाणु कई प्रकार के पादप हरमोन्स छोड़ते हैं जो पौधों के वृद्धि के लिए आवश्यक है। एजोस्पिरिलम जड़ों के विस्तार एवं फैलाव में भी सहायक होते हैं, जिससे पोषक तत्वों, खनिजों एवं जल के अवशोषण क्रिया में वृद्धि होती है। जिन फसलों में अधिक पानी की मात्रा दी जाती है वहाँ ये विशेष लाभकारी होते है।

जीवाणु खाद से बीज उपचारित करने की विधि :

सभी प्रकार के जीवाणु खाद से बीज उपचारित करने का तरीका एक जैसा ही है। एक पैकेट (100 ग्राम) कल्चर आधा एकड़ जमीन में बोये जाने वाले बीजों को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होता है।

बीजों को उपचारित करने के लिए सबसे पहले आधा लीटर पानी में लगभग 100 ग्राम गुड़ डालकर खूब उबालें और जब इसकी चासनी तैयार हो जाये, तो इसे ठण्डा करने के बाद एक पैकेट कल्चर (जीवाणु खाद) डालकर अच्छी तरह मिला दें। अब यह बीजों को उपचारित करने वाला घोल बन जाएगा। इसके बाद आधा एकड़ भूमि के लिए पर्याप्त बीज को पानी से धोकर सुखा लें। कल्चर को बीजों के उपर थोड़-थोड़ा डालकर स्वच्छ स्थान, अखबार या कपड़े पर हाथों से इस प्रकार मिलायें कि बीजों के ऊपर कल्चर की एक परत चढ़ जाय। उपचारित बीजों को छाया में सुखाकर शीघ्र ही उसकी बुवाई कर दें।

जिन फसलों की पौध (बिचड़ा) लगायी जाती है उनकी रोपाई करने से पूर्व पौधों की जड़ों को उक्त घोल में डुबोकर उपचरित किया जा सकता है।

जीवाणु खाद के प्रयोग से लाभ :

- ❖ कल्चर के प्रयोग से फसलों की पैदावार में वृद्धि होता है।
- ❖ जीवाणु खाद के प्रयोग से रासायनिक उर्वरक की बचत होती है।
- ❖ इसके प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होता है।
- ❖ कल्चर द्वारा उपचारित करने से बीजों की अंकुरण क्षमता बढ़ जाती है।
- ❖ दलहनी फसलों के बाद अन्य दूसरी फसलों को भी नेत्रजन प्राप्त होता है।

सावधानियाँ :

- ❖ जीवाणु खाद को धूप एवं अधिक गर्मी से बचाकर सुरक्षित स्थान पर रखें।
- ❖ कल्चर जिस फसल का हो उसका प्रयोग उसी फसल के बीज के लिए करें।
- ❖ कल्चर पैकेट खरीदते समय उसका नाम एवं उत्पादन तिथि आवश्य देख लें।
- ❖ उपचारित किये गये बीज को छाया में सुखाकर बोआई शीघ्र कर दें।
- ❖ जीवाणु खाद की क्षमता बढ़ाने के लिए फास्फेट (स्फूर) खाद की पूरी मात्रा मिट्टी में जरूर मिलावें।
- ❖ झारखण्ड की मिट्टी अम्लीय स्वभाव की है इसलिए चूने का व्यवहार अवश्य करें या बीजों को उपचारित करने के बाद चूने का परतीकरण उस पर आवश्य करें।
- ❖ जीवाणु खाद के जीवाणु उदासीन मिट्टी में काफी सक्रिय होती है।

नील हरित शैवाल (ब्लू ग्रीन अल्गी) खाद :

नील हरित शैवाल या ब्लू ग्रीन अल्गी एक तन्तुदार प्रकाश संश्लेषी सूक्ष्मजीव होते हैं, जो वायुमंण्डलीय नेत्रजन गैस को भूमि में स्थापित करते हैं एवं पौधों को उपलब्ध कराते हैं। नील हरति शैवाल (काई) प्राकृति में उपलब्ध ऐसा जैविक स्रोत है, जिनका उपयोग धान की खेती में जैविक उर्वरक के रूप में किया जाता है। बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, कांके, राँची के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग में किये गये अनुसंधान में यह पाया गया है कि नील हरित शैवाल खाद के प्रयोग से 20-30 किलोग्राम नेत्रजन की प्राप्ति होती है जो कि लगभग 65 किलोग्राम रसायनिक उर्वरक (यूरिया) के बराबर है।

नील हरित शैवाल खाद के प्रयोग से लाभ :

1. इसके इस्तेमाल से खेत की मिट्टी में सुधार होता है। यह उसर भूमि सुधारने में भी लाभदायक है।
2. शैवाल खाद के प्रयोग से रसायनिक उर्वरक का बचत होता है।
3. इस खाद को किसान अपने घरों में स्वयं तैयार कर सकते हैं।

4. यह खाद बहुत ही किफायती है तथा छोटे एवं सीमांत किसान के लिए उपयुक्त है। इसमें लागत कम लगता है एवं लाभ ज्यादे मिलता है।

5. इस खाद को धूप में सुखाकर कई वर्षों तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

6. इसके प्रयोग से लगभग 65 किलोग्राम रसायनिक उर्वरक का बचत होता है।

7. इस अल्गी खाद का प्रयोग मुख्य रूप से धान की फसल में करते हैं इससे धान के अलावे अगली फसल को भी नेत्रजन मिलता है।

8. शैवाल खाद के प्रयोग से धान के उपज में लगभग 10-15 प्रतिशत की वृद्धि होता है।

शैवाल खाद बनाने की विधि :

1. गैल्बनाइज्ड (जंग रोधी) लोहे की शीट से बना 2 मीटर लम्बा, 1 मीटर चौड़ा तथा 15 से.मी. ऊँचा एक चौकोर बरतन (ट्रे) बनायें। इस ट्रे को किसान ईट एवं सिमेंट के द्वारा भी बना सकते हैं या किसान अपने आस-पास के बेकार भूमि पर भी इसी आकार का गड्ढा खोदकर उसमें नीचे पोलीथीन शीट बिछा कर भी इस्तेमाल कर सकते हैं। लम्बाई एवं चौड़ाई आवश्यकतानुसार बढ़ायी या घटाई जा सकती है।

2. ट्रे में 10 किलो ग्राम दोमट मिट्टी डालें एवं उसमें 200 ग्राम सुपर फास्फेट खाद एवं 2 ग्राम सोडियम मोलिब्डेट नामक रसायन अच्छी तरह मिलायें। यदि मिट्टी अम्लीय स्वभाव की हो तो 10 ग्राम चूना भी मिलाएँ। इसके बाद इस ट्रे में 5 से 10 से0मी0 ऊचाई तक पानी भरें। इसे कुछ घंटो के लिए छोड़ दें ताकि मिट्टी अच्छी तरह बैठ जाय और पानी साफ हो जाय।

3. इसके बाद पानी की सतह पर एक मुट्ठी अल्गी कल्चर (अल्गी बीज) छिड़क दें। यह प्रारम्भिक कल्चर बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग से प्राप्त किया जा सकता है।

4. ट्रे को धूप में रखे जहाँ हवा आती हो। गर्मी के मौसम में धूप की गर्मी से अल्गी की बढ़वार ज्यादे एवं जल्दी होती है। 10-15 दिनों बाद पानी की सतह पर काई (अल्गी) की मोटी परत दिखाई देगी। जब परत मोटी हो जाय तो पानी देना बन्द कर दें।

5. पानी को सूखने के लिए छोड़ दें और सुखने के बाद उपर के अल्गी परत या पपड़ी को खुरच कर साफ कपड़े या प्लास्टिक थैले में भरकर रख लें।

6. पुनः ट्रे में पानी डालकर इस क्रिया को दूहरायें। इस प्रकार भरे गये ट्रे से 2 से 3 बार अल्गी का फसल लिया जा सकता है।

इस कार्यक्रम को सालों भर चला कर अल्गी खाद का उत्पादन किया जा सकता है।

शैवाल खाद की मात्रा एवं प्रयोग विधि :

1. धान के रोपाई के एक सप्ताह बाद खेत में 3-4 से.मी. पानी भर कर उसमें 10 किलोग्राम प्रति हैक्टर अल्गी कल्चर छिड़क दें। यदि इससे ज्यादे कल्चर के खेत में डाल दिया गया है तो उससे कोई नुकसान नहीं होगा बल्कि इससे शैवाल की बढ़वार तेज होगा।

2. कीटनाशक एवं रोगनाशक दवाओं के प्रयोग से अल्गी के क्रिया-कलाप पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता है।

3. अगर एक ही खेत में लगातार कई साल तक अल्गी डाला जायेगा तो पूरी तरह से उस खेत में अल्गी स्थापित हो जायेगें और फिर इसे डालने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

सावधानियाँ :

1. साफ एवं भूरभूरी दोमट मिट्‌टी ही प्रयोग में लायें।
2. जब शैवाल (काई) खाद का खेत में छिड़काव करें तो खेत में कम से कम 3-4 से.मी. पानी अवश्य रखें।
3. यह ध्यान रखें कि शैवाल खाद को रसायनिक उर्वरक या अन्य रसायनों के सीधे सम्पर्क में न आने दें।
4. शैवाल खाद बनाते समय ट्रे में नेत्रजन धारी उर्वरक का प्रयोग नहीं करें।
5. शैवाल खाद को सूखे स्थान में रखें।

जैविक खाद :

जैविक खाद का अभिप्राय उन सभी कार्बनिक पदार्थो से है जो कि सड़ने या गलने पर जीवांश पदार्थ या कार्बनिक पदार्थ पैदा करती है। इसे हम कम्पोस्ट खाद भी कहते हैं। इनमें मुख्यत: वनस्पति सामग्री और पशुओं का बिछावन, गोबर एवं मल मूत्र होता है। इसलिए इनमें वे सभी पोषक तत्व उपस्थित रहते हैं जो कि पौधों के वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं। जैविक खाद फसल के लिए बहुत ही उत्तम खाद मानी जाती है।

जैविक खाद या कम्पोस्ट खाद को मुख्यत: तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है :

1. फास्फो कम्पोस्ट, 2. इनरिच्ड कम्पोस्ट एवं 3. वर्मी कम्पोस्ट

फास्फो कम्पोस्ट

इस खाद में फास्फोरस (स्फूर) की मात्रा अन्य कम्पोस्ट खादों की अपेक्षा ज्यादा होता है। फास्फो कम्पोस्ट में 3-7 प्रतिशत फास्फोरस (स्फूर) होता है जबकि साधारण कम्पोस्ट में यह अधिकतम 1.0 प्रतिशत तक पाया जाता है।

फास्फोकम्पोस्ट बनाने की विधि :

यह विधि बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन द्वारा विकसित एवं आनुशंसित है। इस विधि द्वारा फास्फोकम्पोस्ट बनाने का तरीका बहुत ही आसान एवं सरल है।

1. सबसे पहले 2 मीटर लम्बा, 1 मीटर चौड़ा, 1 मीटर गहरा गड्‌डा बनायें। आवश्यकतानुसार एक या एक से अधिक गड्‌ढे बना सकते हैं। यह गड्‌ढा कच्चा या पक्का किसी भी तरह का हो सकता है।
2. सामग्री : खरपतवार, कुड़ा - कचरा, फसलों के अवशेष, जल कुम्भी, थेथर, पुटुस, करंज या अन्य जंगली पौधों की मुलायम पत्तियाँ, पुआल इत्यादि। इन सभी सामग्रियों को निम्न अनुपात में सुखे वजन के अनुसार मिला कर गड्‌ढों में भरें।

कार्बनिक कचरा	:	गोबर	:	मिट्‌टी	:	कम्पोस्ट
8	:	1	:	0.5	:	0.5

3. खाद बनाने के लिए उपलब्ध सामग्री से कई परत बनाकर एक ही साथ भरें तथा 80 - 100 प्रतिशत नमी (पानी मिलाकर) बनाये रखें।
4. उपलब्ध सामग्री से भरे गड्‌ढे में 2.5 किलोग्राम नेत्रजन प्रतिटन के हिसाब से यूरिया तथा 12.5 किलोग्राम राक फास्फेट या सिंगल सुपर फास्फेट डालें।
5. गोबर, मिट्‌टी , कम्पोस्ट एवं रॉक फास्फेट तथा यूरिया को एक बर्तन या ड्रम में डालकर 80 - 100 लीटर पानी से घोल बनायें। इस घोल को गड्‌ढे में 15-20 से0मी0 मोटी अवशिष्ट (सामग्री) का परत बनाकर उसके उपर छिड़काव करें। यह क्रिया गड्‌ढे भरने तक करें। जब तक उसकी ऊंचाई जमीन की सतह से 30 से.मी. ऊंची न हो जायें।
6. उपरोक्त विधि से गड्‌ढे को भरकर उपर से बारीक मिट्‌टी की पतली परत (5 सेमी.) से गड्‌ढे को ढंक दें और अन्त में गोबर से लेप कर गड्‌ढे को बन्द कर दें।

7. अवशिष्ट (सामग्री) की पलटाई 15, 30 तथा 45 दिनों के अन्तराल पर करें तथा उसमें आवश्यकतानुसार पानी डालकर नमी बनायें रखें।

8. 3-4 महीने के बाद देखेगें कि उत्तम कोटी की भूरभूरी खाद तैयार हो गई है। इस खाद को सुखे वजन के अनुसार इसका प्रयोग फसलों की बुआई के समय सुपर फास्फेट खाद की जगह पर कर सकते हैं। इस फास्फो कम्पोस्ट खाद का प्रयोग सभी प्रकार के फसलों में किया जा सकता है।

वर्मी कम्पोस्ट (केंचुआ खाद) :-

जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि केंचुआ द्वारा बनाया गया कम्पोस्ट खाद को वर्मी कम्पोस्ट या केंचुआ खाद कहते हैं। साधारण कम्पोस्ट बनाने के लिए इक्कठा की गयी सामग्री में ही केंचुआ डालकर वर्मी कम्पोस्ट तैयार किया जाता है। इसमें कार्बनिक पदार्थ एवं ह्यूमस ज्यादे मात्रा में पाया जाता है। इस खाद में मुख्य पोषक तत्व के अतिरिक्त दूसरे सूक्ष्म पोषक तत्व तथा कुछ हारमोन्स् एवं इन्जाइस भी पाये जाते हैं जो पोधों के वृद्धि के लिए लाभदायक हैं। वर्मी कम्पोस्टिंग में स्थानीय केंचुआ के किस्म का प्रयोग करें। यहाँ छोटानागपुर में *एसेनीया फोटीडा (Eisenia Foetida)* नामक किस्म पायी जाती है जो यहाँ के वातवारण के लिए उपयुक्त है।

वर्मी कम्पोस्ट बनाने की विधि :-

1. केंचुआ खाद बनाने के लिए सबसे पहले ऐसे स्थान का चुनाव करें, जहाँ धूप नहीं आती हो, लेकिन वह स्थान हवादार हो। ऐसे स्थान पर 2 मीटर लम्बा, 1 मीटर चौड़ा जगह के चारों ओर मेड़ बना लें जिससे कम्पोस्टिंग पदार्थ इधर-इधर बेकार न हो।

2. सबसे पहले नीचे 6 इंच का एक परत आधा सड़ा हुआ गोबर या वर्मी कम्पोस्ट उसमें थोड़ा उपजाऊ मिट्टी मिला कर फैला लें। जिससे केचुआ को प्रारम्भिक अवस्था में भोजन मिल सके। इसके बाद 40 केचुआ प्रति वर्ग फीट के हिसाब से उसमें डाल दें।

3. उसके बाद घर एवं रसोई घर का अवशेष आदि का एक परत डालें जो लगभग 8-10 इंच मोटा हो।

4. दूसरा परत को डालने के बाद पुआल, सुखी पत्तियाँ एवं गोबर आदि को आधा सड़ाकर दूसरे परत के ऊपर डालें। प्रत्येक परत के बाद इतना पानी का छिड़काव करें कि जिससे परत में नमी हो जाये।

5. अन्त में 3-4 इंच मोटा परत गोबर का डालकर बोरा से ढंक दें जिससे केंचुआ आसानी से उपर नीचे घूम सके। प्रकाश के उपस्थिति में केंचुआ का आवगमन कम हो जाता है जिससे खाद बनाने में समय लग सकता है इसलिए ढंकना आवश्यक है।

आप देखेगें कि 50-60 दिनों में वर्मी कम्पोस्ट खाद तैयार हो जायेगा। सबसे ऊपर के परत को हटायें तथा उसमें से केंचुआ को चुनकर निकाल ले। इस प्रकार नीचे के परत को छोड़ कर बाकी सारा खाद इक्ट्ठा कर लें चलनी से छानकर केचुओं को अलग किया जा सकता है। पुन: इस विधि को दुहरायें।

इस प्रकार तैयार वर्मी कम्पोस्ट खाद में पोषक तत्वों की मात्रा निम्नलिखित होती है :-

पोषक तत्व	प्रतिशत मात्रा
नेत्रजन	0.6 - 1.2
स्फूर	1.34 - 2.2
पोटाश	0.4 - 0.6
कैल्सियम	0.44
मैग्नेशियम	0.15

इनके अलावा इन्जाइम, हारमोन्स एवं अन्य सुक्ष्म पोषक तत्व भी पाये जाते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट खाद से लाभ :

1. केंचुआ द्वारा तैयार खाद में पोषक तत्वों की मात्रा साधारण कम्पोस्ट की अपेक्षा अधिक होता है।
2. भूमि के उर्वरता में वृद्धि होती है।
3. फसलों के उपज में वृद्धि होती है।
4. इस खाद का प्रयोग मुख्य रूप से फूल के पौधों एवं किचेन गार्डेन में किया जा सकता है, जिससे फूल के आकार में वृद्धि होती है।
5. वर्मी कम्पोस्ट खाद के प्रयोग से भूमि में वायु का संचार सुचारू रूप से होता है।
6. यह खाद भूमि के संरचना एवं भौतिक दशा सुधारने में सहायक होता है।
7. इसके प्रयोग से भूमि की दशा एवं स्वास्थ में सुधार होता है।

वर्मी कम्पोस्ट बनाने में सावधानियाँ :-

1. वर्मी कम्पोस्ट खाद बनाते समय यह ध्यान रखें कि नमी की कमी न हो। नमी बनाये रखने के लिए आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करें।
2. खाद बनाते समय यह ध्यान रखे कि उनमें ऐसे पदार्थ (सामग्री) का प्रयोग नही करें जिसका अपघटन नहीं होता है या जो पदार्थ सड़ता नहीं है। जैसे - प्लाटिक, लोहा, कांच इत्यादि का प्रयोग नहीं करें।
3. कम्पोस्ट बेड (ढेर) को ढंक कर रखें।
4. वर्मी कम्पोस्ट बेड का तापक्रम 35^0 से.ग्रे. से ज्यादे नहीं होना चाहिये।
5. चींटी एवं मेंढ़क आदि से केचुओं को बचाकर रखें।
6. कीटनाशक दवाओं का प्रयोग नहीं करें।
7. खाद बनाने के सामग्री में किसी भी तरह का रासायनिक उर्वरक नहीं मिलावें।
8. कम्पोस्ट बेड के पास पानी नहीं जमने दें।

▲▲▲

समेकित पोषण प्रबंध

डॉ. प्रदीप डे
बागवानी एवं कृषि-वानिकी शोध कार्यक्रम (हार्प), प्लाण्डू, राँची - 8340010 (झारखण्ड)

शोध परिणामों से स्थापित हो चुका है कि वर्षों तक लगातार असंतुलित एवं अपर्याप्त पोषण प्रबंधन, भूमि की उर्वरा शक्ति एवं उत्पादकता में ह्रास के लिए प्रमुख रूप से उत्तरादायी है। रसायनिक उर्वरकों का प्रयोग, भूमि की उर्वरकता एवं फसलोत्पादक के लम्बे समय तक सतत् बनाये रखने में अक्षम हैं। जबकि समेकित पोषण प्रबंध भूमि की उर्वरकता एवं फसलोत्पादकता को लम्बे समय तक स्थिर बनाये रखने के साथ-साथ मृदा के भौतिक, रसायनिक एवं जैविक गुणों को भी बरकरार रखता है जिससे कि द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी नहीं होने पाती। समेकित पोषण प्रबंध में रसायनिक उर्वरकों के अलावा दलहनी फसलें, जैविक खाद, जीवाणु खाद, केंचुआ खाद एवं फसल अवशेष द्वारा पोषण प्रबंध सम्मिलित हैं।

पौधों की बढ़वार के लिए 16 पोषक तत्वों की जरूरत पड़ती है। इसमें से तीन तत्व कार्बन, हाईड्रोजन एवं ऑक्सीजन वायु एवं पानी से प्राप्त होते हैं। नेत्रजन, फास्फोरस एवं पोटास को मुख्य तत्वों कैल्सियम, मैग्नेशियम एवं सल्फर को गौण पोषक तत्व तथा जस्ता, ताँबा, लोहा, मैग्नीज, मोलिब्डेनम, बोरान एवं क्लोरिन को सूक्ष्म पोषक तत्त्व कहते हैं।

जैविक खाद :

मृदा में जैविक पदार्थों की पर्याप्त उपलब्धता के लिए जैविक खादों का प्रयोग अनिवार्य है। जैविक खाद मृदा की भौतिक संरचना तथा रसायनिक एवं जैविक गुणों पर लाभदायक प्रभाव डालते हैं। जैविक खादों तथा खल्ली में औसत पोषक तत्वों की मात्रा क्रमश: सारणी 1 एवं 2 में दर्शायी गयी है :

सारणी-1 : जैविक खाद में औसत पोषक तत्वों की मात्रा (प्रतिशत में)

जैविक खाद	नेत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
गोबर की खाद	0.5-1.5	0.3-0.9	0.3-1.5
ग्रामीण कम्पोस्ट	0.5-1.0	0.4-0.8	0.8-1.2
शहरी कम्पोस्ट	0.7-2.0	0.9-3.0	1.0-2.0

सारणी-2 : खल्ली में औसत पोषक तत्वों की मात्रा (प्रतिशत में)

जैविक खाद	नेत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
करंज की खल्ली	3.9	0.9	1.2
नीम की खल्ली	5.0	1.1	1.5
अरंडी की खल्ली	4.3	1.8	1.3
मूंगफली की खल्ली	7.3	1.5	1.3
नारियल की खल्ली	3.0	1.9	1.8
सरगुजा की खल्ली	4.7	1.8	1.3
तिल की खल्ली	6.2	2.0	1.2

दलहनी फसलें :

दलहनी फसलों को अनेक प्रकार से सम्मिलित किया जा सकता है। मुख्यत: दलहनी फसलों को अन्न फसल के साथ अन्त: फसल के रूप में, हरी खाद के रूप में या चारे अथवा दाने के लिए उगाने पर मृदा की उर्वरता एवं फसल में उत्साहजनक वृद्धि तथा

उपज में स्थिरता देखी गई है। दलहनी फसलें खेत में उगाने से वायुमण्डल में उपस्थित नेत्रजन का दलहनी फसलों द्वारा किये जाने वाले नेत्रजन-यौगिकीकरण का लाभ मिलता है। सारणी-3 में दलहनी फसलों द्वारा यौगिकीकृत नेत्रजन की मात्रा दी गई हैं।

सारणी-3 : दलहनी फसलों द्वारा यौगिकीकृत नेत्रजन की औसत मात्रा -

फसल	नेत्रजन (कि.ग्रा./ हेक्टेयर)
लोबिया	85-90
मटर	70-75
सोयाबीन	55-60
मूंगफली	40-45
बीन	35-40

हरी खाद :

हरी खाद के प्रयोग से जैविक पदार्थ के अतिरिक्त मृदा में नेत्रजन की मात्रा बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त जीव-रासायनिक क्रिया में तीव्रता भी आती है तथा पोषक तत्वों का संरक्षण एवं उपलब्धता बढ़ जाती है। सारणी-4 में बरसात तथा शुष्क मौसम में उगाये जाने वाली हरी खाद में औसत पोषक तत्वों की मात्रा दी गई है -

सारणी-4 : हरी खाद में औसत पोषक तत्वों की मात्रा -

स्थानीय नाम	वैज्ञानिक नाम	उगाने का समय	उपज (टन/ हे.)	नेत्रजन (प्रतिशत)
ढैंचा	*सेसबानिया एक्युलियाटा*	बरसात का मौसम	19-20	0.43
सनई	*क्रोटोलेरिया जन्सिया*	बरसात का मौसम	21-22	0.42
सेन्जी	*मेलिलोटस आल्वा*	शुष्क मौसम	25-26	0.50
बरसीम	*ट्राईफोलियम अलेक्सनड्रीनम*	शुष्क मौसम	15-16	0.44

इसके अतिरिक्त कृषि-वानिकी तंत्रानुसार गिरिपुष्प (ग्लिरिसिडिआ) एवं सुबबूल (ल्यूकायना) लगातार उसके पत्तों का हरी खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। ग्लिरिसिडिआ के एक टन हरी पत्ती में 30-40 किग्रा. नेत्रजन, 3.0-3.2 किग्रा. फास्फोरस एवं 15-25 किग्रा. पोटाश प्राप्त होता है। एक टन सुबबूल की पत्ती के प्रयोग से 30-35 किग्रा. नेत्रजन, 2.5-2.8 किग्रा. फास्फोरस एवं 14-15 किग्रा. पोटाश मिलता है।

फसल अवशेष :

धान मूंगफली इत्यादि की भूसी तथा ज्वार एवं रागी का तना आदि के प्रयोग से जमीन में जैविक कार्बन में वृद्धि के साथ-साथ मृदा की भौतिक संरचना भी उत्कृष्ट हो जाती है। सारणी-5 में फसल अवशेष में औसत पोषक तत्वों की मात्रा दी गई है।

सारणी-5 : फसल अवशेष में औसत पोषक तत्वों की मात्रा (प्रतिशत में) -

जैविक खाद	नेत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
धान का भूसा	0.30-0.50	0.20-0.50	0.30-0.50
मूंगफली का भूसा	1.60-1.81	0.30-0.51	1.10-1.70
ज्वार का तना	0.65	0.75	2.50
रागी का तना	0.40	0.23	2.17

जीवाणु खाद :

पौधे की जड़ो में रहकर ये सूक्ष्मजीवी वायुमंडलीय नेत्रजन या भूमि में उपलब्ध अघुलनशील फास्फोरस को पौधे के लिए उपयोगी बनाते हैं तथा पौधो के वृद्धि एवं उपज बढ़ाने में सक्रिय योगदान देने के साथ-साथ भूमि की उर्वरा शक्ति को भी बनाये रखते हैं।

नेत्रजन उपलब्ध कराने वाले जीवाणु खाद :

इस प्रकार के जीवाणु खादों में उपस्थित जीवाणु वातावरण स्थित नेत्रजन गैस को पौधों को आसानी से उपलब्ध करते हैं। सब्जी फसल में नेत्रजन की उपलब्धता को बढ़ाने वाली जीवाणु खाद एजोटोबैक्टर तथा एजोस्पाइरिलम है।

फास्फोरस उपलब्ध कराने वाली जीवाणु खाद :

इस प्रकार के जीवाणु खादों में उपस्थित सूक्ष्मजीवी मिट्टी के अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील रूप में बदल देते हैं, जो पौधे आसानी से अपने भोजन के रूप में उपयोग करते हैं। अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बनाने वाली जीवाणु खाद फास्फो बैक्ट्रीन नाम से जाना जाता है।

विभिन्न जीवाणु खादों के प्रयोग करने की निम्न विधियाँ हैं -

1. जीवाणु खादों से बीज को उपचारित करना, (2) जीवाणु खादों को भूमि में मिलाना।

बीजोपचार विधि में 250 ग्रा. गुड़ एक लीटर पानी में उबालकर ठण्डा करने के बाद उसमें 500 ग्रा. जीवाणु तथा एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त बीज को अच्छी तरह मिला कर आधा घंटा तक छायादार स्थान में सुखाने के बाद उपचारित बीज की बुआई करना चाहिए। कल्चर को धूप से बचाना चाहिए। मिट्टी उपचार कि लिए 1 किग्रा. कल्चर 25 किग्रा. गोबर की सड़ी खाद तथा 25 किग्रा. मिट्टी के साथ अच्छी तरह मिलाकर भीगा हुआ जूट के बोर से ढंक कर छायादार स्थान पर 15 दिन तक रख देना चाहिए। 5 एवं 10 दिन बाद मिश्रण को दो बाद पलटाई करें तथा 15 दिन बाद उर्पयुक्त मिश्रण को एक हेक्टेयर में समान रूप से बिखेर देना चाहिए। इसका प्रयोग करते समय उर्वरक तथा रासायनिक दवाओं का उपयोग नहीं करना चााहिए।

केंचुआ खाद (वर्मी कम्पोस्ट)

यह एक उच्च कोटि का संतुलित जैविक खाद है, जो एसीनिया फोटिडा तथा युड्रिलस नामक केंचुआ द्वारा तैयार किया जाता है। इसमें नेत्रजन (1.0-2.0 प्रतिशत), फास्फोरस (1.0-1.5 प्रतिशत) तथा पोटाश (1.5-2.0 प्रतिशत) के अलावा सूक्ष्म पोषक तत्वों एवं इन्जाइम उपलब्ध होते हैं जो पौधों के लिए आवश्यक होते हैं। यह जमीन की उर्वरकता तथा मिट्टी की जलधारण क्षमता को भी बढ़ाता है।

केचुआ खाद के बोआई से पहले 40-50 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से जमीन में मिलाना चाहिए। केंचुआ खाद प्रयोग के बाद पुआल, सूखी पत्तियां या कूड़ा-करकट से जमीन की उपरी सतह को ढंक (मल्चिंग) देने से इसका प्रभाव अच्छा होता है। इसका प्रयोग करते समय उर्वरक तथा रासायनिक दवाओं का उपयोग नहीं करना चाहिए।

समेकित पोषण प्रबंध के लाभ

समेकित पोषण प्रबंध के उपयोग से फसल की बढ़वार संतुलित एवं स्वस्थ होती तथा भरपूर उत्पादन मिलता है। समेकित पोषण प्रबंध भूमि को स्वस्थ रखती है तथा इसकी उर्वरा शक्ति एवं उत्पादन क्षमता को बनाये रखती है। समेकित पोषण प्रबंधन फसलों की गुणवत्ता बनाये रखती है एवं बाजार में उत्पादों का सही भाव मिलता है। समेकित पोषण प्रबंधन फसल के सभी पोषक तत्वों की उपलब्धता को सुनिश्चित करती है। एक तत्व की कमी दूसरे तत्व की उपलब्धता को प्रभावित कर सकती है। उदाहरण स्वरुप खेत में नेत्रजन की पर्याप्त मात्रा होने पर भी फास्फोरस की कमी से फसल को नेत्रजन की उपलब्धता कम हो जाती है।

समेकित पोषण प्रबंध की रूपरेखा

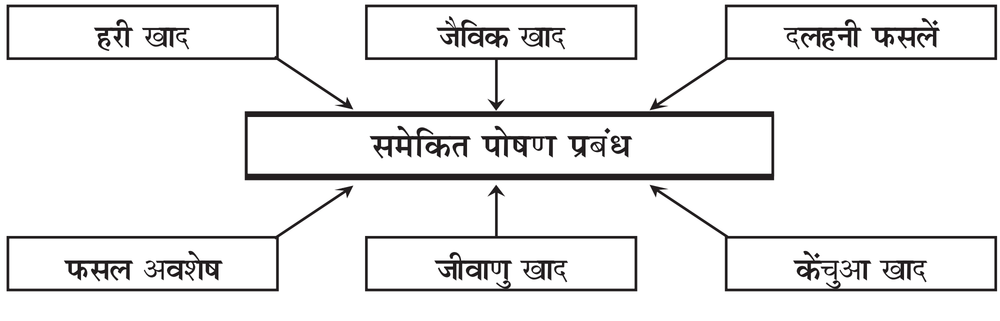

▲▲▲

केंचुआ खाद (वर्मी कम्पोस्ट)

डॉ. प्रदीप डे

बागवानी एवं कृषि-वानिकी शोध कार्यक्रम (हार्प), प्लाण्डू, राँची - 8340010 (झारखण्ड)

आज की सघन खेती के युग में भूमि की उर्वराशक्ति बनाये रखने के लिए प्राकृतिक खादों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद मुख्य हैं। कम्पोस्ट बनाने के लिए फसलों के अवशेष, पशुशाला का कूड़ा-करकट एवं गोबर को गड्ढे में गलाया एवं सड़ाया जाता है। इस प्रक्रिया में ज्यादा समय लगने के कारण पर्यावरण भी दूषित होता है। पिछले कुछ सालों से कम्पोस्ट बनाने की एक नई विधि विकसित की गई है, जिसमें केंचुआ का प्रयोग किया जाता है। जिसे केंचुआ खाद या वर्मी कम्पोस्ट कहते हैं। केंचुआ खाद तैयार करने के लिए प्लास्टिक, सीसा, पत्थर के अलावा कोई भी चीज जैसे कूड़ा करकट, फसल अवशेष, गोबर, सड़ा हुआ जूट का बोरा आदि की जरूरत पड़ती है जिसे बड़ी आसानी से बनाया जा सकता है।

वर्मी कम्पोस्ट क्या है?

केंचुआ अपना महत्त्वपूर्ण योगदान भूमि सुधारक के रूप में देता है। इनकी क्रियाशीलता मिट्टी में स्वतः चलती रहती है। प्राचीन समय में प्रायः भूमि में केंचुए पाये जाते थे तथा वर्षा के समय भूमि पर देखे जाते थे परन्तु आधुनिक खेती में अधिक रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों के लगातार प्रयोग से केंचुओं की संख्या में भारी कमी आई है। जिस भूमि में केंचुए नहीं पाये जाते, उनसे यह स्पष्ट होता है कि मिट्टी अब अपनी उर्वरा शक्ति खो रही है।

केंचुआ मिट्टी में पाये जाने वाले जीवों में सबसे प्रमुख हैं। ये अपने आहार के रूप में मिट्टी तथा कच्चे जीवांश को निगलकर अपनी पाचन नलिका से गुजारते हैं जिससे वह महीन कम्पोस्ट में परिवर्तित हो जाते हैं और अपने शरीर से छोटी छोटी कास्टिंगस के रूप में निकालते हैं। इसी कम्पोस्ट को केंचुआ खाद या वर्मी कम्पोस्ट कहा जाता है। केंचुओं के उपयोग से व्यापारिक स्तर पर खेत पर ही कम्पोस्ट बनाया जाना संभव है। इस विधि द्वारा कम्पोस्ट मात्र 45-75 दिन में तैयार हो जाता है। यह खाद बहुत ही प्रभावशाली होती है तथा इसमें पौधों के लिए सभी पोषक तत्व भरपूर मात्रा में मौजूद होते हैं तथा पौधे इनको तुरन्त ग्रहण कर लेते हैं।

केंचुआ खाद तैयार करने के लिए कौन-कौन सी प्रजातियां प्रयोग में लाया जाता है?

विश्व में विभिन्न भागों में 4500 प्रजातियां बतायी जा चुकी है। आज केंचुआ की कुछ ऐसी प्रजातियां विकसित कर ली गई है जिनको पाकर किसान प्रतिदिन के कूड़ा करकट को एक अच्छी खाद (वर्मी कम्पोस्ट) में बदल सकते हैं। दो प्रजातियां सबसे उपयोगी पाया गया जिनका नाम *ऐसीनिया फोटिडा* (लाल केंचुआ) तथा *युड्रियल युजीनी* (भूरा गुलाबी केंचुआ) है।

केंचुआ खाद में विभिन्न तत्वों की मात्रा :

केंचुआ का खाद एक उच्च पौष्टिक तत्व वाली खाद होती है। केंचुआ खाद से नाइट्रोजन (1.0-2.0 प्रतिशत), फास्फोरस (1.0-1.5 प्रतिशत) तथा पोटाश (1.5-2.0 प्रतिशत) के अलावा सूक्ष्म पोषक तत्व भी उपलब्ध होते हैं। केंचुए की गतिविधियों से निकलने वाला अवशिष्ट प्राकृतिक तत्व से मिश्रित होने के कारण यह खाद अधिक उपजाऊ हो जाती है।

केंचुआ खाद के प्रयोग विधि :

1. खेत की अंतिम जुताई के समय 20 से 30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर में केंचुआ खाद डालकर जुताई करें। 2. बीज लगाने से पहले पंक्ति में इसे अच्छी तरह डालें अथवा बिचड़ा या पौधा लगाने से पूर्व इसको अच्छी तरह डाल दें। 3. मिट्टी चढ़ाने के समय भी इसे डालें। 4. निकौनी, गुड़ाई के समय केंचुआ खाद पौधों की जड़ में डालकर मिट्टी से ढ़क दें अथवा पौधो की रोपाई एवं बीजों की बुनाई के समय केंचुआ खाद डालकर बुनाई-रोपाई करें। 5. अच्छे परिणाम के लिए केंचुआ खाद का प्रयोग करने के बाद पुवाल, सूखी पत्ती आदि से पलवार (मलचिंग) करें।

केंचुआ खाद प्रयोग करने के लाभ :

1. केंचुआ खाद को भूमि में बिखेरने से तथा भूमि में इनकी सक्रियता से भूमि भुरभुरी एवं उपजाऊ बनती है। जिससे पौधों की जड़ों के लिए उचित वातावरण बनता है तथा उनका अच्छा विकास होता है।
2. केंचुआ खाद मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की वृद्धि तथा भूमि में जैविक क्रियाओं को निरन्तरता प्रदान करता है।
3. केंचुआ खाद में आवश्यक पोषक तत्व प्रचुर एवं संतुलित मात्रा में होते हैं। जिससे पौधे संतुलित मात्रा में विभिन्न आवश्यक तत्व प्राप्त कर सकते हैं।
4. केंचुआ खाद के प्रयोग से मिट्टी भुरभुरी हो जाती है। जिससे उसमें पोषक तत्व एवं जल संरक्षण की क्षमता बढ़ जाती है एवं हवा का आवागमन भी मिट्टी में ठीक रहती है।
5. केंचुआ खाद क्योंकि कूड़ा करकट, गोबर एवं फसल अवशेषों से तैयार किया जाता है। अत: गंदगी में कमी करता है तथा पर्यावरण को सुरक्षित रखता है।
6. केंचुआ खाद टिकाऊ खेती के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण है तथा यह जैविक खेती की दिशा में नया कदम है।

केंचुआ खाद बनाने की विधि :

केंचुआ खाद बनाने की विधि बहुत ही सरल तथा सस्ती है। इससे बेराजगार नवयुवक काफी पैसा कमा सकते हैं। केंचुआ धूप सहन नहीं कर सकते अत: सबसे पहले 5 फुट चौड़ा एवं 20 फुट लम्बा बाँस की लकड़ी का छप्पर खड़ा करते हैं तथा इसकी उँचाई इतनी होनी चाहिए ताकि आदमी आराम से पानी दे सके।

केंचुआ खाद बनाने का कार्य चरण :

औद्योगिक स्तर पर केंचुआ खाद तैयार करने की निम्नलिखित दो विधियाँ हैं :

(1) वीन्डरोज विधि, (2) मडयुलर विधि

चूँकि मडयुलर विधि में एक बना हुआ बक्सा खरीदने की जरूरत पड़ता है अत: यह विधि खर्चीला होने के कारण आम किसानों के लिए उपयोगी नहीं है। वीन्डरोज विधि किफायती होने के कारण अधिक लोकप्रिय है जिसका वर्णन नीचे किया गया है।

चरण एक : सेड का नीचे जमीन को समतल बनाकर इसे भींगाकर सड़ने वाला पदार्थ रखा जाता है।

चरण दो : पहला सतह, धीरे-धीरे सड़ने वाला पदार्थ जैसे नारियल का छिलका, केले का पत्ता या छोटे टुकड़ों में कटा बाँस से तैयार किया जाता है। इसकी सतह की मोटाई लगभग 3'' से 4'' होना आवश्यक है। इस सतह को बेड कहा जाता है क्योंकि कठिन समय पर केंचुआ इसे घर के रूप में इस्तेमाल करता है।

चरण तीन : दूसरा सतह भी करीब 3'' से 4'' मोटा होता है जो कि बेडिंग पदार्थ के उपर डाला जाता है। इस सतह में मुख्यत: आधा सड़ा हुआ गोबर का इस्तेमाल किया जाता है ताकि सड़ने के समय पदार्थ में ज्यादा गर्मी पैदा ना हो। अगर पदार्थ में नमी की कमी हो तो हर सतह में पानी का छिड़काव करना आवश्यक है।

चरण चार : दूसरे सतह के ऊपर हल्का से केंचुआ को रखा जाता है। एक वर्ग मीटर जगह के लिए 250 केंचुआ की जरूरत है। केंचुआ को छोड़ने के पश्चात् बहुत जल्दी दूसरे सतह के नीचे घुस जाता है क्योंकि ये अपने को बाहर में खुला रखना पसन्द नहीं करता है।

चरण पाँच : छोटे टुकड़ों में कटा हुआ हरा या सूखा जैविक पदार्थ को गोबर में (50:50) मिलाकर आखिरी सतह के रूप में दिया जाता है। यह सतह करीबन 4''-5'' मोटा होता है। इस तरह ढेर की ऊँचाई करीब 1-1.5 फुट हो जाता है।

चरण छ: : आखिरी सतह को जूट के कपड़े से ढ़क दिया जाता है। पूरा ढेर को ढकना आवश्यक है। फटा हुआ जूट का बोरा इस काम में इस्तेमाल किया जा सकता है।

बोरा के ऊपर नियमित रूप से पानी का छिड़काव आवश्यक है। नमी 70 से 80 प्रतिशत बना रहना चाहिए।

चरण सात : जब केंचुआ खाद बन जाए तो इसमें पानी का छिड़काव बन्द कर देना चाहिए तथा उसे सूखने देना चाहिए। इसके ऊपर गोबर का एक पतला परत देना चाहिए। सारे केंचुआ इस परत में आ जाते हैं। तत्पश्चात् इन केंचुओं को ऊपर के परत समेत इकट्ठा कर लेते हैं।

चरण आठ : ऊपर के दो स्तरें को केंचुआ खाद के रूप में इकट्टा कर लिया जाता है। बेड को सुरक्षित रखा जाता है तथा पुराने बेड के ऊपर दूसरी खेप की तैयारी पहले चरण से शुरू करते हैं।

केंचुआ खाद को रखने का तरीका

इस खाद को छाया में सुखाकर नमी को कम कर दिया जाता है, इससे यह रखने योग्य हो जाता है। सूखने के पश्चात् खाद को बोरा में एक साल की अवधि तक रखा जा सकता है। केंचुआ खाद का इस्तेमाल करते समय यह ध्यान में रखना चाहिए कि खेत में किसी तरह का रासायनिक खाद तथा किसी प्रकार के दवा का इस्तेमाल न हो। यह अनुमान है कि केंचुआ को खिलाये जाने वाले कचरे का 40 प्रतिशत केंचुओं द्वारा कम्पोस्ट में परिवर्तित कर दिया जाता है और केंचुओं की संख्या पहले से दोगुनी हो जाती है। इस प्रक्रिया को लगातार करने से पूरे वर्ष कम्पोस्ट तैयार किया जा सकता है।

वर्मी कम्पोस्ट से आर्थिक लाभ

यह अनुमान है कि केंचुओं को खिलाये जाने वाले कचरे का 40 प्रतिशत केंचुओं द्वारा कम्पोस्ट में परिवर्तित कर दिया जाता है और केंचुओं की संख्या पहले से दोगुनी हो जाती है। इस प्रक्रिया को लगातार करने से पूरे वर्ष कम्पोस्ट तैयार किया जा सकता है। एक चक्र में उत्पादक को लगभग 10,000 रुपये का लाभ होता है।

▲▲▲

सब्जी उत्पादन, भंडारण एवं मूल्यवर्द्धन की उन्नतशील तकनीक

डॉ. रणवीर सिंह

बागवानी एवं कृषि-वानिकी शोध कार्यक्रम (हार्प), प्लाण्डू, राँची - 8340010 (झारखण्ड)

खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर होने के साथ ही अब संतुलित पोषण की आवश्यकता को महत्त्व दिया जाने लगा है। भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में जहाँ शाकाहार को महत्त्व दिया जाता है, सब्जियों का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। कुल जनसंख्या के आधार पर संतुलित पोषण की दृष्टि से सब्जियों का उत्पादन देश में काफी कम है। इसे उन्नत उत्पादन तकनीकों द्वारा बढ़ाने की अपार संभावनाएं हैं। अन्य फसलों की तुलना में सब्जियों की खेती से प्रति इकाई क्षेत्रफल अधिक आमदनी प्राप्त होती है।

उन्नत किस्में

विभिन्न सब्जियों की क्षेत्र के लिए उपयुक्त एवं अधिक पैदावार देने वाली किस्में तालिका-1 में दी गई हैं -

तालिका-1 : सब्जियों की अनुशंसित किस्में

फसल	क्षेत्र के लिए अनुशंसित किस्में
बैंगन	स्वर्ण श्री, स्वर्णमणि, स्वर्ण प्रतिभा, स्वर्ण श्यामली, अर्का केशव, अर्का निधि, पंत ऋतुराज, पंत सम्राट, पूसा क्रान्ति, नरेन्द्र हाईब्रीड-2, पूसा हाईब्रीड-6
टमाटर	स्वर्ण वैभव, स्वर्ण नवीन, स्वर्ण लालिमा, पूसा शीतल, बी.टी.-17, बी.टी.-20.2.1, एन.डी.टी.-3, शक्ति, अर्का आभा, सी.एच.आर.टी.-4, सी.एच.डी.टी.-1, अर्का वरदान, पूसा हाईब्रीड-1, के.एस.-118, एन.डी.टी-8ए, सी.एच.डी.टी-2
फुलगोभी	क) अर्ली कुंवारी, (ख) पूसा अर्ली सिन्थेटिक, पूसा दीपाली, पूसा कातकी (ग) पंत शुभ्रा, पूसा शुभ्रा, पूसा सिन्थेटिक, (घ) पूसा स्नो बॉल, पूसा स्नो बॉल के.-1, स्नो बॉल-16, पूसा हाईब्रीड-2
बंदगोभी	क) ग्रीन एक्सप्रेस, आई.ए.एच.एस.-5, गोल्डेन एकर, प्राईड ऑफ इन्डिया, पूसा मुक्ता
	ख) पूरा ड्रमहेड, अर्ली ड्रमहेड, लेट ड्रमहेड, सुवर्णा (बी.एस.एस.-115), श्री गणेश गोल
फ्रांसबीन (झाड़ीदार)	स्वर्णप्रिया, अर्का कोमल, पंत अनुपमा, कंटेडर
फ्रांसबीन (लत्तीदार)	स्वर्णलता, बिरसा प्रिया
भिण्डी	अर्का अनामिका, अर्का अभय, परभनी क्रांति, वर्षा उन्नत, वर्षा उपहार
मटर	अर्केल, आजाद मटर-1, आजाद मटर-3, बोनबिले, वी.एल.अगेती मटर-7, विवेक-6
परवल	स्वर्णरेखा, स्वर्ण अलौकिक
लोबिया	अर्का गरिमा, पूसा फाल्गुनी, पूसा दो फसली
प्याज	अर्का निकेतन, अर्का कल्याण, पूसा माधवी, नासिक रेड, पटना रेड, अर्का कीर्तिमान, अर्का लालिमा
मिर्च	अर्का लोहित, पूसा ज्वाला, पंजाब लाल, भाग्य लक्ष्मी, आन्ध्र ज्योति, बी.एस.एस.-141, बी.एस.एस.-138
शिमला मिर्च	अर्का गौरव, अर्का मोहिनी, बुलनोज, कैलिफोर्निया वन्डर, भारत

तालिका-1 जारी

कोहड़ा	अर्का सूर्यमुखी, अर्का चन्दन, पूसा विश्वास
करेला	अर्का हरित, प्रिया, कल्याणपुर सोना, एन.सी.-84, पूसा हाईब्रीड-1
खीरा	स्वर्ण पूर्णा, स्वर्ण अगेती, स्वर्ण शीतल, पूसा संयोग
नेनुवा	पूसा चिकनी, सतपूतिया
तरबूज	अर्का मणिक, अर्का ज्योति, सुगर बेबी
लौकी	अर्का बहार, पूसा समर, प्रोलिफिक लोंग, पूसा समर प्रालिफिक राउंड, पूसा मेंघदूत, पूसा मंजरी,
झींगी	स्वर्ण मंजरी, स्वर्ण उपहार, पूसा नसदार, पूसा सुप्रिया
मूली	अर्का निशान्त, जापानी सफेद, पूसा हिमानी, पूसा रश्मि
गाजर	अर्ली नेन्टिस, पूसा केसर
पालक	पूसा ज्योति, आल ग्रीन
मैंथी	पूसा अर्ली बन्चिग, कसूरी

भूमि का चुनाव एवं तैयारी

सब्जी उत्पादन हेतु अच्छी उर्वरता वाली जैव पदार्थ युक्त मिट्टी का चुनाव करना चाहिए। भूमि की 3-4 बार जुताई करके पाटा लगाकर समतल कर लें। सिंचाई की व्यवस्था के अनुसार उचित आकार की क्यारियां बनायें।

बुआई/ रोपाई का समय

विभिन्न सब्जियों के लिए बुआई का समय मौसम के अनुसार अलग-अलग होता है। अनुकूल अवधि में फसल उगाने पर अधिकतम पैदावार प्राप्त होती है। जबकि समय से पूर्व या देरी से बुआई/रोपाई करने से फसल पर कुप्रभाव पड़ता है। विभिन्न सब्जियों की बुआई/रोपाई का उचित समय तालिका-2 में दर्शाया गया है।

लत्ती वाली सब्जियों जैसे कोंहड़ा, करेला, खीरा, नेनुवा, तरबूज, लौकी, झींगी की अगेती फसल लेने के लिए पालिथीन की थैलियों में सड़ी हुई गोबर की खाद तथा मिट्टी की बराबर मात्रा से बने मिश्रण को भरकर बीज बोयें। थैलियों को धूप वाले स्थान पर रखें तथा पारदर्शी पालिथीन की चादर से ढ़क दें। छः से आठ सप्ताह में पौधे रोपाई योग्य हो जाते हैं। इनकी थालों में उचित दूरी पर रोपाई की जा सकती है।

बीज की मात्रा

अनुशंसित मात्रा में बीज का उपयोग करने से पैदावार में वृद्धि होती है। जबकि आवश्यकता से अधिक अथवा कम मात्रा में बीज का प्रयोग उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। विभिन्न सब्जियों के लिए मौसम के अनुसार अनुशंसित बीज की मात्रा तालिका-2 में दी गई है।

बुआई/ रोपाई की दूरी

बुआई/रोपाई की दूरी फसल अथवा किस्म एवं मौसम के अनुसार रखी जानी चाहिए। अधिक बढ़ने वाली किस्मों के लिए कम बढ़ने वाली किस्मों की अपेक्षा पौधों तथा कतारों के बीच अधिक दूरी रखने की आवश्कता होती है। अनुशंसित दूरी से कम अथवा अधिक दूरी रखने पर पैदावार पर प्रतिकूल असर पड़ता है।

विभिन्न सब्जियों के लिए मौसम के अुनसार बुआई/रोपाई की अनुशंसित दूरी तालिका-2 में दी गई है।

तालिका-2 : विभिन्न सब्जियों के उत्पादन हेतु अनुशंसित बुआई/ रोपाई का समय, उपयुक्त दूरी तथा बीज का मात्रा -

फसल	बुआई/ रोपाई	बीज की मात्रा/ हे.	बुआई/ रोपाई की दूरी (सेमी.)
बैंगन	जुलाई-अगस्त	300-400 ग्रा.	75 x 60
टमाटर	सितम्बर	500-600 ग्रा.	60 x 45
फूलगोभी	क) अप्रैल-मई	600-700 ग्रा.	45 x 30
	ख) जून-जुलाई	600-650 ग्रा.	45 x 30
	ग) अगस्त-सितम्बर	500-600 ग्रा.	45 x 45
	घ) अक्टूबर-दिसम्बर	350-400 ग्रा.	60 x 45
बंदगोभी	क) सितम्बर-अक्टूबर	500-600 ग्रा.	45 x 30
	ख) नवम्बर-दिसम्बर	400-500 ग्रा.	60 x 45
फ्रांसबीन (झाड़ीदार)	सितम्बर-अक्टूबर	80-100 किग्रा.	40 x 10
फ्रांसबीन (लतीदार)	जून-जुलाई	60-70 किग्रा.	75 x 10
भिण्डी	जून-जुलाई	8-10 किग्रा.	40 x 20
मटर	अक्टूबर-नवम्बर	70-80 किग्रा.	30 x 5
लोबिया	जून-जुलाई	15-20 किग्रा.	40 x 10
प्याज	दिसम्बर-जनवरी	8-10 किग्रा.	20 x 10
मिर्च	अगस्त-सितम्बर	600-700 ग्रा.	45 x 30
शिमला मिर्च	अगस्त-सितम्बर	600-700 ग्रा.	45 x 30
कोंहड़ा	दिसम्बर	6-7 किग्रा.	250 x 125
करेला	दिसम्बर-जनवरी	5-6 किग्रा.	100 x 75
खीरा	दिसम्बर-जनवरी	4-5 किग्रा.	150 x 75
नेनुवा	दिसम्बर-जनवरी	5-6 किग्रा.	150 x 100
तरबूज	दिसम्बर	3-4 किग्रा.	200 x 125
लौकी	दिसम्बर	6-7 किग्रा.	250 x 125
झींगी	दिसम्बर-जनवरी	5-6 किग्रा.	150 x 75
मूली	अक्टूबर-दिसम्बर	10-12 किग्रा.	30 x 5
गाजर	नवम्बर-दिसम्बर	5-6 किग्रा.	30 x 5
पालक	अक्टूबर/नवम्बर-दिसम्बर	25-30 किग्रा.	30 (लाईनों में)
मैंथी	नवम्बर-दिसम्बर	20-25 किग्रा.	30 (लाईनों में)

उर्वरीकरण

विभिन्न सब्जियों के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता अलग-अलग होती है। भूमि में पर्याप्त मात्रा में जैव पदार्थ उपलब्ध न होने पर यह अत्यन्त आवश्यक है कि उचित मात्रा में गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट (20-25 टन/हे.) का प्रयोग किया जाय। इसके प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है साथ ही उसकी जलधारण क्षमता बढ़ जाती है। खेत में हरी खाद अथवा खल्ली का प्रयोग करने से भी वांछित लाभ होता है। विभिन्न सब्जियों के लिए अनुशंसित उर्वरीकरण हेतु जानकारी तालिका-3 में दी गई है -

तालिका-3 : सब्जियों के लिए अनुशंसित उर्वरक की मात्रा -

फसल	नेत्रजन (किग्रा./हे.)	फास्फोरस (किग्रा./हे.)	पोटाश (किग्रा./हे.)
बैंगन	120	80	60
टमाटर	120	60	60
फूलगोभी	150	75	50
	175	75	50
	200	100	60
	225	100	60
बंदगोभी	200	80	60
	250	100	60
फ्रांसबीन (झाड़ीदार)	120	50	60
फ्रांसबीन (लतीदार)	75	50	50
भिण्डी	120	80	60
मटर	80	60	60
लोबिया	60	50	50
प्याज	80	60	80
मिर्च	60	50	50
शिमला मिर्च	60	100	50
कोंहड़ा	50	60	50
करेला	50	60	50
खीरा	50	40	40
नेनुवा	50	60	50
तरबूज	80	100	60
लौकी	50	60	50
झींगी	50	60	50
मूली	50	60	50
गाजर	60	50	75
पालक	60	40	40
मैंथी	60	40	40

देख-रेख

नियमित निकाई-गुड़ाई करने से फसल में खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है। इन क्रियाओं के करने से भूमि में वायुसंचार होता है तथा पौधों की उचित वृद्धि होती है। फसल की मांग एवं मौसम के अनुसार नियमित रूप से सिंचाई की व्यवस्था होनी चाहिए।

विकासशील देशों जैसे भारत में कुल सब्जी उत्पादन का 25 प्रतिशत तक तुड़ाई उपरान्त की विभिन्न अवस्थाओं में खराब हो जाता है। जिससे प्रति व्यक्ति सब्जियों की उपलब्धता और भी कम हो जाती है। अनुमान के अनुसार ये हानि सब्जियों की कटाई, परिवहन, भण्डारण, परिरक्षण एवं विक्रय आदि अवस्थाओं के मध्य होते हैं।

तुड़ाई के पश्चात् सब्जियों में आने वाले परिवर्तन :

1. श्वसन : तुड़ाई के पश्चात् भी सब्जियों की श्वसन क्रिया पूर्ववत् चलती रहती है जो समय बीतने के साथ-साथ कम हो जाती है।
2. रंग : कटाई के पश्चात् सब्जियों के रंग में परिवर्तन होना स्वाभाविक है, यह काफी सीमा तक भण्डारण के समय, तापमान एवं नमी पर भी निर्भर करता है।
3. गठन : अधिक तापमान पर सब्जियाँ जल्दी मुलायम होने लगती है ऐसा उनके अन्दर स्थित नमी में कमी आने के कारण होता है।
4. शर्करा एवं कार्बोहाइड्रेड में कमी : सब्जियों में तुड़ाई के पश्चात् शर्करा का कमी आना स्वाभाविक है चूंकि श्वसन क्रिया जारी रहती है।
5. अन्य रासायनिक परिवर्तन : एन्जाइमस, विटामिन तथा वसा की मात्रा में परिवर्त्तन होता है।

कटाई उपरान्त रख-रखाव

सब्जियों की कटाई के समय प्रमुख रूप से दो बातों का विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता होती है :

1. कटाई के समय सब्जी की गुणवत्ता उत्तम होनी चाहिए।
2. कटाई के समय सब्जी अपनी उच्चतम परिपक्वता पर होनी चाहिए।

दूर के बाजारों में भेजने हेतु सब्जियाँ रेल, सड़क, वायु तथा समुद्री मार्गों से भेजी जाती है। जिसमें काफी खर्च आता है। अतः जरूरी है कि उत्पाद अच्छे गुणयुक्त हो अर्थात् वह बीमारी से ग्रसित, चोट लगा हुआ, दाग युक्त नहीं होनी चाहिए। कटाई के समय उचित परिपक्वता का होना भी आवश्यक है।

गुणवत्ता में कमी आने के कारण

उत्पाद में नमी का ह्रास, फफूंदी द्वारा सड़न, बाहरी चोट, अधिक तापमान, आवश्यकता से कम तापमान, अच्छी पैकिंग का अभाव, उठाने एवं रखने में उदासीनता, गन्तव्य स्थान तक पहुँचने में देरी आदि उत्पाद की गुणवत्ता में कमी होने के लिए जिम्मेदार है।

कटाई उपरान्त होने वाली हानि को कम करने हेतु उपाय

1. कटाई उपरान्त सब्जियों को ठंडा करना : अनुसंधानों द्वारा यह बात सिद्ध हो चुकी है कि सब्जियों की कटाई के पश्चात् उन्हें ठंडा करना आवश्यक है। इस क्रिया से उत्पाद की गर्मी को कम कर सकते हैं जिससे परिवहन में होने वाली हानि से काफी सीमा तक बचा जा सकता है। जहाँ तक संभव हो सब्जियों को सुबह के समय तापमान बढ़ने से पूर्व ही काटा जाना चाहिए।
2. पैकिंग : गन्तव्य की दूरी, परिवहन के प्रकार, सब्जियों द्वारा श्वसन में उत्पन्न तापमान, परिवहन में होने वाली नमी का ह्रास एवं उत्पाद में हानि की संभावना पर पैकिंग की किस्म निर्भर करती है। उदाहरण के लिए लकड़ी के बक्से अच्छी वायु संचार की स्थिति प्रदान कर सकते हैं एवं मजबूती के दृष्टि से उत्तम हैं लेकिल वजनी तथा खर्चीले हो सकते हैं। कार्डबोर्ड इन समस्याओं को देखते हुए उत्तम होगा।
3. पैकिंग स्थान की दशा : पैकिंग कार्य करने का स्थान स्वच्छ एवं हवादार होना चाहिए अन्यथा पानी की मात्रा बढ़ने पर उत्पाद में सड़न पैदा हो सकती है।

4. उत्पाद में नमी के ह्रास को कम करना : नमी बनाये रखने का लाभ सब्जियों के भार पर भी होता है। इस हेतु विभिन्न प्रकार की उपलब्ध पैकिंग सामग्री का उपयोग किया जा सकता है। विभिन्न सब्जियों के भंडारण हेतु अनुशंसित तापमान, प्रतिशत नमी की मात्रा तथा भंडारण की अवधि तालिका-4 में दी गई है।

तालिका-4 : सब्जियों के भंडारण हेतु अनुशंसित तापमान, नमी का दिशा एवं भंडारण की संभावित अवधि

क्र.	सब्जी	भंडारण हेतु तापमान (°फा.)	नमी की दशा (%)	भंडारण समय
1.	पत्तागोभी	32	90-95	3-4 सप्ताह
2.	फूलगोभी	32	90-95	2-3 सप्ताह
3.	बैंगन	45-50	90-95	8-10 दिन
4.	गाजर	32	90-95	4-5 दिन
5.	सेम	45	85-90	8-10 दिन
6.	खीरा	45-50	85-95	10-12 दिन
7.	भिण्डी	50	70-75	10-12 दिन
8.	प्याज	32	70-75	6-8 महीना
9.	मटर	32	85-90	10-12 दिन
10.	आलू	38-40	85-90	6-9 महीना
11.	टमाटर	40-50	85-90	7-10 दिन

प्राय: बहुतायत समय किसान को अपनी उपज कम दामों पर बेचनी पड़ती है। अगर सब्जी परिरक्षण को छोटे पैमाने पर अपनाया जाय तो विभिन्न पदार्थ निर्मित कर उन्हें पूरे साल उपभोग में लाया जा सकता है। साथ ही इस समय होने वाली हानि से बचा जा सकता है। विकसित देशों में कुल उत्पाद का 20 प्रतिशत तक भाग परिरक्षित कर उपभोग में लाया जाता है वहीं भारत में यह मात्र 0.5-2.0 प्रतिशत के मध्य सीमित है। अत: परिरक्षण को कुटीर उद्योग के रूप में अपनाया जाना चाहिए। विभिन्न सब्जियों से निम्न पदार्थ जैसे - जैम, चटनी, अचार, मुरब्बा आदि आसानी से बनाये जा सकते हैं।

सब्जियों को परिरक्षित करने हेतु प्रचलित विधियाँ

खरबूजे का जैम :

खरबूजे के पके फलों को छीलकर टुकड़ों में काट लें। टुकड़ों के वजन के आधार पर 3/4 भाग चीनी डालकर पकायें और जब तापमान 105° सेल्सियस पर पहुँच जाए तो उतार लें। चौड़े मुख वाली बोतलों में भरकर रखें। अधिक दिन तक संरक्षण हेतु 0.02 प्रतिशत सोडियम बेनजोयेट अलग पानी में घोलकर मिलायें। बोतलों को पानी में आधा घण्टा तक उबाल कर प्रयोग में लायें। बाद में मोम से सील करें। अधिक मीठे फलों में 3-4 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. की दर से साइट्रिक एसिड प्रयोग करें।

टमाटर के रस का संरक्षण :

टमाटर के रस को बोतलों में कई सालों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इसके लिए टमाटर के फलों को काटकर एवं गर्म करके रस निकालें। प्राप्त रस को गर्म करें और खौलने से पूर्व उतार लें। स्वाद के लिए संतुलित मात्रा में चीनी एवं नमक का प्रयोग करें। रस को लम्बे समय तक सुरक्षित रखने के लिए सोडियम बेंजोयट नामक परिरक्षी का 0.02 प्रतिशत की दर से प्रयोग करें।

टमाटर कैचप :

पूर्ण पके टमाटर के फलों को धोकर छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लें। थोड़ी देर गर्म करें और रस निकालें एवं अच्छी तरह छान लें। जिससे छिलका एवं बीज न रहे।

कैचअप बनाने के लिए इस प्रकार सामग्री की आवश्यकता होती है – रस 10 ली., प्याज 250 ग्राम, लहसुन 20 ग्राम, लौंग 10 ग्राम, इलाइची 5 ग्राम, बड़ी इलायची 10 ग्राम, दालचीनी 5 ग्राम, लाल मिर्च 5 ग्राम, नमक 100 ग्राम, चीनी 500 ग्राम, सिरका 500 मिली ली., या एसिटिक एसिड 10 मिली.। सभी मसालों को कुचल कर बारीक कपड़े की पोटली बनायें एवं रस में डुबो दें। रस को उबालते रहें एवं आधी चीनी एवं सिरका मिला दें। जब रस गाढ़ा होकर 1/3 हिस्सा रह जाये जो कैचप तैयार हो जाता है। इसमें 0.02 प्रतिशत की दर से सोडियम बेंजाएट अलग से पानी में घोलकर मिलायें तथा बोतलों में भरें। मोम से बोतलों को सील कर दें।

नमक के घोल में सब्जियों का परिरक्षण

गोभी, शलजम, मूली, मटर इत्यादि सब्जियों के परिरक्षण का यह बहुत ही सस्ता एवं सरल तरीका है। मटर के दानों के परिरक्षण हेतु फलियों से दाने निकाल लें। नमक का घोल निम्न प्रकार बनायें। पानी 1 लीटर, नमक 50 ग्राम, पोटाशियम मेटा बाइसल्फाइट 1 ग्राम, ऐसिटिक एसिड 12 मि.ली.। प्राय: सब्जी की दुगनी मात्रा में घोल का व्यवहार होता है। जबकि मटर के परिरक्षण में दानों की बराबर मात्रा में घोल लगता है। चौड़े मुँह की शीशी में सब्जी डालकर घोल को मुँह तक भरें। शीशी के मुँह पर रुई लगाकर ऊपर से मोम की परत डालकर ढक्कन बंद करें। आवश्यकतानुसार सब्जी निकालकर 3-4 घंटा पानी में रख कर धो लें। शीघ्र प्रयोग हेतु गर्म पानी में खर्च आता है। विभिन्न सब्जियों से निर्मित पदार्थों की सूची तालिका-5 में दी जा रही है –

तालिका-5 : विभिन्न सब्जियों से बनाये जाने वाले संरक्षित पदार्थ

क्र.सं.	सब्जी का नाम	निर्मित पदार्थ
1.	टमाटर	जैम, चटनी, प्यूरी, जूस, अचार, डिब्बाबंदी
2.	फुलगोभी	अचार, चटनी, बोतलबंदी
3.	हरी मिर्च	सॉस, अचार
4.	अदरक	जिंजरेल, मुरब्बा, कैंडी, अचार, चटनी, जिंजर, टॉनिक
5.	लहसुन	सॉस, अचार
6.	प्याज	सिरकायुक्त अचार
7.	लाल मिर्च	अचार
8.	मटर	अचार, बोतलबंदी
9.	करेला	अचार, सुखाना, बोतलबंदी
10.	ओल	अचार, चटनी
11.	शलजम	अचार
12.	परवल	केंडी, मुरब्बा, बोतलबंदी
13.	खीरा	अचार, बोतलबंदी
14.	ककड़ी	अचार, बोतलबंदी
15.	गाजर	मुरब्बा, हलवा, अचार, बोतलबंदी
16.	पेठा	मुरब्बा, कैंडी
17.	लौकी	बरफी, कैंडी, चटनी

▲▲▲

सब्जी उत्पादन तकनीक

डॉ. कमल किशोर प्रसाद

उद्यान विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

सब्जी उत्पादन बढ़ाने के दो उपाय हो सकते हैं। पहला सब्जी के अन्तर्गत क्षेत्र को बढ़ाना तथा दूसरा उत्पादकता को बढ़ाना। वर्त्तमान समय में शहर के आस-पास के कीमती उपजाऊ जमीन निर्माण कार्य के उपयोग में लाए जा रहे हैं। ये क्षेत्र मुख्य रूप से सब्जी उत्पादन के ही क्षेत्र रहे हैं। इस तरह से खेती योग्य जमीन में कमी आ रही है। सब्जी के अन्तर्गत उत्पादन के क्षेत्र को सीमित मात्रा में ही बढ़ाया जा सकता है। जाहिर है उत्पादकता को बढ़ाना ही अधिक कारगर उपाय हो सकता है। उत्पादकता बढ़ाने एवं कुछ नए तरीके अपनाने से सब्जी उत्पादन बढ़ सकता है।

किचेन गार्डेन में सब्जी उगाना

घर के आस-पास घर के सदस्यों द्वारा घर के उपयोग के लिए सब्जी एवं फल का उत्पादन करना किचेन गार्डेन के अन्तर्गत आता है। आरंभ में सब्जी की खेती अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए घर के आस-पास ही शुरु हुई होगी। आज के संदर्भ में भी यह उतना ही महत्त्पूर्ण है जितना पहले रहा होगा। एक जवान आदमी को 300 ग्राम सब्जी की प्रतिदिन आवश्यकता होती है। पाँच आदमी के परिवार के लिए डेढ़ किलो सब्जी की प्रतिदिन आवश्यकता होगी। 25-30 मीटर लम्बे तथा 10-15 मीटर चौड़े क्षेत्र में किचेन गार्डेन बनाने से एक परिवार की सब्जी की आवश्यकता की पूर्ति हो जाएगी।

सब्जी उत्पादन में अविवेकपूर्ण ढ़ंग से कीटनाशक एवं अन्य रासायनिक दवाओं का इस्तेमाल किसानों द्वारा की जा रही है। इन विषैले रसायन का कुछ न कुछ अंश सब्जी के द्वारा मानव शरीर में जमा हो रहा है। इसके कई दुष्परिणाम बीमारी के रूप में सामने आ रहे हैं। ताजी एवं सुरक्षित सब्जियों के लिए किचेन गार्डेन में सब्जी उत्पादन एक सुरक्षित उपाय है।

गमला, बक्सा, बोरा तथा छत पर सब्जी उगाना

शहरी आबादी में जमीन उपलब्ध नहीं होता है, लेकिन अगर सब्जी उगाने का शौक है तो गमला में भी खेती कर सकते हैं। बक्सा या अन्य कंटेनर अथवा बोरा में मिट्टी भर कर भी सब्जी उगा सकते हैं। बक्सा या बोरा में नीचे पानी निकालने के लिए दो-चार छेद कर देना चाहिए तथा एक भाग कम्पोस्ट तथा एक भाग मिट्टी के मिश्रण से भरकर बीज की बोआई अथवा रोपाई करनी चाहिए। गमला में आधार में पानी निकलने के लिए छेद बना रहता है। आधार में बर्तन या कंकड़ के छोटे-छोटे टुकड़ों को दो इंच तक डाल दें ताकि छेद बद न हो तथा पानी आसानी से निकल जाये।

गमला में ऐसी सब्जियों को लगायें जिसमें अधिक संख्या में फल मिलता हो। मिर्च, टमाटर, बैंगन इस तरह क सब्जियाँ हैं। एक गमला में मूली के आकार के अनुसार 8-10 बीज की बुआई कर सकते हैं। उसी तरह धनिया, मेथी या अन्य पत्तीदार सब्जियों को भी लगाया जा सकता है। फूलगोभी एंव बंदगोभी लगाना उपयुक्त नहीं होगा। बरसात के दिनों में खीरा, नेनुआ, झिंगनी एवं करैला को गमला में लगाकर छत पर रफ गार्डेन के रूप में सब्जी उगाया जा सकता है, इसके लिए स्टैंड बनाकर या छत को वाटरपप्रूफ बनाकर मिट्टी भरकर खेती की जा सकती है। छत पर मोटा पोलिथिन शीट बिछाकर तथा मिट्टी भरकर सब्जी बीज की बुआई कर सकते हैं। इसमें पानी निकास पर विशेष ध्यान देना होगा ताकि फालतू पानी एक तरफ जमा होकर निकले तथा छत को पानी से हानि न हो।

सब्जी के उन्नत किस्मों को लगाना

विविध सब्जियों में अधिक उपज देनेवाली किस्में उपलब्ध हैं। टमाटर, बैंगन में अनगिनत किस्में हैं। पूसा रुबी, पंतबहार, पंजाब छोहाड़ा, पूसा उपहार, पंजाब केसरी, रोगा, सेलेक्शन 120 इत्यादि टमाटर की उन्नत किस्में हैं। बैंगन में आजाद क्रांति, पूसा परपल लोंग, पूसा अनुपम, स्वर्ण श्यामली, स्वर्ण प्रतिभा, पूसा उपकार हैं। मिर्च में एन.पी. 46, पूसा ज्वाला, पूसा सदाबहार एवं भाग्य लक्ष्मी, प्याज में पूसा रेड, पूसा रतनार, पूसा माधवी, एग्रीफाउंड डार्क रेड, एन-53; मटर में अरकेल, पूसा प्रगति, पी.एम. 113 एवं आजाद पी; नेनुआ की पूसा चिकनी, पूसा सुप्रिया तथा पूसा स्नेहा, झिंगनी की पूसा नसदार, स्वर्ण मंजरी; कद्दू की पूसा नवीन, पूसा संदेश,

पंजाब कोमल; तरबूज की सुगर बेबी, एवं अरका मानिक; खीरा की जमानिज लोंग ग्रीन, पूसा संयोग; करैला की पूसा विशेष, अरका हरित एवं कोयम्बटूर लोंग ग्रीन एवं मूली की पूसा रेशमी, जपानिज हवाइट तथा शिमला मिर्च के कैलिफोर्निया वंडर, येलो वंडर, अरका मोहिनी, अरका बसंत इत्यादि उन्नत किस्में हैं। पालक की पूसा ज्योति, पूसा भारती एवं अमरैंथस की पूसा कीर्ति, पूसा किरण इत्यादि अच्छी उपज देने वाली किस्में हैं। फ्रेंचबीन की केंटूकी वंडर, स्वर्णलता (पोल टाइप) तथा अरका कोमल, कंटेडर, पंत अनुपमा एवं पूसा पार्वती (झाड़ीदार) तथा लोबिया की पूसा कोमल, पूसा बरसाती अच्छी किस्में हैं।

संकर किस्मों को लगाना

सब्जियों में संकर किस्मों का बड़े पैमाने पर लगाया जा रहा है। बाजार में कई बीज कम्पनियाँ हैं जो संकर बीज उपलब्ध करा रही है। सरकारी क्षेत्र या अनुसंधान संस्थाओं द्वारा भी संकर बीज का उत्पादन किया जा रहा है। संकर किस्मों को लगाने से सब्जी उत्पादन में आशातित बढ़ोतरी हुई है। अधिक दाम के बावजूद किसान संकर बीज खरीद रहे हैं। विभिन्न सब्जियों के संकर किस्म नीचे दिए गए हैं -

टमाटर	-	पूसा संकर 1, पूसा संकर 2, पूसा संकर 4, अरका श्रेष्ठा, अरका अभिजीत
बैंगन	-	पूसा संकर 5, पूसा संकर 6, पूसा संकर 9, पूसा नवनीत, पूसा अनमोल
खीरा	-	पूसा संयोग
लौकी	-	पूसा मेंघदूत, पूसा मंजरी एवं पूसा संकर 3
करैला	-	पूसा संकर 2
फूलगोभी	-	पूसा संकर 2, श्वेता
मिर्च	-	के.टी. संकर-1

इसके अलावा प्राईवेट क्षेत्र से भी विविध संकर किस्में बाजार में उपलब्ध है।

बेमौसमी सब्जी उत्पादन

सब्जी उत्पादन में बेमौसमी सब्जियों का विशेष महत्त्व है। इससे ''ऑफ समय'' में सब्जी तो उपलब्ध होता ही है साथ ही साथ उत्पादकों को अच्छी आय भी होती है। प्याज की एन-53, एग्रीफाउंड डार्क रेड, अरका कल्याण एवं अरका निकेतन की खेती बरसात में भी की जा सकती है। इसी तरह अल्टीमस, कुफरी चन्द्रमुखी तथा कुफरी कुबेर आलू की किस्में बरसाती खेती के लिए उपयुक्त पायी गयी है। टमाटर में पूसा संकर-1 गर्मी में देर से खेती के लिए तथा पूसा शीतल को जाड़े में उगाने के लिए उपयुक्त पाया गया है। अरका आभा, अरका आलोक, स्वर्ण नवीन तथा स्वर्ण लालिमा टमाटर की किस्मों को बरसात में लगाया जा सकता है। फूलगोभी की अर्ली कुंवारी, मूली की पूसा चेतकी, बंदागोभी की पूसा अगेती किस्म की खेती गर्मी में की जा सकती है। पालक की पूसा भारती किस्म जाड़े के अलावा बसंत कालीन खेती के लिए भी उपयुक्त है।

अगात खेती करना

सब्जियों की अगात खेती करने से अधिक आय होती है। मटर की अरकेल प्रजाति को सितम्बर से लेकर दिसम्बर तक लगाते हैं। सितम्बर माह में बुआई करने से उपज तो कम होती है लेकिन बिक्रीदर अधिक रहने के कारण अच्छी आय हो सकती है। आरंभ में मटर लगभग 20 रुपये प्रति किलो के दर से खुदरा बिक्री होता है जो मुख्य मौसम में 4-5 रुपये किलो तक हो जाता है।

कद्दू वर्गीय सब्जियों को पोलिथिन बैग में बिचड़ा उगाकर एक डेढ़ माह अगात फसल ली जा सकती है। इसके लिए 15-20 सेंटीमीटर लम्बा तथा 8-10 सेंटीमीटर चौड़ा लिफाफा (पोलिथिन बैग) में एक भाग मिटट्‌ी तथा एक भाग कम्पोस्ट मिलाकर भरते हैं इन लिफाफों में पानी में फूले हुए बीज की बुआई दिसम्बर माह में (15 दिसम्बर) करते हैं। फव्वारे से सिंचाई करते हैं। बाँस (लगभग एक मीटर ऊँचा) तथा पोलीथिन चादर से एक झोपड़ीनुमा घर तैयार करते हैं। पोलीथिन बैग को एक माह तक पोलीथिन हाउस में रखकर बिचड़ा तैयार करते हैं। 15 जनवरी के लगभग तैयार बिचड़ों की रोपाई करते हैं। इसके लिए कम्पोस्ट एवं रसायनिक खाद के मिश्रण को देकर थाला तैयार करते हैं। पोलीथिन को थाला के पास ले जाते हैं, पालीथिन हो हटाते हैं तथा सावधानी से (पोलीथिन की मिट्‌टी टूटने न पावे) थाला में बिचड़े की रोपाई करते हैं। अगर एक बैग में एक ही पौध रहे तो प्रत्येक थाला में तीन

पौध की रोपाई करें। अगर पोलीथिन हाउस की सुविधा न हो तो पोलीबैग को ऐसी जगह में रखें जहाँ सुबह से शाम तक धूप आती है। धूप की गर्मी से बीज का अंकुरण हो जाएगा। इस विधि से मई में बिचड़ा उगाकर खरीफ में अगात खेती की जा सकती है। पोलीबैग को पोलीग्रीन हाउस में न रखकर चापाकल या कुआँ के पास रखकर बिचड़ा तैयार करें तथा वर्षा आरंभ होते ही पौधे की रोपाई करें।

उन्नत तकनीक से पौधा (बिचड़ा) तैयार करना :

नर्सरी में (पौधशाला) में स्वस्थ बिचड़ा तैयार करना सब्जी उत्पादन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। पौध तैयार करने में कुछ-कुछ तकनीक पर विशेष ध्यान दें।

1. बिचड़ा तैयार करने के लिए एक मीटर चौड़ा तथा पाँच मीटर लम्बा क्यारियाँ खुले स्थान पर बनायें। क्यारी को जमीन से थोड़ा ऊँचा रखें अच्छी तरह क्यारी को तैयार करें।
2. क्यारी के मिट्टी को एक लीटर पानी में एक ग्राम वेभिस्टीन दवा मिलाकर घोल बनावें तथा घोल में 20-25 सेंटीमीटर गहराई तक अच्छी तरह भिंगा दें।
3. प्रति वर्गमीटर क्यारी में 4-5 किलो कम्पोस्ट, 20-25 ग्राम यूरिया, 40-50 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट, 10-15 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश एवं 3 ग्राम कार्बोफुरान देकर बेड तैयार करें।
4. बुआई से पहले बीज का उपचार करें। इसके लिए प्रति किलो बीज में 2 ग्राम थीरम या एक ग्राम विभिस्टिन दवा बीज में अच्छी तरह मिला दें।
5. बुआई के लिए तैयार नर्सरी बेड में 6-8 सेंटीमीटर की दूरी पर आधा से एक सेंटीमीटर गहरा तथा उतना ही चौड़ा नाली बनायें। नाली में समान रूप से बीज बोआई करें। बीज को बारीक कम्पोस्ट से ढके, मिट्टी से न ढ़के तथा झरना से सिंचाई करें।
6. जाड़े के दिनों में खासकर बोआई के बाद बेड़ को सुखे पोआल या खरपतवार से ढ़क दें। इससे तापक्रम एवं नमी बनी रहेगी तथा अंकुरण ठीक होगा। अंकुरण होते ही पौआल को हटा दें।
7. दो बार नर्सरी बेड को एक लीटर पानी में 2 ग्राम इंडोफिल एम 45 दवा मिलाकर छिड़काव करें।
8. जब पौध 25-30 दिन का हो जाय तो दूसरी बेला में रोपाई करें। रापाई के एक सप्ताह पहले सिंचाई देना बंद कर दें लेकिन रोपाई के दिन क्यारी में पानी देकर बिचड़ा उखाड़ें।
9. टमाटर, बैंगन, मिर्च, शिमला मिर्च, फूलगोभी, बंधागोभी एवं प्याज के बिचड़े तैयार किए जाते हैं। बरसात के दिनों में प्लास्टिक टनेल में बिचड़ा उगाना ठीक रहता है ताकि वर्षा से पौध बर्बाद न हो। आरंभ में पौध को तेज धूप एवं वर्षा से बचाना चाहिए।

सब्जी उत्पादन में वृद्धि नियामक का उपयोग करना :

सब्जी उत्पादन में वृद्धि नियामक (PGR) एक महत्त्वपूर्ण भमिका निभा सकता है। इसका प्रयोग उपज बढ़ाने के साथ-साथ गुणवत्ता में भी वृद्धि करने के लिए किया जा सकता है।

1. टमाटर, बैंगन या मिर्च में फूल बनने के समय एक प्रतिशत यूरिया घोल के साथ 4-5 पी.पी.एम. 2.4 D दवा का छिड़काव करने से फूल का गिरना बंद होता है तथा अधिक फल लगते हैं। टमाटर की फसल जल्दी प्राप्त करने के लिए पैराक्लारों फिनौक्सी एसिड (PCPA) (20-25 पी.पी.एम.) अथवा 2, 4 D (4-5 पी.पी.एम.) का छिड़काव खड़ी फसल में करते हैं।
2. सब्जियों के बीज को (GA_3) जिब्रेलिक एसिड 10-12 पी.पी.एम. के घोल में 12 घंटा तक फुलाकर बुआई करने से अंकुरण एवं उपज में वृद्धि होती है।
3. जाड़े के दिनों में टमाटर में पकने की समस्या होती है। हरे फलों पर इथ्रेल (Ethrel) 250-500 पी.पी.एम. का छिड़काव करने से फल शीघ्रता से तथा एक समान पकते हैं।
4. हारभेसटिंग (खुदाई) के 15 दिन पहले सैलिक हाइड्राजाइड (एम.एच) 2500-3000 पी.पी.एम. का छिड़काव प्याज एवं आलू पर करने से स्टोरेज में अंकुरण की समस्या से छुटाकारा पाया जा सकता है।

5. कद्दू वर्गीय सब्जियों में वृद्धि नियामक का छिड़काव दो पत्तियाँ आने पर पहली बार तथा चार पत्तियाँ आने पर दूसरी बार करने से मादा फूल की संख्या में वृद्धि होने के कारण उपज में वृद्धि होती है। कोहड़ा, नेनुआ, खीरा, झिंगी में इथ्रेल 100-250 पी.पी.एम. करैला में साइकोसिल 250-50 पी.पी.एम., खरबुजा एवं तरबूज में जिब्रैलिक एसिड 10-25 पी.पी.एम का छिड़काव कर मादा फूल की संख्या को बढ़ाया जा सकता है।
6. सूखा के समय सब्जियों के पत्ते पर साइकोसील 250 पी.पी.एम का छिड़काव करने पर पौधों की सूखा सहन करने की क्षमता बढ़ जाती है।
7. भिंडी के पौधों को मोजैक से बचाने के लिए साइकोसील 10-500 पी.पी.एम. का छिड़काव करने से रोग की संभावना कम हो जाती है।

संतुलित मात्रा में खाद देना :

अधिक उपज के लिए संतुलित मात्रा में खाद देना आवश्यक है। सब्जियों में सड़ा हुआ गोबर अथवा कम्पोस्ट का व्यवहार अधिक करना चाहिए। एक हेक्टेयर में 200-250 क्विंटल कम्पोस्ट खेत तैयार करते समय दें। रसायन खाद में नाइट्रोजन, फास्फॉरस एवं पोटाश तीनों को देना चाहिए। विविध सब्जियों में अलग-अलग रसायनिक खाद की मात्रा की अनुशंसा की गई है। लेकिन आमतौर पर फूलगोभी, बंदागोभी, टमाटर, बैंगन एवं मिर्चा में यूरिया 200-250 किलो, सिंगल सुपरफॉस्फेट 300-350 किलो तथा म्यूरेट ऑफ पोटाश 90-100 किलो देते हैं। यूरिया को दो बार करके देते हैं। आधा खेत की अंतिम तैयारी के समय तथा शेष आधी मात्रा एक माह बाद टौप ड्रेसिंग के रूप में देते हैं। कम अवधि के फसल में रसायनिक खाद की मात्रा को कम करके दें। नीचे बैठने वाली सब्जियों में पोटाश की मात्रा को बढ़ा दें। छीगी वाली सब्जियों में (सेम, मटर, बोदी, फ्रेंचबीन) नाइट्रोजन बनाने की क्षमता होती है इसलिए इसमें यूरिया की मात्रा कम लेकिन फास्फोरस की मात्रा अधिक दें। आजकल डी.ए.पी. खाद का प्रयोग काफी किया जाता है। डी.ए.पी. में 18 प्रतिशत नेत्रजन (नाइट्रोजन) तथा 48 प्रतिशत फास्फोरस है लेकिन पोटाश नहीं है। इसलिए डी.ए.पी. का प्रयोग करते समय अलग से पोटाश मिलायें।

छोटानागपुर की जमीन अम्लीय है। अम्लीय जमीन में अम्लीयता के अनुसार चूना का प्रयोग करना चाहिए। तीन से चार क्विंटल प्रति हेक्टेयर के हिसाब से चूना का प्रयोग करना अधिकांशत: जमीन में लाभदायक होगा। करंज या नीम खल्ली 5-10 क्विंटल प्रति हेक्टेयर के दर से खेत तैयार करते समय देने पर उपज में वृद्धि होगी तथा रोग एवं कीड़े कम लगेंगे। अम्लीय जमीन में बोरन की कमी पायी जाती है। फूलगोभी, टमाटर एवं मटर में 10-15 किलो बोरेक्स देने पर उपज एवं गुणवत्ता में वृद्धि होगी।

बहुफसल प्रणाली

मिश्रित खेती, अंत: खेती, सहयोगी तथा रिले खेती :

मटर की अरकेल एवं पूसा प्रगति, लोबिया एवं फ्रेंचबीन की झाड़ीदार किस्में, पालक, धनिया की पत्तियाँ, मूली तथा अमरैंथस (चौलाई) कम समय में सब्जी के लिए उपलब्ध हो जाते हैं। इन्हें फसल चक्र में अपनाकर सालभर में कई फसल ली जा सकती है। छीगीदार सब्जियाँ मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती है इसलिए फसल चक्र में इन्हें अवश्य स्थान देना चाहिए।

1. गन्ने के फसल में रबी में मटर तथा गर्मी में भिन्डी एवं लोबिया को अन्त: फसल के रूप में उगाया जा सकता है।
2. मक्का के खेत में भी लोबिया (लत्तरवाली) झिंगनी, खीरा की खेती की जा सकती है।
3. आलू के फसल में तरबूज एवं खरबूजा के पौधों की रोपाई जनवरी में करके अगात फसल ली जा सकती है।
4. जड़वाली सब्जियाँ जैसे मूली, चुकंदर, शलजम, गाजर को अन्य सब्जियों के मेड़ पर बुआई कर अतिरिक्त उपज प्राप्त की जा सकती है।
5. फूलगोभी में धनिया अथवा सरसों (साग) को लगाया जा सकता है।
6. अप्रैल-मई में अदरक एवं हल्दी के साथ फूलगोभी की अरली कुंवारी किस्म की रोपाई की जा सकती है।

7. गाजर के साथ धनिया की खेती कर सकते हैं। धनिया की पौधों को उखाड़कर सब्जी में इस्तेमाल करते हैं तथा मुख्य फसल गाजर रह जाता है।

8. भिंडी एवं बैंगन में लोबिया तथा फ्रेंचबीन को अन्त: फसल के रूप में बुआई कर सकते हैं।

9. पत्तागोभी के साथ गाजर लगाने से डायमंड बैक मौथ नामक कीड़े का प्रकोप कम होता है।

10. टमाटर तथा पत्तागोभी की मिश्रित खेती (एक पंक्ति टमाटर की तथा एक पंक्ति पत्तागोभी की, पत्तागोभी को टमाटर रोपने के एक माह बाद रोपाई) करने से डायमंड बैक मौथ कम हानि का पहुँचाता है

11. फूलगोभी एवं पत्तागोभी में लहसुन तथा धनिया लगाने से कीड़े का प्रकोप कम होगा।

12. पत्तागोभी के किनारे के पंक्ति में मूली लगाने से लीफ वेबर तथा कैबेज बटरफ्लाई कीड़े का प्रकोप कम होगा।

अन्य विविध विधियाँ :

पोलीहाउस में खेती, जैविक विधि से सब्जी उत्पादन एवं सब्जी बीज उत्पादन क्षेत्र तेजी से उभर रहे हैं। इनके अलावा निकाई-गुड़ाई, सिंचाई, खर-पतवार नियंत्रण एवं फसल सुरक्षा का भी समुचित ख्याल करना है।

▲▲▲

औषधीय एवं सगंधीय पौधे

डा. बी. एम. चौधरी
उद्यान विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

अश्वगंधा

अश्वगंधा एक बहुमूल्य औषधीय पौधा है, जिसकी मोटी एवं मूसलाधार जड़ो का उपयोग किया जाता है। इसकी जड़ों में निकोटिन, सोमनीफेरीन, सोमनीविदानीन, विदानीनाइन आदि एलकोलाईड पाये जाते हैं।

यह एक छोटा (लगभग 2-3 फीट का) पौधा होता है। तने रोयेंदार, हल्के हरे तथा जड़ें मोटी एवं मूसलाधार होती है। यह बलवर्धक है। गठिया के दर्द, जोड़ों की सूजन, पक्षाघात, रक्तचाप, स्त्री रोग एवं स्नायु रोग के उपचार में इसे काम में लाया जाता है। इसकी पत्तियाँ मोटापा कम करने, त्वचा रोग, सूजन एवं घावों को भरने के काम में आती है। झारखण्ड में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

मिट्टी एवं जलवायु :

अश्वगंधा एक पिछात बरसात की फसल है। इसके लिए सूखा मौसम होना चाहिए तथा जाड़े में एक दो पानी होने से जड़ो का विकास अच्छा होता है। बलूई दोमट मिट्टी, जिसका पीएच 7.0-8.0 हो, में जड़ो का विकास बढ़िया होता है।

खेत की तैयारी, बीज दर एवं बुआई :

गर्मी के मौसम में खेत की जुताई दो बार करें। बीज की बुआई जुलाई के प्रथम सप्ताह से अगस्त के प्रथम सप्ताह तक करें। बीजों की जोते हुए खेतों में छींटकर या पंक्तियों में बुआई की जाती है। अंतिम जुताई में गोबर की सड़ी खाद मिला दें। ऊपरी जमीन में गर्मियों में जुताई के समय चूना दें। एक हेक्टेयर खेत के लिए 5-7 किलो बीज की आवश्यकता होती है। बोआई के 15-20 दिन बाद बीजों का अंकुरण होता है। अंकुरण के 10-15 दिन बाद पौधों को थिरलीकरण करें।

निकाई-गुड़ाई एवं सिंचाई :

एकाध निकाई-गुड़ाई करने से जड़े अच्छी बढ़ती है। साधारणतः इसमें सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती।

फसल कटाई :

जुलाई में बोई गई फसल नवम्बर में फूलने लगती है। जड़ें 150-180 दिन पर उखाड़ने लायक हो जाती है। जड़ों को एकत्र करने के लिए पौधों को जड़ों सहित उखाड़ लें और अच्छी तरह साफ कर 8-10 सेमी. के टुकड़ों में काट लें एवं सुखा लें। ज्यादा व्यास वाली अच्छी एवं कम व्यास वाली निम्न कोटि की मानी जाती है।

बीमारियाँ एवं उपचार

बीज गलन : बीज बोने के बाद पानी पड़ जाने से बीज गलन हो जाता है। बीजों को डायथेन एम-45 से उपचारित करें।

पत्र गलन : इन्डोफिल एम 45 का 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

उपज एवं आर्थिक लाभ

उपज	:	10-12 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सूखी जड़
बिक्री दर	:	50-60 रुपये प्रति किलो
कुल आय	:	50000-70000 रुपये प्रति हेक्टेयर

कुल खर्च : 25000-30000 रुपये प्रति हेक्टेयर

शुद्ध लाभ : 25000-40000 रुपये प्रति हेक्टेयर

ब्राह्मी

औषधीय पौधों में ब्राह्मी का एक प्रमुख स्थान है। चरक-संहिता एवं आर्युवेद में यह बहुत पहले से ही दमा, जोड़ों का दर्द, मानसिक शक्ति बढ़ाने, याददाश्त, बुखार एवं अन्य बीमारियों में उपयोग किया जाता है। इसे ज्यादातर जंगलो से ही इकट्ठा किया जाता है, जिसमें भिन्नता पाई जाती है। हाल के वर्षों में इसकी मांग बढ़ने के कारण इसकी खेती पर ध्यान दिया जाने लगा है। झारखंड के विभिन्न इलाकों में इसे सफलतापूर्वक लगाया जा सकता है। इसके पूरे पौधों का उपयोग किया जाता है। बाजार में इसके सूखे पौधों की कीमत 100 रुपये किलो मिल जाती है। इसमें बीकोसाईड-ए पाया जाता है।

मिट्टी

ब्राह्मी कई तरह की मिट्टियों में उगाया जा सकता है। नमी वाले खेतों में भी इसे सफलतापूर्वक उगाते हैं। कम उपजाऊ वाले क्षेत्रों में बरसात में इसकी खेती की जा सकती है।

खेत की तैयारी

खेतों की अच्छी तरह जुताई कर घास-पात हटा दें। गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर 100 क्विंटल की दर से देकर मिला दें। पौधों को लगाने से पहले खेतों को पटा देने से पौधे अच्छी तरह लग जाते हैं।

पौधों को लगाना

पौधों के 4-5 सेंटीमीटर के टुकड़े, जिसमें कई गांठे हों, लगाने के लिए उपयुक्त है। पोधे से पौधे की दूरी 30-40 सेंटीमीटर तथा पंक्ति की दूरी 40-45 सेंटीमीटर होनी चाहिए। पौधों को लगाने के बाद पटा देना चाहिए। बाद में प्रत्येक सप्ताह एक बाद पानी दें।

निकाई-गुड़ाई

पौधों को लगाने के बाद खेत में प्रथम निकाई-गुड़ाई 20 दिनों पर करें। जब पौधे अच्छी तरह फैल जाते हैं तब निकाई-गुड़ाई की जरूरत नहीं रहती है। सिर्फ कुछ बड़े घास की रह जाते हैं, जिन्हे बाद में निकाला जा सकता है।

पौधा संरक्षण

पत्तियाँ खाने वाले कीड़ों का आक्रमण होने पर नुबान या डेमोक्रोन के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

पौधों की कटाई

मार्च-अप्रैल के महीने में लगाने पर गर्मी में पौधों का बढ़ाव अधिक होता है और जून के महीने में काटने लायक हो जाता है। बरसात के समय लगाने से प्रथम कटाई अक्तूबर-नवम्बर में होती है। बाद में कटाई करने से बेकोसाईड की मात्रा घट जाती है। पौधों को काटते समय जड़ से 5 सेंटीमीटर ऊपर काटा जाता है ताकि फिर नये पौधे निकल सकें।

कटाई उपरांत प्रबंधन

पोधों को कटाई के बाद छाया में सुखाना चाहिए। सुखाने के लिए ड्रायर में आधे घंटे तक 80^0 सेंटीग्रेड पर रखें फिर बाद में छाया में सुखाएं। अच्छी तरह सुखाए गए पौधों को सील बन्द पैकेटों में रखे ताकि कीड़े एवं फफूंद न लगे।

उपज

तुरंत काटे गये पौधों की मात्रा 300-325 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। जिसे सुखाने पर 60-65 क्विंटल सूखा हुआ पौधा मिलता है। रतून पौधों की कटाई से 40 क्विंटल सूखा हुआ पौधा मिलता है। इस तरह कुल उपज 100-150 क्विंटल तक हो जाती है।

विभिन्न मदों में खर्च प्रति हेक्टेयर

खेत की जुताई, पाटा देना एवं क्यारी बनाना	2500 रुपये
कम्पोस्ट एवं नीम खली	4000 रुपये
पौधे की कटिंग एवं रोपाई	10000 रुपये
सिंचाई (लगाने से पहले एवं बाद में)	6000 रुपये
निकाई-गुड़ाई (3 बार)	4500 रुपये
कटाई (2 बार)	3000 रुपये
सुखाना एवं पैकिंग	10000 रुपये
पौधा संरक्षण	1000 रुपये
अन्य	4000 रुपये
कुल खर्च	45000 रुपये

सर्पगंधा

सर्पगंधा या छोटी चाँद, जिसे अंग्रेजी में राउल्फिया सर्पन्टाईना कहते हैं, एपोकाईनेसी कुल का पौधा है। यह झाड़ीदार पौधा है पर इस कुल के कुछ पौधे पेड़ों की तरह हो जाते हैं। इस पौधे की जड़ से सरपेन्टाइन नामक दवा निकाली जाती है। इसकी जड़ें मूसलदार होती है और जमीन के अन्दर से सर्पन्टाइन के अलावे रेस्पेरीन, अजमेलील, सेशाजेमलीन एवं रोलूम्बीन भी निकाले जाते हैं।

औषधीय उपयोग :

यहाँ की पुरानी पुस्तकों में इस पौधे का वर्णन आता है। यह रक्तचाप, स्त्रीरोग, पागलपन दूर करने, निद्रा लाने, साँप काटने, दस्त, पेचिस, हैजा, सिरदर्द एवं नेत्र रोग में काम आता है। गांवों में औरतें इस पौधे का उपयोग बच्चों को सुलाने में भी करती है। हाल के वर्षो में इस पौधे की जड़ की मांग देश के अंदर एवं विदेशों में काफी बढ़ गई है।

जलवायु

हमारे देश के प्रायः सभी भागों जैसे - आसाम, मेघालय, शिमला, देहरादून, सिक्कम, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, बिहार एवं झारखंड में यह पौधा पाया जाता है। इसे नम गर्म जलवायु तथा खुले या बगानों में भी उगाया जा सकता है।

मिट्टी

सर्पगंधा की जड़ों की समुचित वृद्धि के लिए दोमट या बलूई मिट्टी अच्छी है। चिकनी मिट्टी में इसकी जड़ें नहीं बढ़ती। मिट्टी हल्की आम्लिक से हल्की क्षारीय होनी चाहिए।

प्रसारण एवं बीज दर

छोटी चाँद का प्रसारण बीजों, तने या जड़ों की कलमों द्वारा किया जाता है। बीजों को तैयार होने पर पौधशाला में वर्षा शुरु होने पर मई-जून महीने में बोया जाता हे। इसी तरह से जून के महीने में तने 15-20 सेंटीमीटर के टुकड़े काटकर पौधशाला में लगाये जाते हैं। जड़ें आने पर खेतों में लगाते हैं। जड़ की भी 3-5 सेंटीमीटर कलम काटकर एक सेंटीमीटर छोड़कर गड्ढे में लगाकर ढंक दिया जाता है। 3 सप्ताह बाद कल्ले निकलने पर खेतों मं लगाया जाता है। बीज दर प्रति हेक्टेयर 15 किलोग्राम तथा तने की कलमें प्रतिहेक्टेयर 100 किलो होगी। बीजों को बोने के पहले 24 घंटे फुला लें। नर्सरी में 25-30 सेंटीमीटर की दूरी पर 2 सेंटीमीटर गहरे कुँड में 2.5 सेंटीमीटर की दूरी पर गिराएँ। बिचड़े दो महीने में तैयार हो जाते हैं।

खेत की तैयारी, रोपाई एवं खाद की मात्रा

इसकी खेती के लिए मई महीने में खेत को जोत दें। वर्षा होने पर गोबर की सड़ी खाद 100 क्विंटल प्रति हेक्टेयर देकर मिला लें। साथ ही लगाते समय 45 किलो नाईट्रोजन, 45 किलो फासफोरस तथा 25 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर दें। नाईट्रोजन की यही मात्रा (45 किलो) दो बार अक्तूबर एवं मार्च में दें। बिचड़े 10-12 सेन्टीमीटर के होने पर लगाने लायक हो जाते हैं। बीजों से तैयार बिचड़े या कलमों को 45x30 सेमी. या 35x35 सेमी. की दूरी पर लगाकर पटा दें। पानी की कमी होने पर समय-समय पर पटा दें।

निकाई-गुड़ाई

पौधों को लगाने के बाद खरीफ में दो बार तथा फिर जाड़े में एक बार खरपतवार निकाल दें। सिंचाई की सुविधा होने पर सिंचाई करें।

कटाई एवं उपज

सर्पगंधा डेढ़-दो साल का होने पर उखाड़ा जाता है। उस समय मूल जड़ 0.5 से 1.0 मीटर जमीन के नीचे चला जाता है। इसे उखाड़ने का सबसे अच्छा समय जाड़े का है। उस समय जड़ों में एल्केलाईड की मात्रा ज्यादा रहती है। जड़ों को छोड़ देने से ढ़ाई साल पर उपज ज्यादा मिलती है। पौधों की जड़ों को उखाड़कर 12-15 सेमी. के टुकड़े कर सुखा लें तथा वायुरिक्त ड्रमों में रखें।

उपज	:	1000 किलो (डेढ़ साल में)
		2000 किलो (ढ़ाई साल में)
बिक्री दर	:	70/- रुपये प्रति किलो
कुल आमदनी	:	25000-40000/- रुपये प्रति हेक्टेयर
लाभ	:	45000-100000/- रुपये प्रति हेक्टेयर

इसके अलावे 5-15 किलो बीज भी मिल जाते हैं तथा पौधे की कटिंग भी तैयार हो जाती है।

रजनीगंधा

व्यावसायिक तौर पर उगाये जाने वाले फूलों की फसलों में रजनीगंधा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके फूल सफेद और सुगंधित होते हैं, जो मन को मुग्ध कर लेते हैं। रजनीगंधा के कटे फूल (डंठलयुक्त फूल या फ्लावर), गुलदस्ता बनाने, मेज, इन्टेरियर (भीतरी) पुष्प सज्जा के लिए मुख्य रूप से प्रयोग किये जाते हैं। इसके अलावा बिना डंठल के पुष्प का गजरा और वेणी बनाने तथा सुगंधित तेल तैयार करने के लिए उपयोग किया जाता है। फूलों की बढ़ती मांग एवं व्यवसाय के कारण छोटानागपुर के पठारी भाग में भी रजनीगंधा की खेती की जाने लगी है। रजनीगंधा की सफल खेती के लिए यह क्षेत्र उपयुक्त जलवायु प्रदान करता है। अत: उत्पादकों को इसकी खेती से सम्बंध कुछ वैज्ञानिक जानकारी भी आवश्यक है।

भूमि एवं खेती की तैयारी

रजनीगंधा की फसल को हर तरह की मिट्टी में उगाया जा सकता है, परन्तु बलुई दोमट या सिल्टी दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। यह ध्यान देना आवश्यक है कि खेत छायादार जगह न हो अर्थात् जहाँ सूर्य का पूर्णरूपेण प्रकाश मिलता हो तथा जल निकास का उचित प्रबंध हो, वहीं इसकी खेती की जाय। खेत का चुनाव करने के बाद उसे एक बार मिट्टी पलटनेवाले हल से तथा 2-3 बार देशी हल से जुताई करके पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी बना दें तथा समतल कर दें। चूंकि, यह कन्द वाली फसल है इसलिए कन्द के समुचित विकास कें लिए खेती की तैयारी ठीक ढंग से होनी चाहिए। अंतिम जुताई के समय ही खेत में कम्पोस्ट या गोबर की अच्छी सड़ी खाद मिला देते हैं।

किस्मों का चुनाव

फूल के आकार प्रकार तथा बनावट के अनुसार रजनीगंधा की किस्मों को चार वर्गों में बांटा गया है - (1) सिंगल-सफेद रंग के फूल एवं पंखुड़ियों की केवल एक पंक्ति, (2) डबल-सफेद फूल, पंखुड़ियाँ कई पंक्तियों में तथा सिरा हल्का गुलाबी, (3) हाफ डबल या अर्ध डबल-सफेद रंग एवं पंखुड़ियों की 2-4 पंक्ति, (4) वेरीगेटेड-पंखुडियों क एक पंक्ति परन्तु पत्तियों के आकर्षक रंग एवं विभिन्नता के कारण दो प्रकार - स्वर्ण रेखा, रजत रेखा।

सिंगल किस्म के फूल लगभग सभी मौसम में पूर्णत: खिल जाते हैं और इसके फूल सुगंधित होते हैं। सिंगल किस्म के फूलों के नाम उगाये जाने वाले जगहों के नाम पर रखे गये हैं, जैसे कलकत्ता सिंगल, कोयम्बतूर सिंगल, बंगलोर सिंगल, मेक्सिकन सिंगल इत्यादि। इसके अलावा एक किस्म है सुहासनी। डबल में जो किस्में उपलब्ध हैं उनमें ''हर श्रृंगार'' मुख्य हैं।

कन्दों की रोपाई

छोटानागपुर के पठारी भागों में रजनीगंधा के कंद रोपने का उपयुक्त समय अप्रैल-मई है, किन्तु सिंचाई की व्यवस्था न होने पर जून-जुलाई में भी कन्दों की रोपाई की जा सकती है। 2 सेमी. व्यास या इससे बड़े आकार वाले कन्द का चुनाव रोपाई के लिए करना चाहिए। किस्म तथा फसल की अवधि (एक, दो या तीन वर्ष) के अनुसार 1-3 कन्दों को प्रत्येक स्थान पर लगाना चाहिए। सिंगल रजनीगंधा फूल के किस्म को यदि केवल एक वर्ष के लिए लगाना है, तो प्रत्येक स्थान पर तीन कन्दों की रोपाई करें, इससे उपज अधिक प्राप्त होती है। परन्तु एक वर्ष से ज्यादा समय की फसल लेनी हो तो 1-2 कन्दों की रोपाई प्रति स्थान करें। डबल किस्म के कन्द की एक वर्ष के लिए रोपाई प्रतिस्थान दो कन्द तथा एक वर्ष से अधिक के समय के लिए एक कन्द की रोपाई करें। सिंगल किस्मों के कन्द फसल को अवधि के अनुसार 15-30 X 15-30 सेमी (पंक्ति एवं पौधा) की दूरी पर, जबकि डबल किस्म के कन्दों को 20X20 सेमी. या 25X25 सेमी. (पंक्ति एंव पौधा) पर रोपाई करना उत्तम होता है। कन्दों को लगभग 5 सेमी. की गहराई पर रोपना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

इसकी खेती के लिए खाद एवं उर्वरक की भरपूर मात्रा में आवश्यकता पड़ती है। खाद एवं उर्वरक में 250-300 क्विंटल कम्पोस्ट या गोबर की अच्छी सड़ी खाद के अलावे 100-120 किग्रा. नाइट्रोजन (225-250 किग्रा. यूरिया), 80-100 किग्रा. फास्फोरस (350-450 किग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 80-100 किग्रा. पोटैशियम (120-150 किग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) की मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से खेती में डालना चाहिए। नाइट्रोजन की मात्रा को तीन बार (30, 60, एवं 90-100 दिन पर) किस्तों में डालना चाहिए, जबकि कम्पोस्ट, फास्फोरस एवं पोटैशियम की पूरी मात्रा के कन्द रोपने के समय ही देना चाहिए।

सिंचाई एवं निराई-गुड़ाई

कन्द रोपने के बाद जमीन में पर्याप्त नमी आवश्यक है। बरसात के मौसम में नमी नहीं रहने पर, जबकि गर्मी में 4-6 दिन के अन्तर पर एवं शरद ऋतु में 7-8 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। सही मात्रा में एवं सही समय पर सिंचाई करने से फूल की उपज में संतोषजनक वृद्धि होती है। खेत में खरपतवार दिखाई देते ही निराई-गुड़ाई करनी चाहिए, इससे मिट्टी ढीली होती है तथा कन्द एवं जड़ो का विकास सही होता है।

फूल/ स्पाइक की तुड़ाई

कन्द रोपने के 60-70 दिन बाद स्पाइक निकलना प्रारंभ हो जाता है। स्पाइक निकालने के बाद से फूल खिलने में लगभग 25-30 दिन लगते हैं। प्रत्येक कन्द से 1-3 स्पाइक तक प्राप्त होते हैं। स्पाइक 90-120 सेमी. लंबे तथा 20-25 फूलों वाले होते हैं। डबल किस्म के स्पाइक लगभग 75-100 सेमी. लंबे होते हैं जिससे 40-50 तक फूल प्राप्त होते हैं। अत: व्यावसायिक उत्पादन के लिए सिंगल किस्म अधिक उपयुक्त होते हैं।

▲▲▲

फल एवं सब्जियों के तुड़ाई उपरान्त उचित देखभाल एवं परिरक्षण के द्वारा मूल्यवर्धन

डॉ. एस.के. सिंह एवं डा. एस. कुमार
बागवानी एवं कृषि वानिकी शोध कार्यक्रम (हार्प), प्लाण्डू , राँची - 834010 (झारखण्ड)
(पूर्वी क्षेत्र के लिए भा.कृ.अनु.प. का शोध परिसर)

हमारे देश में फल एवं सब्जी का उत्पादन प्रति वर्ष क्रमशः 50 मिलियन टन एवं 94 मिलियन टन हो रहा है, जो पूरे विश्व में दूसरे स्थान पर है। यदि उपलब्ध आंकड़ो पर ध्यान दें तो प्रतिवर्ष कुल उत्पाद की लगभग 37 प्रतिशत भाग विभिन्न कारणों जैसे तुड़ाई उपरान्त उचित देखभाल का न होना, भंडारण की समस्या, उपभोक्ताओं तक समय से न पहुँच पाना आदि से खराब हो जाता है (सारणी-1)। जिसका औसत मूल्य लगभग 25,000 करोड़ अनुमानित है।

सारणी-1 : फलों एवं सब्जियों में तोड़ाई उपरान्त नुकसान

फल	नुकसान (प्रतिशत)	सब्जी	नुकसान (प्रतिशत)
सेव	14	पत्तागोभी	37
केला	20-80	फुलगोभी	49
अंगूर	27	प्याज	16-35
नीबू	20-85	टमाटर	5-50
संतरा	20-95	आलू	5-40
पपीता	40-100		

स्रोत : आर.के. मीना एवं जे.एस. यादव (2001) *हार्टीकल्चर मार्क्रेटिंग एवं पोस्ट हार्वेस्ट मैनेजमेन्ट,* पायनियर प्रकाशक, जयपुर

झारखण्ड प्रदेश में सब्जियों जैसे मटर, टमाटर, फुलगोभी, फ्रांसबीन, शिमला मिर्च का अच्छा उत्पादन हो रहा है। करीब-करीब पूरे वर्ष इन सब्जियों की उपलब्धता बनी रहती है। इसी तरह फलों में आम, लीची, अमरूद, केला, पपीता, नीबू एवं कटहल की अच्छी उपज होती है। राष्ट्रीय स्तर पर अगर उत्पादकता देखी जाय तो आम, लीची, केला आदि की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता सबसे अधिक है।

फलों एवं सब्जियों को बाजार में भेजने से पहले मूल्यवर्द्धन के मुख्य बिन्दु

- उपभोक्ता हमेशा ऐसी ताजा, मुलायम, कीड़े एवं बीमारी रहित सब्जियों एवं फलों को पसन्द करता है जो देखने में अच्छा लगता है।
- कोमल अवस्था पर जब पूर्ण विकास हो जाय तभी तुड़ाई करनी चाहिए।
- जड़ वाली सब्जियों जैसे मूली, गाजर को देर में उखाड़ने से जड़ में खोखलापन आ जाता है। यदि प्याज एवं लहसुन को देर तक खेत में छोड़ दिया जाय तो भंडारण में इनकी गुणवत्ता प्रभावित होती है।
- सुबह या शाम जब मौसम ठंढा हो तभी तुड़ाई का कार्य करना चाहिए।
- पत्तेदार एवं फल वाली सब्जियों की तुड़ाई जहाँ तक संभव हो चाकू से करना चाहिए।
- बाजार में भेजने से पहले उत्पाद को साफ पानी से धोकर छटाई करना बहुत आवश्यक है।
- सब्जियों एवं फलों को उचित आकार के डिब्बों, टोकरी, दफ्ती के डब्बों पर रखकर भेजने से बाजार में मूल्य अधिक मिलता है। जैसे यदि उपलब्ध टमाटर, आम, अमरूद को श्रेणीकरण करके लकड़ी के डिब्बों में बंद करके बाजार में भेजा जाय तो मूल्य अधिक मिलेगा। ऐसा पाया गया है कि अभी भी बहुत से फलों एवं सब्जियों को जूट के बोरों, बाँस की टोकरी, कागज के गत्तों आदि में रखकर बाजार में भेजा जाता है। इनसे गुणवत्ता तो प्रभावित होती ही है साथ ही साथ उचित मूल्य भी नहीं मिलता है।

यदि मौसम विशेष में अधिक फल एवं सब्जी की उपलब्धता हो तो 'परिरक्षण विधि' के द्वारा बेमौसम में भी इनकी उपलब्धता बढ़ाई जा सकती हैं। परिरक्षण का अर्थ है फलों एवं सब्जियों को विशेष उपचारित के माध्यम से लम्बे समय तक सुरक्षित रखना एवं तैयार उत्पादों को ऐसे समय में प्रयोग में लाना जब उनकी उपलब्धता न हो। इस प्रक्रिया में महिलाओं को जोड़कर अधिक रोजगार का सृजन किया जा सकता है (सारणी-2)।

सारणी-2 : झारखण्ड में उपलब्ध फलों एवं सब्जियों से तैयार होने वाले प्रमुख परिरक्षित उत्पाद -

फल/ सब्जी	तैयार होने वाले परिरक्षित पदार्थ
आम	शर्बत, नेक्टर, स्क्वैश, मुरब्बा, अचार, चटनी
अमरूद	जैली, स्क्वैश, टाफी, नेक्टर, शर्बत
आँवला	मुरब्बा, जैम, कैण्डी, स्क्वैश, अचार, चटनी, त्रिफला, च्यवनप्राश
लीची	जूस, नेक्टर, स्क्वैश, सीरप, डिब्बाबंद लीची, लीची नट
पपीता	जैम, कैण्डी, नेक्टर, आचार, पपेन
केला	सूखा केला (चिप्स) टॉफी
नीबू	जूस, शर्बत, आचार
टमाटर	सॉस, चटनी, टयूरी, पेस्ट, जूस, सूप, टमाटर पाउडर
फूलगोभी	अचार, सूखागोभी, डिब्बाबंद गोभी
गाजर	जैम, आचार, मुरब्बा, कैंडी
मटर	डिब्बाबंद मटर, बोतल में बंद मटर, सूखा मटर, मिश्रित अचार
परवल	डिब्बाबंद परवल, परवल की मिठाई
फ्रेंचबीन	आचार, डिब्बाबंद फ्रेंचबीन के टुकड़े
मशरूम	आचार, डिब्बाबंद मशरूम, सूखा मशरूम

परिरक्षण के सिद्धांत

फल एवं सब्जियों में 70-95 प्रतिशत तक नमी पायी जाती है। परिरक्षित पदार्थ बनाते समय इस बात का विशेष ध्यान दिया जाता है कि तैयार पदार्थ में नमी की मात्रा इस प्रकार नियंत्रित की जाय की उत्पाद जल्दी खराब न हों। मुख्यतः इस प्रक्रिया में तीन सिद्धांतों का पालन किया जाता है।

क. सूक्ष्म जीवों द्वारा सड़ने से बचाना :

- सूक्ष्म जीवों का आक्रमण न होने देना।
- सूक्ष्म जीवों को हटाना / छानना।
- सूक्ष्म जीवों के विकास को रोक देना।
- सूक्ष्म जीवों को मारना।

ख. पदार्थों को अपने आप में ही सड़ने से बचाना

- पदार्थों के अन्दर होने वाले एन्जाइम की क्रियाशीलता को रोकना (ब्लांचिंग)।
- पदार्थों के अन्दर होने वाले रासायनिक क्रियाओं को बंद करना अथवा देर तक रोक कर रखना (चीनी, तेल, सिरका, नमक, मसाला)

ग. पदार्थों को कीड़े, फफूंदों एवं यांत्रिक क्षति से बचाव

- पदार्थों को फफूंदों को आक्रमण से बचाना।

- ❖ सूखे पदार्थों को धूल / पतंगो से बचाना।
- ❖ पदार्थों या उससे डिब्बों / बोतलों को नुकसान से बचाना

फल एवं सब्जी परिरक्षण के लाभ

- ❖ फल एवं सब्जी परिरक्षण एवं विज्ञान के साथ-साथ एक कला भी है। इस विधि से उनेक उपयोगी पदार्थ तैयार करके उनका मूल्य वर्धन भी किया जाता है। जिससे अधिक आमदनी प्राप्त होती है।
- ❖ विभिन्न फलों एवं सब्जियों की उपलब्धता एक निश्चित समय विशेष पर होती है। शीत गृहों में भंडारण के फलस्वरूप कुछ अधिक समय तक इनकी उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है। परिरक्षण के द्वारा पूरे वर्ष उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है।
- ❖ फलों एवं सब्जियों को सड़ने तथा नुकसान होने से बचाया जा सकता है।
- ❖ हमारे देश में आधी जनसंख्या महिलाओं की है। प्राचीन काल से ही इनका योगदान अनाज, फल-फूल, सब्जियाँ उगाने तथा संरक्षण में सराहनीय रहा है। स्थानीय एवं सामूहिक स्तर पर महिलाओं को परिरक्षण से जोड़ने पर उनकी आमदनी बढ़ाई जा सकती है।
- ❖ फल एवं सब्जी परिरक्षण द्वारा कम उद्भोगी पदार्थ से भी अधिक मूल्य सम्बंधित पदार्थ तैयार किये जा सकते हैं।

फल एवं सब्जी परिरक्षण की विधियाँ

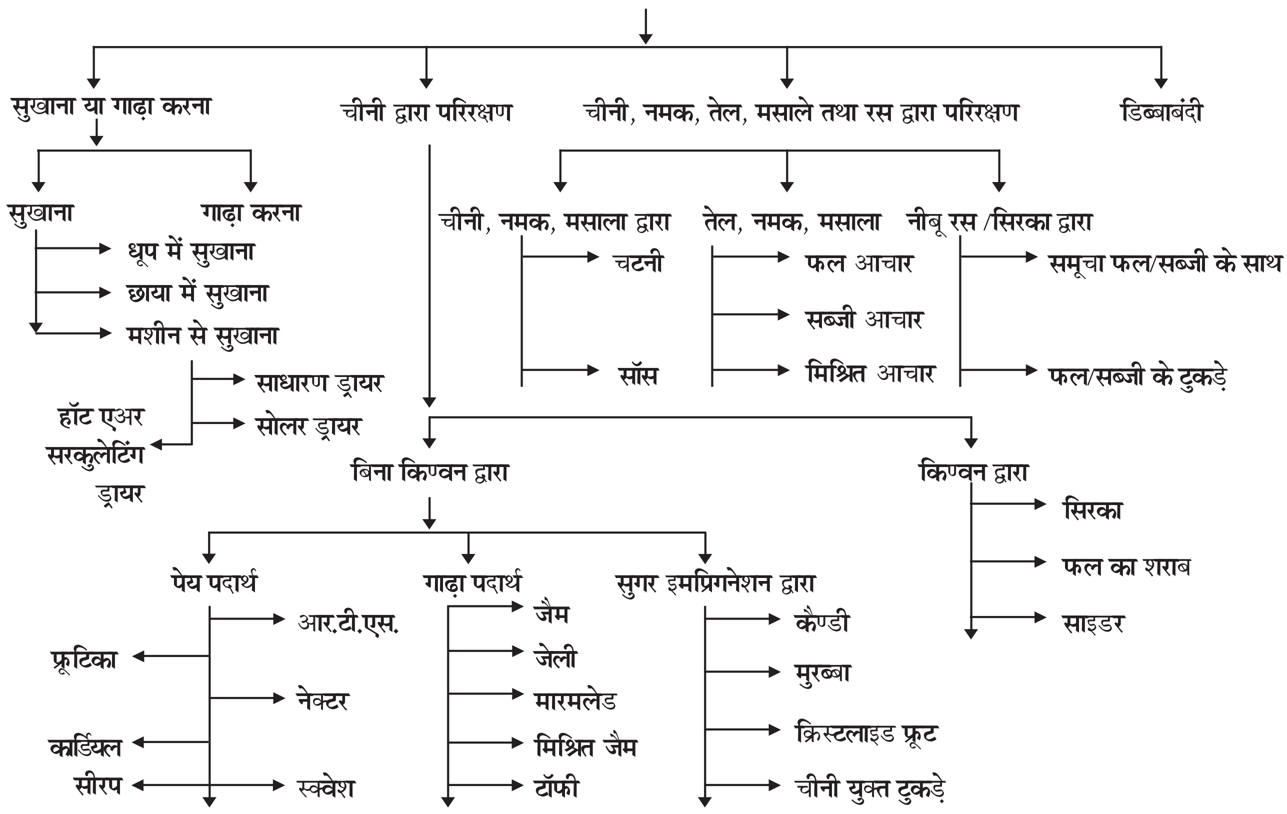

▲▲▲

सब्जी उत्पादन, भंडारण एवं मूल्यवर्द्धन की उन्नतशील तकनीक

आरती बीणा एक्का

कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

झारखण्ड राज्य में कुल कृषि योग्य भूमि 25.95 लाख हेक्टर है और इसके 2.00 लाख हेक्टर भूमि पर सब्जियों की खेती की जाती है। वर्ष 1999-2000 में करीब 20.00 लाख मिट्रिक टन सब्जी का उत्पादन हुआ जबकि उस समय 23 लाख मिट्रिक टन सब्जियों की आवश्यक्ता थी। झारखण्ड राज्य में प्रति व्यक्ति प्रति दिन 280 ग्राम के स्थान पर 246 ग्राम सब्जी की खपत हो रही है। इस प्रकार अभी भी 20 प्रतिशत सब्जियों की कमी हमारे राज्य में है। अतएव इनके उत्पादन में अभी और अधिक सघनता लाने की जरुरत है। यह तभी संभव हो सकता है जब सब्जियों के उत्पादन और भंडारण में उन्नत तकनीकों का प्रयोग किया जाए।

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के सहयोग से सब्जियों की ऐसी उत्पादन तकनीक का विकास किया जा रहा है जो यहाँ की मिट्टी और जलवायु के अनुकूल हो। इसी संदर्भ में राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी परियोजना के अन्तर्गत सब्जी उत्पादन एवं भंडारण पर किसानों के खेतों में शोध कार्य किए गए। इन शोध कार्यों की अनुशंसाएं राज्य में सब्जियों की पैदावार बढ़ाने के साथ-साथ आमदनी बढ़ाने में भी सहायक हो रहे हैं।

अंगीकृत की जाने वाली उन्नत तकनीक

पौध तैयार करने की उन्नत तकनीक :

जिन सब्जियों के पौध तैयार कर खेतों में लगाते हैं, उनमे प्रमुख हैं टमाटर, बैंगन, मिर्च, फूलगोभी, पतागोभी, गाँठगोभी और प्याज। उच्च तकनीक से पौध तैयार करने के लिए पौधशाला की मिट्टी को फोरमालिन (10 मिली लीटर/लीटर पानी) और बीजों को बैभिस्टीन (2 ग्राम/लीटर पानी में) से उपचारित कर, लाइन (5 सें.मी.) बनाकर एवं क्यारियों को ऊँचा (10-15 सें.मी.) उठाकर, चौड़ाई (1-1.20 मी.) कम एवं लम्बाई को आवश्यकतानुसार बनाकर लगाया जाता है। बीजों को पंक्ति में पतला गिरना चाहिए। गोबर की सड़ी खाद एवं उर्वरकों का संतुलित प्रयोग, समय पर निकाई-गुड़ाई एवं सिंचाई का समुचित प्रबंध करके पर्याप्त संख्या में स्वस्थ्य पौध तैयार करने के साथ-साथ सब्जियों के उपज में वृद्धि किया जा सकता है।

प्रमुख सब्जी फसलों की सस्य तकनीकें:

फसल	बीज दर (प्रति हे.)	उर्वरकों की मात्रा			प्रतिरोपन दूरी (से.मी.)	बीज गिराने का समय
		यूरिया	एस.एस.पी.	पोटाश		
		(कि.ग्राम)				
आलू	20-30 क्वि.	250 *200-250	600	150	50x20	अक्तूबर-नवम्बर
फूलगोभी	500-600 ग्रा.	300 *200-250	500	100	45x30	ग्रीष्मकालीन : फरवरी-मार्च अगात : जून-जुलाई मध्यम : जुलाई-अगस्त पिछात : अक्तूबर-नवम्बर
पत्तागोभी	500-600 ग्रा.	300 *200-250	500	100	45x30	ग्रीष्म : फरवरी अगात : सितम्बर-अक्तूबर पिछात : अक्तूबर-नवम्बर
टमाटर	500 ग्रा.	200 *200-250	300	100	45x30	अगस्त-नवम्बर
बैंगन	500 ग्रा.	250 *200-250	300	100	50x35	मध्य जून दिसम्बर-जनवरी

मिर्च	1,000 कि.ग्रा.	250 *200-250	300	100	50X35	अप्रैल
मटर	80 कि.ग्रा.	50 *200-250	300	75	30X10	अक्तूबर-नवम्बर
फ्रेंचबीन	झाड़ीदार किस्म: 80 कि.ग्रा. लत्तीदार : 25 कि.ग्रा.	110 *200	450	130	60X30 75X15	जनवरी-फरवरी अक्तूबर-नवम्बर मई-जून
कद्दूवर्गीय सब्जी	4-6 कि.ग्रा.	खीरा 100 कद्दू 200 *200-250	करेली 200 कोंहड़ा 450	झींगा 80 नेनुआ 100	100X200 200X250	मुख्य: जून-जुलाई गर्मा: दिसम्बर
शकरकंद	80-85 हजार लत्तर	100 *150-200	190	90	60X20	मध्य जून
बोदी	15 कि.ग्रा.	100 *150-200	350	100	200X150	गर्मा: जनवरी खरीफ: जून
भिण्डी	18 कि.ग्रा.	200 *200-250	300	100	45X20	गर्मा: मार्च बरसाती: अगस्त
प्याज	8 कि.ग्रा.	200 *200-250	300	100	15X10	नवम्बर
अदरख	18 क्विंटल	200-250 *150	450	200	35X20	जून

(*; गोबर की सड़ी खाद क्विंटल प्रति हेक्टर)

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि प्रत्येक सब्जी की सस्य तकनीक भिन्न- भिन्न है। अत: इनकी रोपाई अथवा बोआई निर्धारित समय पर, सही बीज दर, संतुलित उर्वरकों, पौधों और लाईन की दूरी को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। अन्यथा पैदावार में भारी गिरावट होगी। इस क्षेत्र में किए गए शोधों में प्याज और शकरकन्द के लिए क्रमश: दिसम्बर और जून महीने के अंतिम सप्ताह में रोपाई करने से अधिक पैदावार की प्राप्त हुई। उपरोक्त सभी सब्जियों का सफलतापूर्वक उत्पादन करने के साथ अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए समय पर खरपतवार नियंत्रण एवं उचित सिंचाई का प्रबन्ध करना भी जरुरी है।

नई उन्नत किस्में:

आज अधिकतर सब्जियों की उन्नत किस्में विभिन्न मौसमों के अनुसार अगेती मध्यम तथा पछेती खेती के लिए उपलब्ध है। विभिन्न किस्मों को उनके समयानुसार लगाना भी एक तकनीकी काम है। क्योंकि अगर अगेती किस्मों को पछेती लगा दिया जाय तब अधिक लागत पर भी पैदावार में भारी कमी होगी। मटर में आरकेल अगेती मौसम के लिए तथा बोनविले, आजाद मटर-1, आदि कई किस्म पछेती मौसम की बुआई के लिए है। फूलगोभी में अर्ली कुंवारी, पूसा दीपाली किस्में अगेती मौसम में खेती के लिए तथा पूसा अगहनी, पूसा सिन्थेटिक और पूसा कतकी मध्यम मौसम में खेती के लिए तथा स्नोबॉल-16 और पूसा स्नोबॉल के. टी.-1 किस्मों को पछेती मौसम में उगाया जाता है। टमाटर की पूसा रुबी, पंजाब केसरी, पूसा-120, अर्का आभा, बैंगन में पूसा अनमोल, स्वर्ण प्रकतभा, स्वर्ण मणि, मिर्च में पूसा ज्वाला, एन.पी.-46 ए., एक्स-235 शिमला मिर्च की किस्म कैलिफोर्निया वन्डर, पत्तगोभी में प्राईड ऑफ इंडिया, गोल्डन एकर, प्याज में एन.-53, पूसा रेड, भिण्डी की परभनी क्रांति, अर्का अनामिका आदि इस क्षेत्र की प्रचलित और अधिक पैदावार देने वाली किस्मों में हैं। कद्दूवर्गीय सब्जियों में भी बहुत सी उन्नत किस्मों को झारखण्ड क्षेत्र में अधिक पैदावार देने के लिए चिन्हित किया गया है। कद्दू में पूसा मंजरी, जी.-2 सूपरीम, कोहड़ा में अर्का चन्दन, पूसा विश्वास, अर्का सूर्यमुखी, झिंगी में सतपूतिया,

एल-201, नेनुआ की किस्मों में पूसा चिकनी, पूसा सुप्रिया और खीरा में पूसा संगोय, एस.-1, बालम खीरा प्रमुख हैं। जिनकी खेती यहाँ के किसानों के लिए लाभदायक हो सकती है। अतः मौसम के अनुसार किस्मों की जानकारी का होना उन्नत सब्जी उत्पादन के लिए अत्यंत आवश्यक है।

सब्जियों की संकर किस्में:

सरकारी और कई निजी कम्पनियों द्वारा सब्जियों की अधिक पैदावार देने वाली संकर किस्मों का विकास किया गया है। इन किस्मों की उपज क्षमता साधारण किस्मों की अपेक्षा दो से पाँच गुणी तक होती है। इन किस्मों के बीज काफी मंहगे होते हैं, लेकिन बीज दर कम होता है। इन सब्जियों की खेती में भरपूर कम्पोस्ट के अलावे रासायनिक खाद की अनुशंसित मात्रा की आवश्यकता होती है, जिनकी मात्रा साधारण किस्मों की अपेक्षा दोगुणी होती है।हमारे राज्य के किसान भी संकर किस्मों की खेती को प्राथमिकता दे रहे हैं। इनमें मुख्य हैं: टमाटर में पूसा हाईब्रिड-1, पूसा हाईब्रिड-2, बैगन में पूसा हाईब्रिड-5, पूसा हाईब्रिड-6, शिमला मिर्च में के.टी. हाईब्रिड-1 फूलगोभी में पूसा हाईब्रिड-2, सुभ्रा, आदि मुख्य हैं।

पॉलीहाउस या हरित गृह तकनीक:

सब्जियों की खेती में बेमौसम पौधशाला तैयार करने में पॉलीहाउस की उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता है। इनमें प्राकृतिक वातावरण को परिवर्तित कर पौधों की वृद्धि और विकास के अनुकूल बनाया जाता है। झारखण्ड राज्य में भी सस्ते पॉलीथीन हाउस तकनीक से कुछ सब्जियों, जैसे टमाटर, बैंगन, शिमला मिर्च तथा कद्दू-वर्गीय सब्जियों की बेमौसम अर्थात् जाड़े में पौध तैयार कर, एक से दो महीने अगेती खेती कर अधिक लाभ कमाया जा सकता है। बांस और पॉलीथीन की चादरों से झोपड़ीनुमा या कम लागत का हरित गृह बनाकर पौधों का प्रसारण, सालभर सब्जियों का उत्पादन और सब्जियों की सघन खेती किया जा सकता है।

विदेशी सब्जियाँ :

विदेशी सब्जियों में ब्रोकोली, ब्रुसल स्प्राउट्स, चैनिज कैबेज, पार्सले, सेलरी और चेरी टमाटर प्रमुख हैं। इन सब्जियों की खेती जाड़े में की जाती है। हमारे यहाँ की जलवायु और मिट्टी इन सब्जियों की खेती के लिए उपयुक्त पाई गई है। इन सब्जियों की मांग बड़े शहरों में, सितारा होटलों और पर्यटन स्थलों में अधिक है। इनकी मांगों के अनुसार यदि खेती की जाये तो ये आमदनी बढ़ाने की अच्छे श्रोत साबित हो सकते हैं।

पौधों में वृद्धि नियामकों और सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग:

पौधों में प्राकृतिक रूप से वृद्धि नियामक मौजूद होते हैं। पर कभी-कभी अनुकूल वातावरण नहीं मिलने के कारण इस रसायन की कमी हो जाती है। जिससे अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न होते हैं जैसे - टमाटर और मिर्च के फूल का गिरना तथा फलों का देर से पकना, कद्दूवर्गीय सब्जियों में नर पुष्प की संख्या का मादा पुष्प की संख्या का अधिक होना, सब्जियों के बीजों में देर से अंकुरण होना, फूल देर से आना, पौधों का विकास धीमा होना, भण्डारण में प्याज अथवा आलु में अंकुरण का होना। वृद्धि नियामकों जैसे जिब्रेलिक अम्ल, ईथरल, मौलिक हाइड्राक्साइड या फिर सूक्ष्म तत्वों, बोरॉन, कैल्शियम, मालीब्डीनम् आदि के घोल का छिड़काव कर अधिक पैदावार के साथ अधिक लाभ कमाया जा सकता है। इस क्षेत्र की मिट्टी के अम्लीय होने के कारण पौधों को सूक्ष्म तत्व कम मात्र में उपलब्ध होते हैं। इस दिशा में किए गए शोध में फूलगोभी पर 2 ग्राम/लीटर बोरेक्स का छिड़काव (फूल आने के बाद दो बार, 15 दिनों के अंतराल में) लाभदायक पाया गया है। जो इसे काला या भूरा विगलन (ब्लैकरॉट/ब्राउनरॉट) रोग से बचाने के साथ इसके उपज में वृद्धि भी करता है। इस दिशा में और शोध कार्य अभी चल रहे हैं। अतः विशेषज्ञों से सलाह लेकर ही इनका प्रयोग किया जाना चाहिए।

उद्योगों के लिए सब्जियाँ:

कुछ सब्जियाँ ऐसी हैं जिनका उपयोग कई प्रकार की खाद्य सामग्रियों को बनाने में किया जाता है। टमाटर, गाजर, प्याज, मिर्च, करेला, मेथी और चौलाई जैसी फसलों की किस्में उपलब्ध हैं। जिनका प्रयोग विशेष पदार्थों को बनाने में किया जाता है। इन पदार्थों में सॉस, केचप, चटनी, प्यूरी, पेठा, अचार एवं तीखा पदार्थ (मिर्च) से तेल निकालकर, इनका निर्यात कर विदेशी मुद्रा कमाया जा सकता है।

बीज उत्पादन:

सब्जियों के उत्पादन में बीजों की महत्ता से सभी परिचित हैं। अगर बीज घटिया या रोगयुक्त हो तो इसका सीधा प्रभाव सब्जियों के उत्पादन पर होता है। अत: वैसी सब्जियाँ जो स्वयं परागण वाली है जैसे टमाटर, मिर्च, बैंगन, मटर, सेम आदि के उन्नत बीज कम पढ़े-लिखे लोग भी थोड़ी सी जानकारी से स्वयं बना सकते हैं। पर-परागण वाली सब्जियाँ जैसे लौकी, खीरा, करेला और टिंडा इत्यादि के बीजों का उत्पादन पढ़े-लिखे किसान ट्रेनिंग पाकर सफलतापूर्वक करके, सब्जियों के उन्नत बीजों के उत्पादन को व्यावसायिक रूप दिया जा सकता है।

सघन फसल चक्र:

अन्य फसलों के बीच, सब्जियों के फसल को लगाकर अर्थात् अन्त: खेती कर पैदावार एवं आमदनी दोनों में वृद्धि किया जा सकता है। जैसे गन्ना + भिन्डी, गन्ना + बोदी, मक्का + खीरा, मक्का + बोदी।

इसी प्रकार सब्जियों की जल्द तैयार होने वाली किस्मों से अब 3 से 4 फसल एक वर्ष में लिया जा सकता है। मूली, शलगम और गाजर जैसी सब्जियों को अन्य फसलों के बीच की मेड़ों पर बुआई करके एक ही समय में ईकाई क्षेत्र से अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

कीटों और बीमारियों के प्रतिरोधी किस्में:

कई सब्जियों के कीट और रोग अवरोधी किस्मों के उपलब्ध होने से अनावश्यक दवाईयों पर हो रहे खर्च से बचा जा सकता है। साथ ही सफलतापूर्वक सब्जियों की खेती की जा सकती है। इनमें प्रमुख हैं:

फसल	रोग / कीट	किस्म
भिंडी	पीला शिरामोजेक रोग	पूसा ए-4, परभनी क्रांति
बैंगन	फोमापसीस ब्लाइट रोग	पूसा बैभव
पत्तागोभी	काला सड़न रोग	पूसा मुक्ता
फूलगोभी	काला सड़न रोग	पूसा स्नोबॉल के.टी.-1
टमाटर	झुलसा जड़कृमि	पंतबहार पूसा-120
मिर्च	वाइरस रोग	पूसा सदाबहार
आलू	झुलसा	कुफरी बादशाह

संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग:

सड़ी हुई गोबर की खाद के साथ रसायनिक खादों का अनुशंसित प्रयोग मिट्टी और फसलों के अनुसार किया जाना चाहिए। जिससे फसल और पैसे की बरबादी से बचा जा सके।

सब्जियों की खेती में जैविक पोषक तत्व एवं रोगनाशकों का प्रयोग:

रासायनिक उर्वरकों, कीट और रोगनाशकों के बेतहासा प्रयोग एवं सब्जियों पर इनके अवशेषों से, खाद्यपदार्थों के विषाक्त होने के साथ स्वस्थ्य पर इनके हो रहे कुप्रभाव से सभी परिचित हैं। अत: सब्जियों की खेती जैविक विधि से करके निश्चित रूप से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इस विधि से उत्पादित सब्जियाँ उच्च पौष्टिक गुणों से भरपूर होने के साथ कीटों और बीमारियों से पूर्णरूपेण सुरक्षित रहती है। स्वस्थ्य के प्रति जागरूक लोगों का इन सब्जियों के प्रति रूझान होने से बाजार में जैविक सब्जियों की मांग बढ़ेगी।

सब्जियो के भण्डारण की उन्नत तकनीक:

हमारे राज्य में वर्ष 2000 में 80 प्रतिशत सब्जियों का उत्पादन हुआ। अर्थात् ये लगभग 2.77 लाख मिट्रिक टन कम था। सब्जियों की कटाई के बाद से, प्रयोग में लाने तक करीब 25-30 प्रतिशत सब्जियाँ उचित देखभाल और भंडारण के अभाव में नष्ट या विकृत हो जाती है। बढ़ती जनसंख्या के साथ-साथ सब्जियों की माँग भी बढ़ेगी। भूमि की सीमितता के कारण पैदावार में वृद्धि भी एक सीमा तक होगी। अत: भंडारण में उन्नत विधि का प्रयोग बीच के इन नुकसानों को कम करने में सहायक होगा।

सब्जियों का सही भंडारण, इनमें होने वाली श्वसन क्रिया को स्थिर या कम करके एवं नमी (आर्द्रता) बनाए रखकर किया जाता है जिससे इनकी निधानी आयु (शेल्फ लाइफ) कुछ दिनों के लिए बढ़ जाती है। अत: ताजे सब्जियों का भंडारण किसानों को सही समय पर उचित मूल्य दिलाने में कारगर साबित हो सकता है, क्योंकि इस तरह से किसान सब्जियों को सस्ते भाव में बेचने से बच सकेंगे।

ताजे सब्जियों का भंडारण उनकी किस्म पर निर्भर करता है। प्राकृतिक भंडारण में आलू, अदरख को पूर्ण विकसित होने के बाद स्वस्थान अर्थात् भूमि के अन्दर कई माह तक रखा जा सकता है।

निम्नतम् तापमान पर फल और सब्जियों का भंडारण कर इनकी श्वसन की रफतार एवं सड़न / गलन पैदा करने वाले जीवाणुओं / कीटों का विकास कम कर सब्जियों के भंडारण की आयु सीमा बढ़ाई जाती है। सब्जियों के भंडारण के लिए शीतगोदामों / शीतगृहों और शीतकक्ष का प्रयोग किया जाता है।

शीतगृहों में तापमान नियंत्रण, अमोनिया, फ्रीओन आदि गैसों के द्वारा किया जाता है। इन शीतगृहों को सुचारू रूप से चलाने के लिए उर्जा के रूप में बिजली का प्रयोग किया जाता है। इन गृहों के तापमान में थोड़ा भी अंतर वहाँ की आर्द्रता को प्रभावित कर सकता है जिसका कुप्रभाव भंडारित सब्जियों पर पड़ सकता है। अत:इन गृहों में तापमान का सही नियंत्रण जरूरी है।

सब्जियों के भंडारण की उन्नतशील तकनीकों के अंतर्गत नियंत्रित कक्ष एवं रूपान्त्रित कक्ष भी आते हैं। नियंत्रित कक्ष में कार्बन डाइऑक्साइड और ऑक्सीजन की मात्रा को नियंत्रित कर सब्जियों को तरोताजा रखा जाता है। रूपान्त्रित कक्ष सिद्धांत में नियंत्रित कक्ष से भिन्न है, क्योंकि यहाँ गैसों के अनुपात का नियंत्रण सुनिश्चित नहीं है। इस कक्ष में अनेक प्रकार के पैकेज/पार्सल, लकड़ी के बक्सा, प्लास्टिक की थैली, अल्युमिनियम की चादर (सीट) इत्यादि का प्रयोग कर सब्जियों की निर्धारित आयु बढ़ाई जाती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा नई दिल्ली के फल एवं उद्यान प्रौद्योगिकी विभाग के द्वारा सब्जियों के भंडारण के लिए देशी कोल्ड स्टोरेज बनाया गया है। ये शीतकक्ष वाष्पन द्वारा शीतन प्रणाली पर आधारित है। इसके निर्माण में कम लागत वाले और आसानी से उपलब्ध होने वाले पदार्थों (जैसे ईंट, बालू, खसास/पुआल, बाँस, बोरी) का उपयोग किया गया है। इसके परिचालन में बिजली की आवश्यक्ता नहीं होती है एवं जून माह की गर्मियों में जब बाहर का तापमान 40-43 डिग्री सेंटीग्रेड के करीब होता है तब भी यहाँ का तापमान बाहरी परिवेश से 5 डिग्री सेंटीग्रेड कम रहता है। इस कक्ष की आपेक्षित आर्द्रता 85-90 प्रतिशत के आसपास रहती है जबकि बाहर ये 20-25 प्रतिशत होता है।

झारखंड राज्य में यह तकनीक सब्जियों के भंडारण में कारगर हो सकती है। यहाँ किए गए प्रयोगों में बैंगन, भिंडी और पत्तेदार सब्जियों की आयु (शेल्फ लाइफ) मई-जून की तीव्र गर्मी में भी क्रमशः 8, 5 और 3 दिन थी जबकि बाहर यह 3, 2 और 1 दिन से भी कम था।

उन्नत तकनीक के अंगीकरण सें लाभः

- सब्जियों की उन्नत, संकर, बे-मौसमी, कीट, बीमारी रोधक और विशेष पदार्थों को बनाने के किस्मों के विकसित होने से सब्जियों की लाभदायक खेती संभव है।
- सब्जियों के पौधा को किसी भी मौसम में सफलापूर्वक उगाया जा सकता है।
- सब्जियों के उन्नत बीजों का सफल उत्पादन किया जा सकता है।
- रासायनिक, जैविक और जीवाणु उर्वरकों का संतुलित प्रयोग सब्जियों का उत्पादन बढ़ानें के साथ स्वस्थ्य के दृष्टिकोण से भी लाभप्रद है।
- सब्जियों की उत्पादन तकनीक, परिवेश (जलवायु और मिट्‌टी) के अनुकूल रहने से अधिक आमदनी की प्राप्ति हो सकती है।
- पौधों में वृद्धि नियामकों एवं सूक्ष्म तत्वों के सही प्रयोग की तकनीक, चमत्कारिक रूप से सब्जियों के उत्पादन में वृद्धि कर सकती है।
- सस्ते पॉलीहाउस विधि से सब्जियों की अगेती और सघन खेती कर दुगुणा लाभ कमाया जा सकता है।
- खेती की विभिन्न प्रणालियाँ जैसे, अंतः खेती, सहयोगी एवं रिले खेती को सब्जियों के फसल-चक्र में सम्मिलित कर प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक पैदावार प्राप्त किया जा सकता है।
- सब्जियों में होने वाले नुकसान को उन्नत भंडारण तकनीक अपनाकर कम किया जा सकता है, साथ ही समय-समय पर इनका वितरण कर लाभ कमाया जा सकता है।

अंगीकरण में समस्याएँः

- आज भी हमारे राज्य में किसान परम्परागत ढंग से सब्जी उत्पादन कर रहे हैं। उन्नत तकनीक की जानकारी और तकनीक का प्रत्यक्ष प्रदर्शन का अभाव के कारण बृहत तौर पर इनका अंगीकरण नहीं हो सका है।
- कीट और रोगनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग करना।
- सब्जियों की खेती को यहाँ जीविकोपार्जन का साधन के रूप में लिया जाता है, न कि व्यावसायिक स्तर पर।
- समय से सब्जियों के उन्नत किस्म के बीजों का नहीं मिल पाना।
- उन्नत तकनीक के अंगीकरण के शुरूआती दौर में अधिक लागत का लगना।
- वर्षा पर आधारित होकर सब्जियों की खेती करना।
- उर्वरकों का संतुलित प्रयोग नहीं करना।

लाभ-मूल्य विश्लेषण:

राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी परियोजना के तहत किसानों के खेतों पर किए गए अनुसंधान से प्राप्त आर्थिक लाभ का विवरण नीचे दिए गए हैं:

सब्जी	कुल लागत (रू./हे.)	शुद्ध लाभ (रू./हे.)	लाभ-लागत अनुपात
टमाटर	22634.00	43766.00	1.93
फूलगोभी	24876.88	53057.45	2.13
आलू	25120.00	63152.00	2.51
मटर	18200.00	26550.00	1.46
कद्दूवर्गीय सब्जी	20271.06	43543.44	2.15
प्याज	28660.00	51340.00	1.79
अदरख	43186.00	67429.60	1.56
शकरकंद	10676.00	55631.20	3.46

इस प्रकार सब्जियों की खेती में उन्नत तरीके अपनाएँ जाएं तो रोजगार के अवसर प्राप्त होने के साथ आर्थिक स्वावलम्बन की प्राप्ति होगी।

प्रमुख अनुशंसाएँ:

- उन्नत विधि से पौधशाला का प्रबंधन कर स्वस्थ्य और रोग मुक्त पौध तैयार करना।
- रसायनिक रोग अथवा कीटनाशकों के स्थान पर प्रतिरोधी किस्मों और जैविक रोग या कीटनाशकों का प्रयोग करना।
- सब्जियाँ जैसे(टमाटर, मटर और अदरख आदि को लगाने के बाद इनके जमीनी सतह को ढक कर (मल्चींगद्ध रखना जिससे खेत की नमी बरकरार रहे और खर-पतवार नष्ट हो जाय।
- वृद्धि नियामकों और सूक्ष्म तत्वों का सही प्रयोग किया जाना चाहिए।
- रसायनिक और जैविक पोषक तत्वों का संतुलित प्रयोग करना।
- खेती की विभिन्न प्रणालियों को सब्जियों के फसल-चक्र में सम्मिलित करना।
- सस्ते पॉलीहाउस तकनीक अपनाकर सब्जियों की अगात अथवा बे-मौसमी खेती करना।
- विभिन्न प्रकार की सब्जियों के सफल उत्पादन के लिए इनके सस्य तकनीकों का पूर्ण ज्ञान रखना।
- व्यावसायिक स्तर पर कुछ विदेशी सब्जियाँ जो यहाँ के पारिस्थितिकी के लिए उपयुक्त हैं जैसे ब्रोकोली, घरकिंस, बेबी-कोर्न, ब्रूसेल्स स्प्राउट्स आदि की खेती करना।
- विभिन्न फसलो एवं किस्मों को उनके निर्धारित समय में लगाना।
- धान की कटनी के बाद खेतों की नमी का उपयोग कद्दूवर्गीय सब्जियों को लगाकर करना।
- सब्जियों का भंडारण के लिए 'शून्य उर्जा वातानुकूलित कक्ष' (शीत कक्ष) का निर्माण करना।
- धान की कटनी के बाद खेतों की नमी का उपयोग कद्दूवर्गीय सब्जियों को लगाकर करना।
- सब्जियों का भण्डारण के लिए ''शून्य ऊर्जा वातानुकूलित कक्ष'' (शीतकक्ष का निर्माण करना)।

▲▲▲

सब्जियों में समेकित रोग प्रबंधन

डॉ जय प्रकाश एवं डॉ. शिवेन्द्र कुमार
बागवानी एवं कृषि वानिकी शोध कार्यक्रम (हार्प), प्लाण्डू, राँची - 834010 (झारखण्ड)

झारखण्ड में अधिकांश जमीन ढालू एवं पठारी है। यहाँ कि जलवायु समशीतोष्ण होने के कारण यहाँ पर सालों भर सब्जियों की खेती होती है। इस प्रदेश में राँची, हजारीबाग, लोहरदगा, गढ़वा, संथालपरगना एवं सिंहभूम जिलों में सब्जियों की खेती अपना विशेष स्थान बनाये हुए है। यहाँ पर टमाटर, बैंगन, खीरा, शिमलामिर्च, मटर, गोभी, प्याज, फ्रेंचबीन, आदि की खेती बड़े पैमाने पर सफलतापूर्वक की जाती है। सब्जियों की खेती में कई तरह की समस्याऐं जैसे कीड़ों तथा रोगों के प्रकोप के फलस्वरूप 10-30 प्रतिशत हानि होती है तथा कभी-कभी शत प्रतिशत फसल इनसे बर्बाद हो जाते हैं। उग्ररूप धारण कर लेने पर रोगों पर नियंत्रण पाना कठिन होता है। वहीं पैदावार व गुणवत्ता पर कुप्रभाव पड़ता है। बैंगन की फोमोप्सिस एवं अंगमारी तथा मिर्च एवं सेम वर्गीय फसलों में एन्थ्रेकनोज घातक बिमारियाँ हैं जो बीज को संक्रमित कर अगली फसल को भी हानि पहुँचाती है। अत: यह आवश्यक है कि इनका निदान उचित समय पर किया जाय। अनुशंसित मात्रा से कम रसायनों का प्रयोग जहाँ रोगों में प्रतिरोधक क्षमता पैदा करता है वहीं अधिक मात्रा में इनका प्रयोग फसल एवं मनुष्यों में विभिन्न विकार पैदा करता है। अत: कीटनाशक अथवा रोगनाशक दवाओं का प्रयोग करते समय पूरी सावधानी बरती जानी चाहिए। इसलिए इन व्याधियों से राहत पाने के लिए समेकित प्रबंधन की आवश्यकता है जो इस प्रकार है -

1. प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग।
2. अगेती रोपाई।
3. व्यवहारिक नियंत्रण (क्लचरल कन्ट्रोल) - गर्मी के मौसम में खेत की जुताई।
4. पलवार (मल्चिंग) द्वारा खरतपवार को नष्ट करना तथा खेत की नमी बनाये रखना।
5. उचित समय पर पानी का प्रयोग तथा अत्याधिक पानी के उचित निकास का प्रबंध करना।
6. जैविक पोषक तत्वों का समुचित मात्रा में प्रयोग करना।
7. खेत में करंज या नीम की खल्ली का प्रयोग करना।
8. वनस्पतिक पदार्थों जैसे नीम, तुलसी, पुटुस (लेनटाना), करंज, सरसों इत्यादि की पत्तियों के घोल के प्रयोग से बीमारी एवं कीड़ों की समस्याओं को कम करना।
9. अनुशंसित फसल चक्र अपनाना।
10. रोग ग्रस्त पत्तियों को इकट्ठा कर जला देना या जमीन में गाड़ देना।
11. भूमि शोधन करना।
12. जैविक फफूंदी नाशक जैसे ट्राईकोडर्मा, संजीवनी, कालीसेना एवं जैविक कीटनाशक जैसे बी.टी. एन.वी.भी. का प्रयोग।

विभिन्न प्रकार के सब्जियों की रोगों के लक्षणों की जानकारी आवश्यक है जो इस प्रकार हैं तथा इनके रोकथाम के उपाय तालिका-1 में प्रदर्शित हैं।

पादगलन या आर्द्रगलन (डैम्पिंग ऑफ)

यह टमाटर, गोभी, मिर्च, मूली, गाजर, शलजम, के नर्सरी में लगने वाले एक मृदाजनित फफूंद जैसे पीथियम तथा राइजोक्टानिया से होता है। इसके लक्षण दो अवस्थाओं में पाये जाते हैं। पहली अवस्था में अंकुरित बीजों का जमीन की सतह से निकलने के पूर्व ही पौधा गल जाता तथा दूसरी अवस्था में बीज अंकुरण के 15 से 20 दिनों के अन्दर जमीन की सतह से पौधों का गलना मुख्य लक्षण है।

पाउडरी मिल्ड्यु (चुर्णिल आसिता)

यह रोग कद्दुवर्गीय सब्जियाँ जैसे (खीरा, लौकी, करैला) पत्तागोभी, फूलगोभी, मूली, शलजम, मटर, भिण्डी, फ्रेंचबीन, बोदी, सेम, टमाटर, मिर्च, बैंगन, प्याज पर मुख्य रूप से पाया जाता है। इसके लक्षण में सफेद मटमैले पाउडरनुमा फफूंद का पत्तों तथा पत्रवृन्तों या फलों पर उपस्थित होना मुख्य है।

रोग प्रतिरोधी किस्में जैसे - मटर के अर्का अजीत, सी.एच.पी.एम.आर.-1, सी.एच.पी.एम.आर.-2, डी.पी.पी.-9411, डी.पी.पी.-9414, जे.पी.-72 एवं खीरा के स्वर्णपूर्णा, स्वर्ण अगेती झारखण्ड के लिए उपयुक्त है।

डाउनी मिल्ड्यु (मृदु रोमिल आसिता)

यह कद्दू वर्गीय सब्जियों, गोभी परिवार के पौधा तथा पौधशाला के नवजात बिचड़ों या खेत में बड़े पौधों के पत्तियों की निचली सतह पर कपास की तरह सफेद मटमैले रंग के फफूंद का आक्रमण, पत्तों की ऊपरी सतह पर काले पीले धब्बों का अनगिनत समूह होता है।

मुरझा रोग

यह एक जीवाणुजनित रोग है जो सोलनेसी परिवार की सब्जियों जैसे टमाटर, बैंगन, मिर्च एवं आलू में लगता है। इनके जीवाणु मृदा में रहते हैं। इसका प्रकोप गर्मी, बरसात में ज्यादा तथा जाड़े के मौसम में कम होता है। इसका मुख्य लक्षण फूलने के समय पौधे का अचानक मुरझाकर सूख जाना है। जिससे काफी नुकसान होता है। इसकी पहचान आसानी से तने के कटे भाग से दूधनुमा स्राव को पानी में (उज टेस्ट) देखकर की जा सकती है।

रोग प्रतिरोधी किस्मों से उत्पादन : टमाटर की स्वर्ण लालिमा, स्वर्ण नवीन, अर्का आभा, अर्का आलोक, अर्का वरदान, बी.टी.-17, शक्ति (एल.ई.-79), बी.टी.-10 एवं बी.टी.-18 संकर किस्मों में अर्का श्रेष्ठ एवं अर्का अभिजीत जीवाणु मुरझा रोग प्रतिरोधी किस्मों की पहचान की गई है। इससे उत्पादन कर लाभ उठाया जा सकता है। इसी प्रकार बैंगन की स्वर्ण श्री, स्वर्ण मणि, स्वर्ण प्रतिभा, स्वर्ण श्यामली, अर्का निधि, अर्का केशव या अर्का नीलकंठ, बी.बी.-7, बी.बी.-11 एवं बी.बी.-44 रोग प्रतिरोधी किस्में हैं।

झुलसा रोग :

क) अगेती अंगमारी : यह फफूंदजनित रोग है जो टमाटर एवं आलू फसलों में मुख्य रूप से होता है। इस रोग के आरंभिक लक्षणों में पत्तों तथा तनों पर काले भूरे रंग के 1-2 संकेन्द्रिय धब्बे बनना तथा रोग की उग्रता की स्थिति में अनगिनत धब्बे बनना है उग्रता की स्थिति में धब्बों का एक दूसरे से मिलकर झुलसा सदृश फैलना तथा पत्तियों का पीला पड़कर झड़ना पाया जाता है। इसके काले भूरे रंग के धब्बे फलों पर भी दिखाई पड़ते हैं जिससे काफी नुकसान होता है।

ख) पिछेती अंगमारी : यह फफूंद जनित रोग है जो टमाटर एवं आलू फसलों में मुख्य रूप से लगता है। इस रोग के लक्षण में पत्तों के किनारों से काले रंग के जलसिक्त धब्बे पाये जाते हैं जिससे पत्ता झुलस जाता है तनों एवं कच्चे फलों पर जलसिक्त धब्बे पाये जाते हैं जिनसे बरसात के मौसम में सड़न प्रारंभ होती है तथा काफी नुकसान होता है।

ग) फोमोप्सिस झुलसा : यह बैंगन का मुख्य फफूंदजनित रोग है। यह रोग ग्रस्त बीजों से फैलता है। इसमें नर्सरी में पत्तों पर काले रंग के धब्बे पाये जाते हैं। तने और पत्तों पर मटमैले भूरे गोलाकार, धंसे धब्बे पाये जाते हैं तथा पत्तों का पीला पड़ना पाया जाता है। फलों पर धब्बा सड़न पैदा करता है जिसमें सड़े एवं सूखे भागों पर पिननुमा अनेकों आकृतियाँ दिखती हैं। बैंगन की बीज उत्पादन के फसल के लिए यह विशेषरूप से क्षतिकारक बीमारी है।

एन्थ्रेक्नोज या काला सूखा रोग :

यह फफूंदजनित रोग है जो मिर्च, टमाटर, बैंगन, कद्दू एवं दाल कुल की सब्जियों में पाया जाता है। इनके भूरे काले रंग के धब्बे पत्तों तथा फलों पर पाये जाते हैं तथा पत्तियों का झड़ना एवं फलों का आकार बिगड़ना इनके मुख्य लक्षण हैं।

स्क्लेरोटीनिया सड़न :

यह फफूंदजनित रोग है जिसके कारण पौधों में जड़ सड़न, पादगलन, तना सड़न तथा फल सड़न के अलग-अलग लक्षण दिखाई देते हैं। बैंगन आदि में तना सड़न, सेम कुल एवं गोभी कुल, के पौधों में फलियों की सड़न प्रमुख हैं। अधिक नम मौसम में यह रोग तेजी से फैलता है। रोगग्रसित भाग पर सफेद भूरे फफूंद की कपासनुमा उपस्थिति के बीच काले भूरे सरसोंनुमा अनेकों स्क्लेरोशिया का होना इस रोग का विशेष लक्षण है।

श्याम (काला) विगलन :

यह फूलगोभी का जीवाणुजनित मुख्य रोग है जो बोरन तत्व की कमी की अवस्था में होता है। इसमें पत्तों के किनारों से V के आकार में पीला पड़ना, सूखना तथा शिराओं का काला पड़ना मुख्य लक्षण हैं तथा उग्रता की अवस्था में पत्तों का आंशिक या पूर्णरूप से सूखना एवं गोभी पर काले भूरे धब्बे दिखाई देना तथा सड़न की गंध होना मुख्य लक्षण हैं।

पीतशिरा मोजैक वाइरस :

यह भिण्डी का मुख्य विषाणुजनित रोग है यह सफेद मक्खी से फैलता है। इसमें पत्तियों की शिरायें चमकीली एवं पीली हो जाती है तथा उग्रता की अवस्था में पूरी पत्तियाँ एवं फल पीले पड़ जाते हैं। पत्तियों के आकार छोटे पड़ने लगते हैं तथा पैदावार घट जाती है।

रोग प्रतिरोधी किस्में : अर्का अनामिका, अर्का अभय, परवनी क्रांति, वी.आर,ओ.-5 तथा वी.आर.ओ.-6 प्रतिरोधी किस्में पायी गई हैं।

मोजैक :

यह सेम वर्गीय एवं सोलनेसी परिवार का मुख्य विषाणुजनित रोग है और लाही से फैलता है। इसमें पत्तियों का सिकुड़ना, शिराओं का चमकीला पीला पड़ना तथा फलियों में विसंगतियाँ पैदा होना इनके मुख्य लक्षण हैं।

लीफ कर्ल या पत्र कुंचन

यह सोलनेसी परिवार टमाटर, आलू, मिर्च, तम्बाकू तथा सेम वर्गीय परिवार का मुख्य विषाणुजनित रोग है इसमें पत्तियों का सिकुड़ना, पौधों का बौना होना तथा पत्तियों का मोटा होना इसके मुख्य लक्षण हैं। यह सफेद मक्खी से फैलता है।

बैक्टीरियल साफ्ट रॉट या जीवाणुज गीला सड़न :

यह मुख्य जीवाणुजनित रोग है जो बैंगन, मिर्च, प्याज, आलू, पातगोभी, फूलगोभी, कद्दू कुल की सब्जियों में लगता है। यह रोग गुदेदार जड़ों तथा तनों को विशेष रूप से आक्रान्त करता है। यह प्राय: भंडार की सभी तरह की सब्जियों एवं फलों में मिलता है किन्तु घाव या चोट लगे, कटे-फटे फलों पर विशेष रूप से लगता है। पहले जलीय छोटे धब्बे बनते हैं ये जल्दी ही बड़े हो जाते हैं। इस प्रकार थोड़े ही समय में ग्रसित भाग सड़ जाता है। जड़ वाली फसलों जैसे गाजर, शलजम, आदि की खेती में रोग लगने पर ऊपर की पत्तियाँ पीली पड़ने पर सूख जाती हैं तथा उकठा के लक्षण दिखाई देते हैं। टमाटर के पक रहे फल ग्रसित होने पर सड़कर गाढ़े रंग में बदल जाता है।

समेकित रोग प्रबंध के लिए सामान्य सुझाव

क) सौर ऊर्जा द्वारा मृदा उपचार :

तैयार किये हुए नर्सरी बेड को गर्मी के दिनों में 150-200 माइक्रोन मोटी पारदर्शी पॉलिथिन की चादर से 30 से 45 दिनों तक ढ़ककर सौरीकरण करें। इसके लिए 400 ग्राम करंज की खल्ली तथा 5 किलोग्राम गोबर की खाद प्रति वर्गमीटर की दर से मिलाकर गहरी सिंचाई दें तथा पूरी अवधि तक क्यारी में नमी संरक्षित रखें। बीज बुवाई से पहले चादर हटा लें, फिर लाईनों में पतली बुवाई करें।

ख) जैविक फफूंदीनाशक द्वारा बीज उपचार :

जैविक फफूंदीनाशक मुख्यत: ट्राईकोडर्मा विरिडी पर आधारित है। यह आलू, हल्दी, अदरक, प्याज, लहसुन, आदि फफूंदजनित फसलों के जड़ सड़न, तना गलन, झुलसा आदि रोगों में प्रभावकारी पाया गया है। साथ ही साथ टमाटर एवं बैंगन के जीवाणुज मुरझा

रोग के लिए भी यह लाभप्रद पाया गया है। इसे फसल बोने के समय 2-4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से प्रयोग करना चाहिए। बाजार में यह विभिन्न नामों से उपलब्ध है जैसे संजीवनी, बायोडर्मा, ट्राईकोडर्मा या मोनिटर-डब्लू.पी (2.5 कि. प्रति हे.) एवं मोनिटर-एस (75 कि. प्रति हे.)।

ग) रसायनिक फफूंदनाशकों के द्वारा :

बेविस्टीन या कैप्टान (2 ग्राम दवा प्रति किलो बीज) से बीज उपचार करें तथा नर्सरी में ब्लूकॉपर-50 (3 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) या रिडोमिल एम.जेड (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) से पौध की ड्रचिंग करें।

तालिका 1 : सब्जियों के रोगजनक एवं रोकथाम के उपाय

रोग के नाम	रोगजनक	रोकथाम
1. डैम्पिंग ऑफ	पीथियम के स्पेपसीस या राइजोक्टोनिया के स्पेसीस	1. सौर ऊर्जा द्वारा भूमि का शोधन 2. जैविक फफूंदीनाशक का प्रयोग 3. बीजोपचार
2. पाउडरी मिल्ड्यु	लौकी कुल- स्यूडोपरनोस्पोरा क्यूबेंसिस मटर-सरीसाइफी पालीगोनाई	1. अगेती फसल लगायें। 2. नर्सरी में पौधे भूमि शोधन के उपरान्त बोयें 3. रोगग्रसित पौधा उखाड़ कर नष्ट कर दें। 4. बीज शोधित कर बोयें। 5. बेविस्टिन या कैराथेन का 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें
3. डाउनी मिल्ड्यु	पैरेनोस्पोरा पारासीटिका	1. जल निकासी का प्रबंध करें। 2. रोगग्रसित पुराने पत्तों को तोड़कर जला दें। 3. ब्लूकॉपर-50 या ब्लाईटाक्स के 0.3 प्रतिशत या डायथेन एम-45 (0.2%) या रिडोमिल एम.जेड (0.2%) घोल का छिड़काव करें।
4. मुरझा रोग	राल्सटोनिया सोलेनेशिरम	1. प्रतिरोधी किस्में लगायें। 2. फसल चक्र अपनायें। 3. करंज की खल्ली 10 क्वि. प्रति हे. के हिसाब से खेत तैयार करते समय अच्छी तरह मिलावें। 4. पौध को हिंग 1.0 ग्राम और हल्दी पाउडर 5 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी के घोल में आधा घंटा डुबोकर लगावें। 5. जल निकासी की समुचित व्यवस्था करें।
5. झुलसा रोग क) अगेती अंगमारी	आल्टरनेरिया सोलनाई	1. दो-तीन वर्षीय फसल चक्र अपनायें। 2. रोगग्रसित पुराने पत्तों को तोड़कर जला दें। 3. बरसात के दिनों में टमाटर के पौधों में खूंटी का सहारा दें।

		4. रोग के लक्षण प्रकट होते ही फफूंदीनाशी कवच 0.2 प्रतिशत या ब्लूकॉपर-50 या ब्लाईटाक्स के 0.3 प्रतिशत या डायथेन एम-45 के 0.20 प्रतिशत घोल का 10 दिनों के अन्तराल में तरल साबुन मिलाकर छिड़ाकाव करें।
ख) पिछेती अंगमारी	फाइटोफथेरा इनफेसटेन्स	1. रोगग्रसित पुराने पत्तों को तोड़कर जला दें। 2. जाड़े के मौसम में समुचित सिंचाई करें। 3. बरसात के मौसम में पौधों को खूंटी का सहारा दें। 4. जल निकासी का समुचित प्रबंध करें। 5. फफूंदनाशी जैसे ब्लूकॉपर-50 या ब्लाईटॉक्स के 0.3%, रिडोमिल एम.-जेड. अथवा डायथेन एम-45 के 0.20% घोल का छिड़काव 7 से 10 दिनों के अन्तराल में तरल साबुन मिलाकर करें।
ग) फोमोप्सिस ब्लाईट	फोमोप्सिस वैक्ससेन्स	1. निम्न प्रकार से बीजोपचार करें : क) गर्म पानी (52^0 से.) से 30 मिनट तक या ख) जैविक फफूंदीनाशक से या ग) बेविस्टिन 2 ग्राम/किलो की दर से 2. रोगग्रस्त पत्तियों एवं फलों को नष्ट करें 3. बेविस्टिन 0.1 प्रतिशत का 10 दिनों के अन्तराल में छिड़काव करें
6. एन्थ्रेक्नोज	कालेटोट्राइकम लिण्डेमुथियेनम एवं अन्य स्पेसीस	1. रोगग्रस्त पत्तियों एवं फलों को नष्ट करें। 2. रोग रोधी प्रजाति स्वस्थ बीज बोयें। 3. बीजोपचार फोमोप्सिस ब्लाईट की तरह करें। 4. बेविस्टिन 0.1 प्रतिशत या कवच के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
7. स्क्लेरोटीनिया	स्क्लेरोटीनिया स्पेसीस	1. फसल चक्र अपनायें। 2. जलनिकासी का प्रबंध करें। 3. डाईथेन एम-45 का 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
8. श्याम (काला)	बेरोन तत्व की कमी तथा	1. गर्म पानी से बीजोपचार (52^0 से. पर 30 मिनट तक करें)
विगलन	जैन्थोमोनस कम्पेसट्रिस	2. रोगग्रस्त पत्तियों एवं फलों को नष्ट करें। 3. रोपाई के 10 दिनों के बाद से बोरिक एसिड का 3 से 4 बार 25 ग्राम प्रति 20 लीटर पानी में घोल बनाकर तरल साबुन के साथ छिड़काव करें।

9. पीतशिरा मोजैक वाइरस	वाइ.बी.एम.भी	1. प्रतिरोधी किस्में लगायें। 2. आरंभ से रोगग्रस्त, पत्तियों एवं फलों को नष्ट करें। 3. कीटनाशी दवा जैसे नीम आधारित भेनगार्ड (4 मिली.) या रसायन आधारित डेमोक्रान या मोनोक्रोटोफास या नुवाक्रोन या मोनोसिल (1 मिली.) या रोगर (1.25 मिली.) प्रति लीटर पानी का 10 दिनों के अन्तराल में 3 छिड़काव करें।
10. मोजैक	पोटेटो वाइरस एक्स	पीतशिरा मोजैक वाइसर की तरह।
11. लीफ कर्ल या पत्र कुचंन	पोटेटो वाइरस एक्स सी.एम.वी.	पीतशिरा मोजैक वाइरस की तरह।
12. बैक्टीरियल साफ्टराट	इरविना कैरेटोवोरा तथा इरविनया की स्पेसीस	1. भंडार में कटे-फटे, रगड़े या चोट खाये फल न रखें। 2. भंडार गृह की दीवारों फर्श को फर्माल्डिहाइड की (12 मिली. प्रति लीटर पानी) अथवा तूतिया (20 ग्राम प्रति लीटर पानी) के घोल से अच्छी तरह धो लें। 3. भंडार गृह का ताप 40^0 से. से कम रखें। 4. टमाटर की खड़ी फसल पर 0.25 प्रतिशत ताम्र युक्त रसायन का छिड़ाकाव करें।

▲▲▲

समेकित कीट प्रबंधन

डॉ. पी. के. सिंह
क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, (बिरसा कृषि विश्वविद्यालय), दुमका - 814101 (झारखण्ड)

झारखण्ड राज्य अपनी आवश्यकता के अनुकूल उत्पादन नहीं कर पा रहा है, परन्तु राज्य में फल और सब्जी के उत्पादन के साथ-साथ पुष्पोत्पादन, औषधीय एवं सुगन्धित पौधे की खेती की अपार संभावना को देखते हुए सरकार द्वारा कृषि एक्सपोर्ट जोन की स्थापना की जा रही है। अधिक उत्पादन के लिए जहाँ उन्नत किस्में और उन्नत प्रौद्योगिकी अपनाना आवश्यक है वही फसल सुरक्षा के उपाय करना भी बहुत आवश्यक हैं। ऐसी परिस्थिति में समेकित कीट प्रबंधन अपना कर खेती द्वारा उपजाये गये फल, शाक एवं सब्जियों और अन्य खाद्यान्नों की गुणवत्ता में काफी सुधार लाया जा सकता है और ये उत्पाद स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अधिक अच्छे होंगे। हमारे उत्पाद पर कीटनाशकों का अवशेष होने के कारण अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। एग्रो-एक्सपोर्ट जोन बनाने के बाद इस राज्य के किसानों को यह ध्यान रखना होगा कि कहीं उसके उत्पाद पर कीटनाशकों का अवशेष तो नहीं है। ऐसी परिस्थिति में उनके उत्पादों अंतर्राष्ट्रीय मानक के अनुरूप नहीं रहने के कारण उन्हें उचित बाजार मूल्य नहीं मिल पायेगा। साथ ही साथ रसायनों से उपचारित भोज्य पदार्थ का मनुष्यों एवं पशुओं द्वारा उपयोग करने पर कीटनाशी अवशेषों के कारण उनकी स्वास्थ्य की समस्या आयेगी।

पर्यावरण की सुरक्षा, स्वास्थ्य की समस्या एवं धन के इतने बड़े पैमाने पर हो रहे अपव्यय को रोकने तथा प्रदूषण रहित उत्पादन लेने के लिए इस राज्य के किसान को समेकित कीट प्रबंधन तकनीकी का इस्तेमाल कर कम लागत पर प्रदूषण रहित कीट नियंत्रण कर सकते हैं।

देश में जलवायु के अनुसार अनेक प्रकार के फसलें उगाई जाती है। प्रत्येक फसल की उत्पादन क्षमता अलग-अलग होती है। ऐसा देखा जाता है कि लगभग सभी फसलों की भरपूर उपज नहीं मिल पाती है। अधिक उपज न मिलने के अनेकों कारण हो सकते हैं, इन कारणों में हानिकारक कीट एक प्रमुख कारण है। बीजारोपन से लेकर फल तैयार होने तथा भंडारण तक विभिन्न अवस्था में हानिकारक कीट हमारे फसलों को नुकसान पहुँचाते है।

भारत वर्ष में लगभग 90,000 टन कीटनाशकों का उत्पदान किया जा रहा है। जिसका 63 प्रतिशत भाग कृषि क्षेत्र में कीटनाशको के रूप में प्रयोग होता है। यहाँ आश्चर्यजनक बात यह है कि कृषि कार्यो हेतु उपयोग में लाये जा रहे कुल कीटनाशकों का 76 प्रतिशत भाग केवल चार प्रमुख फसलों कपास, धान, ज्वार और गेहूँ में कीट नियंत्रण हेतु प्रयोग किया जा रहा है। इससे इन फसल उत्पादकों की विषाक्ता का अंदाज लगाया जा सकता है। दूसरे देशों द्वारा प्रयोग की जा रही कीटनाशकों की प्रति हेक्टेयर मात्रा के मुकाबले हमारे देश में बहुत कम कीटनाशकों का प्रयोग किया जा रहा है। उदाहरणार्थ - जापान 10,000 ग्रा0/हे., अमेरिका 1,500 ग्रा./हे. जबकि भारत में 400 ग्रा./हे.। इसके बावजूद हमारे किसानों द्वारा कुछ राज्यों में इनका अत्यधिक प्रयोग हो रहा है जबकि झारखंड राज्य में सब्जियों तथा अन्य व्यवसायिक फसलों पर इसका अत्यधिक प्रयोग हो रहा है।

कीटनाशी रासायनों का अत्यधिक एवं अविवेकपूर्ण उपयोग करने से होने वाली समस्या :

❖ स्वास्थ्य एवं पर्यावरण संबंधी समस्या : कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग से बालकों में विकृति, यकृत विकार, हृदय रोग, स्नायुविक रोग, गुर्दारोग से लेकर कैंसर एवं प्रजनन क्षमता का ह्रास आदि असाधारण किस्म की शारीरिक एवं मानसिक विकृतियॉ कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से सामने आ रही है।

❖ कीटनाशक रसायनों के उपयोग से कई जहरीले तत्व मृदा और जल में मिश्रित हो जाते हैं और प्रदूषण फेलाते हैं। मृदा और जल जो सभी जीवों के जीवन का आधार है, प्रदूषण से प्रभावित होकर सभी प्रकार के जीवन के लिए खतरा बन गया है।

❖ पौधों एवम् पशु-पक्षियों की बहुत सी प्रजातियां विनाश के कगार पर हैं। कीटों ने अपनी शारीरिक क्रिया प्रणाली में परिवर्त्तन करके इनके प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न कर ली है। कीट को लगभग 428 प्रजातियाँ विभिन्न कीटनाशी रासायनों के प्रति अवरोधी गुण विकसित कर चुकी है।

- प्राकृतिक शत्रुओं के अभाव में कीट विशेष पुनः हानिकारक कीट का स्तर प्राप्त कर लेता है तथा अमुख्य हानिकारक कीट मुख्य हानिकारक कीटों में बदल जाते हैं। गौण हानिकारक कीटों का विकास होना।
- परजीवी, परोपजीवी, परागण करने वाले कीटों की वृद्दि, विकास एवं संख्या में बढ़ोतरी पर विपरीत प्रभाव।
- कीटनाशी रसायनों से उपचारित सभी भोज्य पदार्थो में कीटनाशी अवशेषों का होना।
- अंतर्राष्ट्रीय बाजार में उचित मुल्य न मिलना।

एक अनुमान के तहत हमारे देश में 6000 से 7000 करोड़ रूपये मूल्य का अनाज कीड़ों तथा अन्य हानिकारक जीवों द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। नीचे के तालिका में अलग-अलग श्रेणी के हानिकारक जीवों से हुई अनुमानित हानि तथा सापेक्ष मुल्य निम्नलिखित है :

हानिकारक जीव	हानि का प्रतिशत	अनुमानित मूल्य (करोड़ में)
खर-पतवार	33.00	1980
पौधों के रोग	26.00	1560
हानिकारक कीट	20.00	1200
चूहे	6.00	360
भंडार गृह के कीट	7.00	420
अन्य जीव	8.00	480
योग	100.00	6000

उपरोक्त वर्णित समस्या काफी गंभीर है, जिसमें पर्यावरण की सुरक्षा एवं धन के इतने बड़े पैमाने पर हो रहे नुकसान को रोकने हेतु समेकित कीट प्रबंधन तकनीकी का विकास किया गया है, जिसमें कम लागत पर प्रदूषण रहित कीट नियंत्रण संभव है।

समेकित कीट प्रबंधन :

फसल संरक्षण की ऐसी विधियाँ अपनाना, जिसमें सभी एकल एवं सम्मिलत नियंत्रण विधियों का तार्किक उपयोग हो, जिससे पर्यावरण की सुरक्षा के साथ-साथ फसल लागत मूल्य भी कम किया जा सके एवं हानिकारक कीटों की संख्या एक निर्धारित आर्थिक हानि के स्तर से उपर न बढ़ सके तथा परभक्षी, परजीवियों एवं अन्य जन्तुओं (मित्र कीट) को न्यूनतम क्षति पहुँचे तथा वह विधि सामाजिक रूप से स्वीकार हो, ऐसे फसल संरक्षण को ''समेकित कीट प्रबंधन'' कहते हैं।

कीट प्रबंधन के आवश्यक अवयव :

1. हानिकारक कीटों की प्रजातियों की सही पहचान करना।
2. प्रमुख हानिकारक कीटों एवं दूसरे ऐसे कीटों जिनमें हानिकारक कीट का स्तर प्राप्त करने की क्षमता है, का सही मूल्यांकन और समय-समय पर पर्यवेक्षण करते रहना चाहिए।
3. हानिकारक जीवों की अल्प, मध्य एवं दीर्घकालिक प्रकोप की संभावनाओं के पुर्वानुमान की उचित व्यवस्था।
4. कीटों के प्रति अवरोधी किस्मों का चुनाव, विकास एवं उपयोग करना चाहिए।
5. कीटों के प्रति सहनशील फसल प्रजाति की बोआई नहीं करनी चाहिए।
6. कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं को (मित्र कीटों) को संरक्षण प्रदान करना चाहिए।
7. कीटनाशी रसायनों का आवश्यकतानुसार न्यायोचित उपयोग।

8. गलत फसल प्रणाली को बढ़ावा नहीं देना चाहिए।

9. देशज तकनीकी ज्ञान का प्रसार तथा कीट के नियंत्रण में समावेश।

समेकित कीट प्रबंधन के साधन :

हानिकारक एवं कष्टदायक कीटों से होने वाली प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष हानि से बचने के लिए समेकित कीट प्रबंधन का फसलों पर लाभप्रद प्रयोग करने हेतु इनको कई भागों में बाँटा जा सकता है। आवश्यकतानुसार निम्नलिखित कृत्रिम विधियों को अपनाकर कीटों को आर्थिक क्षति के स्तर से नीचे रखा जा सकता है।

1. कर्षण एवं व्यवहारिक विधि : फसल उत्पादन में परम्परागत प्रयोग की जाने वाली सस्य क्रियाओं में थोड़ा-बहुत परिवर्त्तन करके हानिकारक कीटों के आक्रमण एवं क्षति से फसल को बचाने की प्रक्रिया को ''कर्षण एवं व्यवहारिक कीट नियंत्रण'' कहते हैं। इस विधि में किसानों को अलग से कोई लागत लगाने की आवश्यकता नहीं होती है। इसमें केवल पहले से अपनाई जा रही सस्य क्रियाओं में ही परिवर्त्तन करके कीट विशेष की वृद्धि एवं विकास के लिए प्रतिकूल परिस्थितियाँ पैदा कर उनकी संख्या को आर्थिक क्षतिग्रस्त स्तर पर पहुँचने से रोका जा सकता है। इस विधि की सफलता के लिए आवश्यक है कि हानिकारक कीट के स्वभाव, जीवन-इतिहास, मौसमी जीवन-चक्र, आदि के विषय में पूर्ण रूप से जानकारी होना आवश्यक है। इस विधि में निम्नलिखित उपायों को प्रयोग में लाया जाता है :

   1. गर्मी में खेत की जुताई। 2. उचित फसल चक्र अपनाना। 3. फसल अवशेषों को कटाई के बाद नष्ट करना। 4. स्वस्थ एवं साफ सुथरे बीजों का उपयोग। 5. बीजोपचार हेतु अनुशंसित मात्रा में रसायनों का प्रयोग। 6. बोआई की तिथियों में आवश्यकतानुसार थोड़ा फेर बदल करना। 7. उचित एवं संतुलित उर्वरकों का उपयोग करना विशेषेकर नाइट्रोजन पूरक उर्वरकों का बहुत ही संतुलित प्रयोग करना चाहिए। 8. खर-पतवारों आदि से फसल को मुक्त रखना। 9. मिश्रित खेती करना। 10. उचित जल प्रबंध। 11. मुख्य फसल के आस पास प्रलोभक फसल की बोआई। 12. संस्तुति मात्रा से थोड़े अधिक बीज का प्रयोग। 13. जमीन के स्तर से फसल की कटाई।

2. यांत्रिक विधि : मनुष्यों द्वारा स्वयं या किसी मशीन/यंत्र/उपकरण की सहायता से कीट विशेष की किसी भी अवस्था को नष्ट करने या नियंत्रित करने की प्रक्रिया को ''यांत्रिक नियंत्रण'' कहते हैं।

   यह विधि यद्यपि तत्काल प्रभावी होती है तथापि इससे श्रम एवं समय बहुत लगता है और यही कारण है कि यह विधि किसानों द्वारा कम ही अपनाई जाती है। इसमें निम्नलिखित प्रक्रियाएँ आती है -

   1) हाथों द्वारा कीटों के किसी भी अवस्था को एकत्रित करके नष्ट करना। 2) जाली की मदद से कीटों को एकत्रित करके नष्ट करना। 3) कीटों द्वारा निर्मित छिद्रों में तार या अन्य नुकीली चीज डालकर विकसित हो रहे कीटों को नष्ट करना। 4) पेड़ों के तनों पर पॉलिथीन की पट्टी बांधना। 5) बाड़ लगाना। 6) फलों के बचाव हेतु थैली बांधना। 7) खेतों के चारों तरफ खाई खोदना। 8) फसल पर रस्सी खींचकर कीटों को गिराना। 9) विभिन्न प्रकार के ट्रेप्स का प्रयोग करना।

(1) फेरोमोन ट्रेप्स : फेरोमोन एक प्रकार का पदार्थ होता है, जिसके द्वारा कीट अपनी जाति के कीट को संदेश देते हैं या विपरित लिंग के कीड़ों को समागम के लिए अपनी ओर आकर्षित करते हैं। ऐसे पदार्थ को ''सेम्यौकेमीकल्स'' कहते हैं। आज कल इस तकनीक को व्यापक पैमाने पर अपनाया जा रहा है। ये पदार्थ मित्र कीटों, अन्य जानवरों तथा पौधों को हानि नहीं पहुँचाते हैं तथा इन रसायनिक पदार्थ की सूक्ष्म मात्रा भी कीटों के जीवन पर अधिक प्रभाव डालती है। इनका पेड़ पौधे तथा अन्य जीवों पर बचे हुए पदार्थ का विषैला प्रभाव नहीं पड़ता है।

प्रयोग की विधि :

1. पर्यवेक्षण (मोनिटरिंग) : इसके अन्तर्गत एक या दो सेक्स फेरोमोन्स के ल्यूर को उपयुक्त ट्रेपों में लगाकर खेत में रख देते हैं। फसल को नुकसान करने वाले नर कीड़े ट्रेपों में फंसने आरंभ हो जाते हैं। जब इनकी संख्या ज्यादा बढ़नी आरंभ हो जाय तो निर्णय लेना होता है कि कीट नियंत्रण की कौन सी विधि अपनाई जाय।

2. अधिक मात्रा में कीट पकड़ना (मास ट्रेपिंग) : सेक्स फेरोमोन्स के ल्यूर को ट्रेप में लगाकर खेत में रख देने से आस-पास के अधिकतर नर कीड़े ट्रेपों में फँसकर मर जाते हैं। इस प्रकार नर कीड़े की अनुपस्थिति में मादा कीड़ें अण्डे नहीं देती, अगर देती भी है तो उससे बच्चे पैदा नहीं होती और न ही फसल को इनसे कोई नुकसान होता है।

3. समागम में बाधा : सेक्स फेरोमोन्स को खेतों में भिन्न-भिन्न स्थानों पर लगा देने से नर कीड़े भ्रमित हो जाते है और यह नहीं जान पाते की वास्तव में फसल को हानि पहुँचाने वाले कीड़ों की मादा कहाँ है और वे उनसे समागम नहीं कर पाते। ऐसी अवस्था में अंडो से बच्चे न निकलने के कारण फसल को इनके द्वारा होने वाली हानि से बचाया जा सकता है।

फेरोमोन ट्रेप द्वारा विभिन्न कीटों को नियंत्रित करने हेतु उपयुक्त ल्यूर का विवरण :

क्र.	कीटों का नाम	कीटों का वैज्ञानिक नाम	ल्यूर
1.	अमेरिकन बालवर्म	*होलिकोवर्पा आरमीजरा*	हैलील्यूर
2.	तंबाकू की सूंडी	*स्पोडोप्टेरा ल्यूटूरा*	स्पोडोल्यूर
3.	पिंक वाल वर्म	*पीकटोनोफोरा गोसीपियेला*	पिकटनोल्यूर
4.	स्पोटेड बाल वर्म	*ईरियस बिटेला*	ईरविटल्यूर
5.	स्पाइनी बाल वर्म	*ईरियस इनसुलना*	ईरिन ल्यूर
6.	वैगन का फल तथा प्ररोह वेधक कीट	*ल्यूसिनोडीस आबोंनेलिस*	ल्यूसिडो ल्यूर

2. लाइट ट्रेप : बहुत सारे हानिकारक कीट रात्रिचर होते हैं और प्रकाश की और आकर्षित होते हैं उन्हें पकड़ने या मारने के लिए प्रकाश का प्रयोग किया जाता है। विभिन्न माडलो के लाइट ट्रेप बाजार में उपलब्ध है। लाइट ट्रेप के माधयम से कीट की तीव्रता तथा उनकी बदलती हुई जनसंख्या तथा उनकी सक्रियता की जानकारी मिलती है जिसके द्वारा कीट की अनुमानित प्रकोप की भविष्यवाणी करने में मदद मिलती है।

3. फीशमील ट्रेप : नमीयुक्त मछली को ट्रेप में रखकर सुट फलाई कीट को नियंत्रण किया जाता है। फीशमील को प्लास्टिक के जार में रख देते है तथा उसे कीप से जोड़ देते हैं। कीप के नीचे रूई में जहरीली दवा मिला कर रख देते हैं। कीट ट्रेप होकर मर जाते हैं।

4. चिपचिपे प्रपंच (स्टीकी ट्रेप) : यह ट्रेप साधारणत: छोटे आकार के कीड़ों, जो हवा के माधयम से एक स्थान से दूसरे स्थान भ्रमण करते हैं के नियंत्रण हेतु प्रयोग किया जाता है। इसमें आयताकार के ग्लेवनाइज्ड सीट या टीन पर चिपचिपे पदार्थ जैसे अण्डी का तेल, वैसलीन इत्यादि लगा देते हैं। कीट के आकर्षित होने के स्वभाव के अनुसार ट्रेप का रंग रखा जाता है। सफेद रंग अरहर के फल मक्खी, पीला रंग माहू तथा हरा रंग सफेद मक्खी के लिए उपयुक्त होता है।

3. **भौतिक विधि :** इस विधि के अंतर्गत भौतिक कारकों में हेर-फेर करके कीटों की वृद्धि एवं विकास के लिए प्रतिकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर उन्हें क्षतिग्रस्त स्तर तक पहुँचाने से रोकना सम्मिलित है। मुख्य भौतिक कारक निम्नलिखित है :

1. तापक्रम में परिवर्त्तन करके।
2. आर्द्रता में परिवर्त्तन करके।
3. ध्वनि का प्रयोग

4. **जैविक नियंत्रण विधि :** हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं का पता लगाकर पहचान कर एकत्र कर अथवा प्रयोगशाला में अधिक संख्या में पालकर आवश्यकतानुसार हानिकारक कीटों की रोकथाम हेतु उनका प्रयोग करना ''जैविक नियंत्रण'' कहलाता है।

सामान्यत: संतुलित पर्यावरण में कीट अपने स्वाभाविक शत्रुओं द्वारा नियंत्रण में रखे जाते हैं। जैसे ही यह नाजुक संतुलन बिगड़ता है कीटों की संख्या बढ़ने लगती है।

जैविक नियंत्रण में निम्नलिखित बिन्दुओं पर बल देना चाहिए :

1. प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण : प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण से तात्पर्य यह है कि विभिन्न कृषि क्रियाओं को करते समय प्राकृतिक शत्रुओं के आवासों एवं उनके खाद्य पदार्थों को नष्ट होने से बचाना चाहिये। इसके अलावा जहां तक संभव हो हर तरह की फसलों को उगाना चाहिए जिससे जैव विविधिता बनी रहती है तथा प्राकृतिक शत्रुओं को वैकल्पिक आश्रय एवं भोजन आदि मिल जाता है।

   गन्ने की कटाई करते समय हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि गन्ने की पत्तियों को न तो जलाया जाय और न ही उसे खेत से बाहर ले जाकर फेंका जाय। क्योंकि गन्ने के मुख्य कीट पाइरिला के शत्रु कीट इपीपायपस के प्यूपा प्रचुर मात्रा में गन्ने की पत्तियों से चिपके रहते है जो मानसून आने से पहले प्यूपल अवस्था से बाहर निकल कर पाइरिला कीट को प्रारंभिक अवस्था में ही खत्म कर देते हैं।

2. प्राकृतिक शत्रुओं का प्रयोग : इसमें प्राकृतिक शत्रु विशेष को मंगाना, कृत्रिम रूप से पालकर संख्या में बढ़ोत्तरी करना तथा हानिकारक कीट विशेष के नियंत्रण हेतु उपयोग में लाना है। इसके अंतर्गत शत्रुओं में परभक्षी (पकड़ कर खाने वाले), परजीवी (कीटों के शरीर में पलने वाले), पैरासाइटॉएड (कीटों के शरीर में रहकर अपना जीवन पुरा करने के बाद में हानिकारक कीट को नष्ट करने वाले) आते हैं। इसके अलावा अनेक पक्षी भी कीट परभक्षी होते हैं।

   आजकल ट्राईकोग्रेमा परजीवियों की बहुत सारी प्रजातियों का प्रयोग कीट नियंत्रण में किया जा रहा है। यह ट्राइकोकार्डस के रूप में उपलब्ध है। एक ट्राइकोकार्डस पर लगभग 20,000 परजीवी अंडे होते हैं। इस ट्राइकोकार्ड के छोटे-छोटे टुकड़े डाक टिकट की तरह अलग-अलग किये जा सकते हैं। इन्हें शाम के समय पत्तियों के नीचे पीन से लगा दिया जाता है। एक हेक्टेयर में लगभग 50,000 - 1,00,000 कीटों को छोड़ना चाहिए। कीटों की सक्रियता तथा आक्रमण को देखते हुए यह 8 से 10 दिन के अंतराल पर 5-6 बार तक छोड़ा जा सकता है। इनका प्रयोग गन्ना, कपास, टमाटर, मूंगफली, सूरजमुखी, अनाज की फसलें, सब्जियों तथा फूलों के पौधों में किया जाता है। इसके अलावा कुछ अन्य परजीवी भी तना वेधक कीट के अंडों पर आक्रमण करते हैं। इसमें मुख्यत: टेलेनोमस एवं ट्रेट्रास्टिकस प्रमुख है।

3. वाइरस एवं बेक्टिरिया का प्रयोग : न्यूक्लीयर पोलीहेड्रोसिस वाइरस (एन. पी. बी.) का प्रयोग आजतक टमाटर के फल छेद तथा चना और अरहर में फल छेदक (हेलेकोवर्पा) के नियंत्रण में किया जा रहा है। इसके प्रभावी उपयोग के लिए एन. पी. बी. को कीट के एक से लेकर तीन इंस्टार लार्वा स्टेज में छिड़काव करना चाहिए तथा 12-15 दिन के अंतर पर दो या तीन छिड़काव करना लाभदायक सिद्ध होता है। इसके लिए 200 लीटर घोल को (250 एल0 ई0 सान्द्रता के बराबर) 0.54 हेक्टेयर क्षेत्र में आसानी से प्रयोग किया जा सकता है। इसके प्रयोग में कुछ बातों का पूरा ध्यान रखना चाहिए जैसे एन. पी. बी. घोल को सूर्य के प्रकाश में नहीं रखना चाहिए एवं इसका छिड़काव सांयकाल में करना चाहिए तथा इसको फ्रीज या किसी सुरक्षित जगह पर रखना चाहिए।

   बैक्टिरिया में बैसिलस थुरिनजेन्सिस का प्रयोग बहुत सारे लिपोडेप्टरा कीटों के नियंत्रण हेतु सफलता पूर्वक किया जा सकता है। इनका छिड़काव शाम के समय कीट की प्रथम, द्वितीय या तृतीय अवस्था में लार्वा दिखने पर शुरू कर देना चाहिए। इसका प्रयोग अरहर और पत्तागोभी में फली छेदक तथा हरे पीठ पतंगा के नियंत्रण हेतु किया जा रहा है।

5. कीट प्रतिरोधी प्रजातियों का प्रयोग :

कीट प्रतिरोधी प्रजातियों का प्रयोग करके फसलों को कीटों से आक्रमण से बचाया जा सकता है।

प्रमुख फसलों की प्रतिरोधी प्रजातियाँ -

क्र.	फसल का नाम	कीड़े जिनके प्रति फसल प्रतिरोधी	प्रतिरोधी प्रजातियाँ
1.	धान	तनावेधक	टी. के. एम. - 6, रत्ना, आई.आई.टी. 3093, 5265, 8284, आइ.आर. - 20, 26, और 36
		गालमिज	फाल्गुन, सुरेखा, उषा, विक्रम, दिव्या
		भूरा पौधा फुदका	ए. एस. डी.-7, 9, ए. आर. सी. 6650
		हरा पत्ती फुदका	जगन्नाथ, आई. आर.-60, 62, 4030, पी. टी. बी.18
2.	मक्का	तनावेधक	ई. एस. - 4030, 4027, गंगा-7 कुंदन, चंदा
3.	गन्ना	टाप बोरर	सी. ओ. जे. - 65, सी. ओ. 859, सी. ओ. 859, सी. ओ. 1158
	दालें		
1.	अरहर	पोडफ्लाई	पी. डी. ए. - 881, पी. डी. ए. 882 ई,
		पोड वोरर	अभय, जे. ए. टी. - 10, आई.सी.पी.एल-6, यू. पी. ए. एस. 120, आई. सी. पी. 903 ई.
2.	चना	पोड वोरर	आई.सी.सी. 506, 663, पी.डी.ई. 2
3.	उड़द	पोड वोरर	कलाई, कृष्णा
		जैसिड	कृष्णा
4.	मटर	पोड बोरर	ई. सी. 33860, बोनबिले
	सब्जियां		
1.	टमाटर	फल छेदक	पारकर, बोनस, बी. एफ. एन. - 8
2.	भिंडी	लीफ हायर	ऐ. ई. -30, पंजाब-7, रेश्मी, आई. आई. एच. आर -4
3.	बैगन	शूट एवम् फ्रूट बोरर	पंजाब वरसाती, पंत सम्राट, पुसा प्रफुल कलस्टर, एस. एम. 202
4.	पत्तागोभी	एफिड	रेडड्रम हेड, ग्लेरी अर्ली क्वीन
5.	फूलगोभी	हेड बोरर	ई. एस. वन. 96 के डब्लू 5, 8, 10
6.	मिर्च	मोजेक, एफिड, जेसिड	पूसा ज्वाला

6. **रासायनिक नियंत्रण :** कीटनाशी रसायनों का कीट नियंत्रण हेतु उपयोग एक आवश्यक बुराई है। इसके दुष्परिणामों के चलते अनेक कीटनाशी रसायन प्रतिबंधित कर दिये गये हैं। हमारी बुद्धिमानी इसी में है कि हम इनका तभी प्रयोग करें जब कीट नियंत्रण की वर्णित कोई भी विधि प्रभावी न हो। इनका न्यूनतम मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। इनका प्रयोग करते समय इस बात

का ध्यान रखना चाहिए कि हानिकारक कीटों से होने वाली आकलित हानि जब इसके बचाव हेतु व्यय धनराशि से अधिक होती है तभी कीटनाशी रासायनों का उपयोग विवेकपूर्ण समझा जाता है। इसका प्रयोग कब करना चाहिए इस संबंध में निर्णय लेते समय कई बातों का ध्यान रखना पड़ता है। इसमें यह आवश्यक है कि हानिकारक कीट का इकोनोमिक थ्रेसहोल्ड तथा इकोनामिक इन्जरी लेवेल अवश्य ही ज्ञात होना चाहिए। इसके अलावा यह भी जानना आवश्यक है कि साधारण कीटों को हानिकारक कीटों का स्तर प्राप्त करने में कौन - कौन से कारक सहायक हैं।

बहुत सारे पौधों में वानस्पतिक रसायन भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं, जो कीटों के लिए घातक सिद्ध हो सकते है। पौधे की 2121 प्रजातियों में कीटों की रोकथाम के लक्षण पाये जाते हैं जो कीटनाशी, भोजनरोधी, कीट वृद्धि नियंत्रक और कीट आकर्षक गुणों के कारण कीट नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

जहाँ तक संभव हो रसायनिक कीट नाशकों के स्थान पर हानिरहित जैविक कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए। ये रसायन अनेक पेड़-पौधों से तैयार किये जाते है। इनमें तम्बाकू, गुलदाउदी, डेरिस, नीम, करंज, हींग, हल्दी, मैथी इत्यादि से तैयार होते हैं। आजकल बहुत से नीम आधारित कीटनाशक जैसे नीमार्क, नीमगार्ड, एग्रीसेफ, लाइमानोल, बेलग्रो, न्यूकोनीम, हार्स पावर इत्यादि बाजार में उपलब्ध है।

समेकित कीट प्रबंधन के लाभ :

- ❖ जल, जमीन, जंगल, जीव-जन्तु और जनजीवन को प्रदुषित होने से रोकता है तथा पर्यावरण को शुद्ध बनाये रखता है।
- ❖ कीटनाशकों के उत्पादन, भंडारण, परिवहन, वितरण एवं फसलों पर प्रयोग के द्वारा मानव स्वास्थ पर हानिकारक प्रभाव पड़ने की संभावनाओं को कम करता है।
- ❖ फसल उत्पादन लागत को कम करता है।
- ❖ किसानों के पारंपरिक एवं स्थानीय ज्ञान को कीट नियंत्रण में प्रयोग करने हेतु अवसर उपलब्ध कराता है।
- ❖ रसायन विहीन किये गये फसल उत्पादन स्वादिष्ट होता है।
- ❖ कीटनाशकों के बिना किये गये फसल उत्पादन का विश्व स्तर पर बहुत ऊँचा मूल्य मिलता है एवं विदेशी मुद्रा की भारी कमाई देश को हो सकती है।

▲▲▲

समेकित रोग प्रबंधन

डॉ. एस. एम. प्रसाद
पौधा रोग विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

समेकित रोग प्रबंधन का अभिप्राय है रोगों का प्रकोप न होने देना अथवा रोग के संक्रमण एवं उसकी उग्रता को कम करना। समेकित रोग प्रबंधन में विभिन्न फसलों में रोगाणुओं से होने वाले नुकासन को यथासंभव कम करना है। रोग जनकों को पूर्ण रूप से नष्ट करना न तो संभव है न इसकी आवश्यकता है। समेकित रोग प्रबंधन में वातावरण के प्रदूषण को रोकने पर विशेष ध्यान दिया जाता है। कवकनाशी, जीवाणुनाशी तथा रोग नियंत्रण में प्रयुक्त अन्य रसायनों का आवश्यकतानुसार एवं समुचित उपयोग हो इसके लिए रोगजनकों के जीवनचक्र एवं उससे होने वाले नुकसान की जानकारी आवश्यक है। जैविक विधियों द्वारा रोगों के प्रबंधन का महत्त्व काफी बढ़ा है। फसलों के कई मृदाजनित रोगों का प्रबंधन, ट्राइकोडर्मा, फफूँद की विभिन्न प्रजातियों *(ट्राइकोडर्मा विरिडी, ट्राइकोडर्मा हरजियानम, ट्राइकोडर्मा हेमेटन, ग्लायोक्लैडियम वायरेंग)* द्वारा किया जाता है। जैविक विधि में रोगजनकों के प्रबंधन के लिए कवकों, जीवाणुओं, एक्टिनोमाइसिज, वायरस, प्रोटोजोआ, सूत्रकृमि एवं माइट का भी प्रयोग किया जाता है।

समेकित रोग प्रबंधन के प्रमुख घटक हैं :-

1. स्वस्थ, रोगाणुमुक्त एवं उपचारित बीज का उपयोग, (2) खर-पतवार तथा विभिन्न रोगों के पोषी पौधों का नियंत्रण, (3) रोगग्रस्त मृदा में फसलचक्र अपनाना एवं सम्बंधित फसलों का 3-4 वर्षों के लिए परित्याग, (4) मृदाजनित रोगों के प्रबंधन के लिए प्रचुर मात्रा में जैविक खाद एवं जैविक विधियों का उपयोग, (5) अन्तर्वर्ती फसल, पल्वार (मल्चिंग) एवं अन्य विधियों द्वारा रोगाणुओं की वृद्धि की रोकथाम, (6) उर्वरकों, सिंचाई तथा रोग के प्रबंधन में प्रयुक्त रसायनों का समुचित उपयोग, (7) फसलों की उन्नत एवं रोगरोधी किस्मों का चयन एवं (8) अनुशंसाओं के अनुसार फसलों की उपयुक्त समय पर बोआई एवं कटाई।

प्रमुख खरीफ फसलों में समेकित रोग प्रबंधन

धान झारखण्ड राज्य की सबसे महत्त्वपूर्ण फसल है। इस राज्य की बहुसंख्यक आबादी का प्रमुख आहार चावल है तथा इसकी खेती अन्य फसलों की तुलना में व्यापक पैमाने पर की जाती है। मकई और मड़ुँआ की खेती भी इस राज्य में बड़े पैमाने पर की जाती है। दलहनी फसलों में अरहर, मूँग, उड़द, तेलहनी में मूंगफली, सब्जियों में भिंडी, बैंगन, कद्दू जाति की सब्जियाँ इस मौसम की अन्य प्रमुख फसल है।

खरीफ फसलों के रोग एवं उसके समेकित प्रबंधन की प्रमुख अनुशंसाएँ निम्नलिखित है :

तालिका-1 : खरीफ फसलों के रोग एवं उनका समेकित प्रबंधन

क्र.सं	फसल एवं प्रमुख रोग	अनुशंसाएँ
1.	भूरी चित्ती, ब्लास्ट या झुलसा, जीवाणुज पर्ण अंगमारी, पर्णच्छद अंगमारी (सीथ ब्लाइट) एवं फॉल्स स्मट	1. भूरी चित्ती एवं झुलसा रोगों के लिए बीज का बैविस्टीन या वीटाफैक्स फफूंदनाशक दवा (2 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा. बीज) अथवा बैविस्टीन-1 ग्राम + थीरम-1 ग्राम प्रति कि. ग्रा. बीज की बोआई से पूर्व सूखा उपचार करें। 2. जीवाणुज पर्ण अंगमारी रोग के लिए बीज को स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के घोल (2 ग्रा. मात्रा 10 लीटर पानी में) पूरी रात भिंगोकर उपचारित करें।

	3. खड़ी फसल में भूरी चित्ती तथा झुलसा रोगों की रोकथाम के लिए हिनोसान (0.1%) कवच (0.2%) अथवा बीम (0.05%) का छिड़काव करें। 4. पर्णच्छेद अंगमारी की रोकथाम कोनटाफ (0.1%) के छिड़काव से की जा सकती है। फॉल्स स्मट रोग के प्रकोप से बचाव के लिए टिल्ट (0.1%) अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2%) का छिड़काव बालियाँ निकलने से पूर्व करें। नेत्रजन उर्वरक का उपयोग अनुशंसाओं के अनुसार ही करें।
2. मकई (हेल्मिंथोस्पोरियम झुलसा, सीथ ब्लाइट एवं किट्ट रोग)	1. बोआई से पूर्व बीज का थीरम फफुंदनाशक (3 ग्रा. मात्रा प्रति किलोग्राम बीज) से सूखा उपचार करें। हेल्मिंथोस्पोरियम झुलसा एवं किट्ट रोगों के प्रारंभिक लक्षण प्रकट होने पर इंडोफिल एम-45 (0.25%) का छिड़काव करें। सीथ ब्लाइट रोग की रोकथाम के लिए कोनटाफ (0.1%) का छिड़काव करें।
3. मडुआ (ब्लास्ट या झुलसा रोग)	1. झुलसा रोग की रोकथाम के लिए 50% बालियाँ आने के पश्चात् बीम (0.05%) हिनोसान (0.1%) का एक छिड़काव अथवा साफ (0.2%) का दो छिड़काव करें।
4. अरहर (म्लानि रोग)	1. बोआई से पूर्व बीज का बैविस्टीन फफूंदनाशक (2 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज) से सूखा उपचार करें। बीजोपचार ट्राइकोडर्मा आधारित जैविक फफूंदनाशी (4 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज) से भी की जा सकती है। 2. अरहर की रोग सहिष्णु किस्मों (जैसे बसंत, बहार, शरद, बिरसा अरहर-1) का चयन करें। 3. प्रारंभिक अवस्था में म्लानि रोग से बचाव के लिए बैविस्टीन (0.05%) का छिड़काव करें। छिड़काव इस प्रकार करें ताकि पौधों के साथ जड़ के पास की मिट्टी भी सिंचित हो जाये। 4. अरहर-ज्वार की मिलवॉ/अन्तर्वती फसल म्लानि रोग के प्रसार को रोकने में सहायक होता है। अरहर का फसलचक्र तम्बाकू के साथ किया जाये तो रोग में कमी हो जाती है।
5. मूंग, उड़द (पत्र लांक्षण ऐन्थ्रेक्नोज, वायरस रोग, जालीदार अंगमारी रोग)	1. रोगग्रस्त फसल से प्राप्त बीज का उपयोग न करें। 2. बोआई से पूर्व बीज का बैविस्टीन फफूंदनाशक (2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से सूखा उपचार करें। 3. वायरस रोगों का कीटों से प्रसार रोकने के लिए सर्वांगी कीटनाशी मेटासिस्टॉक्स (1 मिली लीटर प्रतिलीटर पानी में) का छिड़काव करें। 4. पत्र लांक्षण एवं जालीदार अंगमारी रोगों की रोकथाम के लिए बैविस्टीन (0.05%)/इंडोफिल एम -45 (0.2%) का छिड़काव करें।

6. मूंगफली (टिक्का रोग)	1. बोआई से पूर्व बैविस्टीन (2 ग्राम)/थीरम (3 ग्राम) से प्रति किलोग्राम बीज का सूखा उपचार करें। 2. खड़ी फसल में रोग के प्रारंभिक लक्षण प्रकट होने पर बैविस्टीन (0.075%) + इंडोफिल एम-45 (0.15%) का छिड़काव करें।
7. भिंडी (पीला शिरा मोजैक वायरस रोग, पत्र लांक्षण चूर्णी फफूँद रोग)	1. उन्नत एवं रोग सहिष्णु किस्मों (जैसे परभनी क्रांति, पंजाब-7, अर्का अभय, अर्का अनामिका, पूसा ए-4) का चयन करें। 2. बोआई से पूर्व बीज का बैविस्टीन 2 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज की दर से सूखा उपचार करें। 3. कूड़ों में दानेदार सर्वांगी कीटनाशी (कार्बोफुरॉन-3 जी) 3 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से करें। 4. पत्र लांक्षण एवं चूर्णीफफूंद रोगों के प्रारंभिक लक्षण प्रकट होने पर बैविस्टीन (0.1%) का एक छिड़काव करें।
8. बैंगन (म्लानि रोग)	1. बैंगन की रोग सहिष्णु किस्मों (जैसे स्वर्णश्री, स्वर्णमणि, अर्का केशव, अर्का निधि) का चयन करें। 2. गर्मियों में गहरी जुताई कर खेत को खुला छोड़ दें। 3. फसलचक्र में 3 वर्षों तक सोलेनेसी कुल की सब्जियाँ (आलू, बैंगन, टमाटर, मिर्च, शिमला मिर्च) नहीं लगायें। 4. खेत में प्रचुर मात्रा में गोबर की सड़ी खाद एवं खली का प्रयोग करें। 5. खेत में बिचड़ों को रोपने से पूर्व उनकी जड़ों को स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के घोल (2 ग्राम 10 लीटर पानी में) में 1 घंटे तक डुबोयें।

▲▲▲

हानिकारक बरूथियों (माइटस) से फसलों की समेकित सुरक्षा

डॉ. रवीन्द्र प्रसाद
कीट विज्ञान विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

सफल खेती की निरंतरता को कायम रखने के लिए समेकित पेस्ट प्रबंध एवं समेकित बरूथी नियंत्रण प्रणाली का प्रचार-प्रसार हमेशा किया जाना आवश्यक है।

बरूथी सूक्ष्म प्राणी होते है, जिनके वयस्कावस्था में चार जोड़े पैर होते है, जबकि शैशवास्था में तीन जोड़े पैर होते हैं। कीड़ों के विपरीत इन्हें कोई पंख नहीं होते हैं। बरूथी पौधों के विभिन्न भागों जैसे:- पत्तियों, नरम मुलायम डंठलों, कलियों एवं नव विकसित छोटे-छोटे फलियों एवं फलों के रस चूसते है। बरूथियों की संख्या अत्यधिक हो जाने पर पौधों के रस (स्त्राव) काफी मात्रा में चूसे जाने के कारण पौधे कमजोर एवं बीमार दिखते हैं। वायुमंडल का तापमान अधिक एवं आर्द्रता कम होना बरूथी के प्रजनन, गुणण तथा जनसंख्या के वृद्धि के लिए अनुकूल माना जाता है। जबकि कम तापमान, अधिक सापेक्षिक आर्द्रता तथा भारी वर्षा वाली स्थिति माइट (वरूथी) के वृद्धि विकास के लिए प्रतिकूल परिस्थितिकीय हालत पैदा करते हैं। ठीक यही कारण है कि गर्मी का मौसम बरूथियों के प्रजनन और वृद्धि-विकास के लिए काफी लाभदायक होता है। वर्षा ऋतु में किसी साल वर्षा की मात्रा काफी कम हुआ करती है, सुखाड़ की स्थिति पैदा हो जाती है। हालाँकी तापमान अधिक और सापेक्ष आर्द्रता कम रहा करती है, इस हालत में भी बरूथियों का प्रकोप अधिक होता है। जाड़े के मौसम में वायुमंडल का तापक्रम न्यूनतम तथा सापेक्ष आर्द्रता अधिक रहने के कारण बरूथी की संख्या और प्रजनन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अत: जाड़े के समय में फसलों के लिए प्राय: बरूथी समस्या नहीं हुआ करती है। इन सभी बातों को ध्यान से समझने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि बरूथियों के प्रकोप के चरमोत्कर्ष की अवधि अप्रैल से मध्य जून तक होता है। इनके आक्रमण काल का दूसरा अनुकूलतम् अवधि वर्षा-ऋतु के तुरंत बाद सितम्बर-अक्टूबर का समय होता है।

बरूथियों के प्रकोप से अधिकाधिक अक्रांत होने वाले फसलें-

क) सब्जी फसलें : आलू, टमाटर, बैंगन, भिन्डी, बोडा, फ्रेंचबीन, सेम, मिर्चा, खीरा, ककड़ी, भींगी, नेनुआ, कद्दू, कोहड़ा

ख) दलहनी फसलें : मूंग, उरद, अरहर, राजमा,

ग) पुष्प पौधे : गेंदा, गुलाब, जरबेरा, बेली, सूर्यमूखी, डहेलिया

घ) औषधीय पौधे : पुदीना, अश्वगंधा, जटामासी, सर्पगंधा, तुलसी, पीपली

ङ) फलदार पौधे : अमरूद, सपाटू, अंजीर, आम, लीची, नींबू, पपीता, सहतुत, बैर, अनार, नारियल

अक्रांत पौधों पर बरूथियों के आक्रमण के द्वारा उत्पन्न क्षति के लक्षण :-

लाल बरूथी (रेड माइट) : ये बरूथी जाल बुनने के लिए बहुत सिद्धहस्त होते हैं। लाल बरूथी बैगन, भीन्डी, बोड़ा, फ्रेंचबीन, पुदीना, गुलाब, सहतूत, पतीता और लत्तर वाली सब्जी फसलों जैसे : खीरा, ककडी, नेनुआ, कोहड़ा, कद्दू, झीगीं एवं परवल आदि फसलों पर ज्यादा आक्रमण करते हैं। पत्तियों के नीचले सतहों पर वे ज्यादा पाये जाते हैं। हरीतिमा एवं पत्तियों के हरे उत्तक के स्त्राव (रस) चूस डालते हैं। फलस्वरूप अक्रांत पत्तियों के उपरी सतह पर छोटे-छोटे ''पिन-हेड'' की आकृति वाले हल्के-पीले एवं सफेद धब्बे पड़ जाते हैं। गर्मी के मौसम में बरूथियों की संख्या अधिक होने पर ये पत्तियों के नीचले सतहों के अलावे उपरी सतहों पर भी पाये जाते है। पौधों के बढ़ते हुए प्ररोह एवं कोमल तनों के अग्रभाग एवं कलियों पर भी इन बरूथियों का खासकर अप्रैल-मई के महीनों में काफी आक्रमण होता है परिणामस्वरूप फूल झड़ जाते है। अत्यधिक आक्रमण होने पर नवजात फल भी झड़ जाते हैं। फलत: उपज (उत्पादन) में काफी कमी आ जाती है। फरवरी के अंत में अथवा मार्च में बोये या रोपे गये सब्जी फसलों जैसे - भींडी, बोड़ा एवं कद्दू वर्गीय सब्सी जैसे - खीरा, ककड़ी और गर्मा मूंग की फसलों को बरूथियों के आक्रमण से काफी नुकसान होता है। कभी-कभी

पीछात् बोये गये भींडी की फसल तो लगभग पूर्णत: नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि नवजात पौधे प्रारंभिक काल में ही बरूथियों की अधिकाधिक संख्या के आक्रमण के चपेट में आ जाते हैं। आश्चर्य की बात यह है कि किसान प्राय: इनके आक्रमण को पहचान नहीं पाते हैं। भूलवश वे इन्हें कीट (कीड़े) समझ लेते हैं और फसलों को बचाने के लिए साधारण कीटनाशी का प्रयोग करते हैं। अत: वरूथी का नियंत्रण प्रभावकारी एवं संतोषजनक नहीं हो पाता है। व्यापक असर वाले कीटनाशियों जैसे - सिंथेटिक पायरेथ्रायड्स (साइपर मेथ्रिन, फेनवालेरेट एवं डेकामेथ्रिन), डायमेथोएट, मिथाइल पाराथियान के बार-बार छिड़काव करने के फलस्वरूप बरूथियों के प्राकृतिक शत्रु पूर्णत: नष्ट हो जाते हैं। परिणाम यह होता है कि गर्मी के मौसम अनुकूलतम होने के साथ बरूथियों की संख्या में उनके प्राकृतिक शत्रु (जैसे : प्रीडेटरी माइट्स एवं प्रीडेटरी कीटों) की अनुपस्थिति में निर्बाध रूप से अपार वृद्धि होती हैं, जिससे फसलों का काफी नुकसान होता है।

पीत माइट : यह माइट हल्के पीलेपन लिए हल्के हरे रंग के होते हैं। इनका वैज्ञानिक नाम - *''पोलिफेगोटारसोनेमस लैटस''* है। यह माइट (बारूथी) मिर्च की फसल को काफी नुकसान पहुँचाते हैं। इनके आक्रमण की वजह से पत्तियाँ सिकुड़ कर विकृत हो जाती है। नयी कोपलें भी विकृत होकर आपस में जमा हो जाती हैं। गंभीर रूप से अक्रांत पौधों में फूल-फल का निर्माण होना बंद हो जाता है। ''पीत माइट'' मिर्चा की फसलों को बिचड़ों की स्थिति से लेकर संपूर्ण वृद्धि विकास की अवस्था तक नुकसान पहुँचाते हैं। गर्मा मिर्च की फसल का ज्यादा नुकसान होता है। पिछात् रोपे गये मिर्च की फसल कभी -कभी पूरी तरह नष्ट एवं असफल हो जाते है। 'पीत बरूथी' करैला, सेम, आलू, टमाटर एवं फ्रेंचबीन को भी नुकसान पहुँचाते है, हालाँकि इन फसलों पर पीत माइट का प्रकोप तीता मिर्चा एवं शिमला मिर्चा की अपेक्षा नुकसान बहुत कम होता है। कृषकों को खास करके गर्मी के मौसम तथा सितम्बर-अक्टूबर माह में फसलों की सुरक्षा हेतु कभी-कभी *'बरूथी नाशी'* का छिड़काव अवश्य करना चाहिए।

गौल एवं इरीनियम माइट (बरूथी) : ये बरूथी अति सूक्ष्म आकृति वाले होते है। अपवाद स्वरूप इनके मात्र दो जोड़े पैर होते है। फसल विशेष के अनुरूप ये माइट भी अलग-अलग होते हैं। ये इतने सूक्ष्म होते हैं कि बिना सुक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) के इन्हे देख पाना असम्भव होता है। इस वर्ग के बरूथियों के आक्रमण से पौधों के आक्रांत भाग विकृत हो जाते हैं, उनका विकास अवरूद्ध हो जाता है। उपज में कमी आ जाती है।

गौल माइट से अक्रांत होते फसलें :-

आम : आम में लगने वाले गौल माइट का वैज्ञानिक नाम *एसेरिया मैगीफेरी* है। यह बरूथी आम के बिचड़ो (पौध) को भी नुकसान पहुँचाते हैं। अक्रांत पौधों के वृद्धि योग्य अग्रशीरा विकृत हो जाते हैं तथा उनका विकास रूक जाता है। इस प्रकार ये बिचड़े रोपाई के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं। आम के फूल (मंजर) निर्माण की अवधि में गौल माइट के प्रकोप के चलते मंजर विकृत होकर इकट्ठा हो जाता है। परिणाम स्वरूप फलन रुक जाता है। फलत: उपज में काफी कमी आ जाती है। *एसेरिया मैंगीफेरी* (गौल माइट) तथा फयूजेरियम मोनेलीफॉरमीस नामक फफूँद के सहयोग के परिणामस्वरूप आम के पौधों का ज्यादा नुकसान होता है।

लीची : लीची के पौधों को क्षति पहुँचाने वाले बरूथी को वैज्ञानिक रूप में *''एसेरिया लीची''* के नाम से जानते है। यह बरूथी नवीन पत्तियों को ज्यादा पसंद करती है। इनका आक्रमण पत्तियों के नीचले सतहों पर होता है। रस (स्त्राव) के बरूथियों द्वारा चूसे जाने के कारण अक्रांत पत्तियों के नीचले सतह टेढ़े-मेंढ़े होकर मोटी एवं मखमली हो जाती है, जिसका रंग कथई रंग का होता है। टेढ़े-मेंढ़े गड्ढ़ेदार आकृति को ''ईरीनियम'' कहा जाता है। इस माइट के ज्यादा आक्रमण होने पर पत्तियों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया काफी हद तक बाधित हो जाती है, जिसका प्रतिकूल प्रभाव लीची के पुष्पण तथा फलन पर पड़ता है और उपज में कमी आ जाती है। इस माइट के ज्यादा आक्रमण होने पर नयी कोमल टहनियाँ भी माइट-ग्रस्त हो जाते है। अत: क्षति के लक्षण प्रारंभ होते ही पेड़ों पर बरूथी नाशक रसायनों का छिड़काव समय - समय पर आवश्यकता के अनुसार करना चाहिए।

अरहर : अरहर के फसल ईरीनियम माइट (एसेरिया कजानी) द्वारा क्षति किये जाते हैं। ''एसेरिया कजानी'' अति सूक्ष्म बरूथी है। जिसके आक्रमण के कारण अरहर के पौधों में नपुंसकता (स्टरलिटी) आ जाती है, परिणाम स्वरूप पौधों में पुष्पन एवं फलन अवरूद्ध हो जाता है। देखने में फसल हरा भरा लगता है परंतु फलियों का बनना बंद हो जाने से किसानों को निराशा हाथ लगती है। खेती में लगे पूंजी से लाभ नहीं मिलना सचमुच दु:खद है। अत: फसल को प्रारंभ से ही बरूथी के आक्रमण से बचाना जरूरी है। '

''स्टरलिटी मौजेक'' नामक बिमारी का संवाहक *''एसेरिया कजानी''* नाम का माइट (बरूथी) है। किसानों को चाहिए कि वे अरहर के फसल को प्रारंभ से ही देखभाल करें और बरूथी के आक्रमण के पूर्व ही खड़ी फसल पर बरूथी नाशक रसायन को पानी में घोलकर छिड़काव करें। आक्रमण पूर्व बचाव ही सर्वोत्तम उपाय है।

बैगन एवं टमाटर : गर्मी के मौसम में जिस क्षेत्र में वायुमंडलीय तापमान अत्यधिक होता है, वहाँ बैगन एवं टमाटर के फसल पर ईरेनियम माइट (एसेरिया लाइकोपरसिकी) का आक्रमण ज्यादा होता है। छोटे - छोटे नवीन कोमल पत्तियों एवं कलियों पर इस बरूथी का आक्रमण अधिक होते है। बरूथियों की संख्या ज्यादा होने के कारण वे पत्तियों एवं कलियों के रस अधिक मात्रा में चूस डालते हैं। अक्रांत पत्तियों की खास करके नीचली सतहें उबड़-खाबड़ एवं रूखड़े हो जाते है। पत्तियों में सिकुड़न, ऐंठन एवं विकृति आ जाती है। सूर्य की रोशनी में अक्रांत पत्तियों के रोये कुछ अधिक बढ़े प्रतीत होते है। खास करके इस बरूथीयों के आक्रमण के प्रारंभिक कार्य में ये पत्तियाँ मखमली एवं चमकदार प्रतीत होते है। अंततः माइट ग्रसित पत्तियाँ समय पूर्व ही विकृत होकर सूख जाते हैं। पौधों के समय पूर्व पत्रविहीनता की वजह से पौधे कमजोर हो जाते हैं। फूल भी झड़ने लगते हैं। इस बरूथी के ज्यादा आक्रमण (खास करके अप्रैल-मई से जून के महीनों में) के चलते बैंगन के उपज में लगभग 15 प्रतिशत का नुकसान होता है। *एसेरिया लाइकोपरसीकी* अति सूक्ष्म बरूथी है, जिन्हें माक्रोस्कोप के द्वारा ही देखा जाता है। बैंगन के फसल को इरेनियम माइट से बचाव के लिए खड़ी फसल के ऊपर अनुसंशित बरूथीनाशक रसायन के पानी में बने घोल का छिड़काव सायंकाल में करना चाहिए।

बेली (जासमीन) : बेली एक प्रमुख शोभाकर एवं पुष्प पौधा है। जिनके फूल श्वेत, मनमोहक एवं खुशबूदार होते है। गर्मी के मौसम में बेली के पौधे भी एक खास प्रकार के इरेनियम माइट *(एसेरिया जासमीनी)* के आक्रमण के शिकार हो जाते है। ये बरूथियाँ अत्यधिक संख्या में ज्यादातर पत्तियों के निचले सतहों पर निवास करके उनके रस को चूसते हैं। परिणामस्वरूप, पत्तियों के नीचले सतह उबड़-खाबड़ गढ़े युक्त प्रतीत होते है। अंततः समय पूर्व ही पत्तियाँ सूख करके झड़ जाते है। बरूथियों की संख्या की अधिकता की वजह से पुष्पकलियों के हरे भाग पर भी उनका आक्रमण होता है। नरम मुलायम तना एवं टहनियाँ भी माइट के आक्रमण से अछूते नहीं रह पाते हैं। ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस बरूथी के अति सूक्ष्म होने की वजह से उन्हें सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) के बिना देख पाना असंभव है। उनके द्वारा क्षतिग्रस्त पौधों को 'क्षति के लक्षणों' के आधार पर ही उन्हें आम आदमी पहचान सकते हैं। इन ईरेनियम माइटों के आक्रमण के चलते पुष्प उत्पादन में काफी कमी आ जाती है। इस बरूथी के आक्रमण के पूर्व एवं आक्रमण के प्रारंभिक अवस्था में ही ''क्षति के लक्षण'' के आधार पर बेली के पौधों के उपर उपयुक्त बरूथी नाशक को पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

बरूथियों के आक्रमण से फसलों की समेकित सुरक्षा एवं बचाव :

1. सस्य एवं गैर रसायनिक विधियाँ :

क) बरूथी के द्वारा क्षति किये गये पौधों के अंगों जैसे - पत्तियां, पुष्प कलियां आदि को प्रारंभ में ही चून करके नष्ट कर डालने से बरूथी के आक्रमण के विस्तार को रोका जा सकता है। आम के बरूथियों द्वारा अक्रांत पुष्प गुच्छे, लीची के क्षतिग्रस्त पत्ते, अरहर के नपुसंक पौधों को बरूथियों के आक्रमण काल के प्रारंभ में ही चुन-चुन करके नष्ट कर देने से बरूथी के आक्रमण को विस्तारित होने से काफी हद तक रोका जा सकता है।

ख) साफ सुथरी एवं नवीन खेती को अपना कर :- खर-पतवार, पुराने फसलों के ठूंठ एवं खूटियाँ क्षतिकारक बरूथियों के लिए वैकल्पिक भोज्य पौधा का कार्य करते हैं। अतः हर बार खेती के लिये खेत तैयार करते समय उन्हें चुन कर नष्ट कर देना चाहिए।

ग) पूर्व अनुभव के आधार पर फसलों के बुआई एवं रोपाई के समय में थोड़ा बदलाव करके बरूथियों के ''स्थापित चरम आक्रमण काल'' से फसलों को बचाया जा सकता है। जैसे - मार्च एवं अप्रैल के बदले फरवरी एवं जनवरी में ही भिन्डी, बोड़ा, नेनुआ, खीरा, कद्दु एवं अन्य गरमा सब्जियों की रोपाई एवं बुआई करके उन्हें बरूथियों के प्रकोप से बहुत हद तक बचाया जा सकता है। मजबुरी वश लगाये गये पिछात् फसलों को उपयुक्त बरूथी नाशक रसायन के सही मात्रा में घोल बनाकर उनका छिड़काव करके पौधों को होने वाले नुकसान को रोका जा सकता है।

घ) मिश्रित खेती अपनाकर : बरूथी के द्वारा क्षति लायक पौधों को बिना क्षति लायक पौधों के साथ खेती करके फसलों को बरूथियों से होने वाले नुकसान को काफी हद तक कम किया जा सकता है। बैगन, भिन्डी एवं टमाटर की खेती, फूलगोभी अथवा वंदगोभी के साथ मिश्रत फसल एवं अंर्तवर्ती फसल के रूप में करने से बैगन, भिन्डी, टमाटर, बोड़ा आदि को बरूथियों के प्रकोप से एक हद तक बचाया जा सकता है।

2. बरूथियों का रासायनिक नियंत्रण :

निम्नलिखित बरूथी नाशकों में से किसी एक का ही छिड़काव एक समय में करना चाहिए :-

क) डायकोफाल 18.5 ई.सी. का 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर उनका छिड़काव खड़ी फसल पर 10-15 दिनों के अंतराल पर काम करना चाहिए। इसी तरह

ख) घुलनशील सल्फर (गंधक) का 6 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव करें।

ग) इथियान 50 ई.सी. अथवा फोसलान 35 ई.सी. अथवा फेनेजाक्वीन 10 ई.सी. में से किसी एक रसायन का डेढ़ (1.5) मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर खड़ी फसल पर अच्छी तरह छिड़काव करना चाहिए।

घ) ओमाइट 57 ई.सी. का आधा मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 15 से 20 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

ङ) नीम सीड करनल एक्सट्रेक्ट के 5 प्रतिशत घोल अथवा नीम तेल का दो-तीन प्रतिशत पानी में बने घोल का छिड़काव भी बरूथी नियंत्रण के लिए कारगर साबित होते हैं।

बरूथी नाशक के घोल के छिड़काव के समय ध्यान देने योग्य बातें :-

1. एक ही ग्रुप के बरूथीनाशक रसायन का प्रयोग बार-बार नहीं करना चाहिए अन्यथा उस रसायन के प्रति बरूथी में सहनशीलता (रेसिसटेंस) उत्पन्न होने का खतरा बना रहता है।

2. गर्मी के मौसम में बरूथियों के प्रकोप से अक्रांत होने वाले फसलों जैसे बैंगन, भींडी, बोड़ा, कददु बगीय सब्जियाँ, फ्रेंच बीन तथा मिर्चा आदि फसलों के उपर सिंथेटिक पइरेथ्राइड जैसे - सायपरमाइथ्रिन, फेनवालेरेट एवं डेका मेथ्रिन का छिड़काव बार-बार नहीं करना चाहिए। अन्यथा बरूथियों के प्रकोप की आशंका बढ़ जाती है।

3. खास करके गर्मी के मौसम में कीटनाशी एवं बरूथी नाशक रसायन के छिड़काव से घोल का प्रयोग शाम की बेला में करना ज्यादा प्रभावकारी माना जाता है। सूर्य की तेज धूप के कारण प्रात: काल एवं दोपहर में किये गये छिड़काव का असर कम हो जाता है। अत: शाम का समय ही विशेष करके ग्रीष्मकाल में छिड़काव के लिए उपयुक्त माना जाता है।

4. अगर खेत में बरूथी का आक्रमण जहाँ-तहाँ ही हो पाया है उस स्थिति में बरूथी के आक्रमण के अधिकता वाले स्थानीय क्षेत्र में ही फसल के उपर पौधों को खूब अच्छी तरह भिंगोते हुए छिड़काव करना चाहिए। छिड़काव को 10 दिनों के अंतराल पर आवश्यकता पड़ने पर दो तीन बार पुन: करने से बरूथी का नियंत्रण करना आसान हो जाता है।

5. सब्जी अथवा फलदार फसलों वाले फसलों में तैयार फलों को पहले तोड़ लेना चाहिए उसके बाद ही बरूथीनाशक का छिड़काव किया जाना चाहिए।

6. सही बरूथी नाशी का, सही मात्रा में, सही समय पर, सही विधि द्वारा छिड़काव सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

▲▲▲

समेकित कीट प्रबंधन

डॉ. देवेन्द्र प्रसाद
कीट विज्ञान, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

अधिक उत्पादन बढ़ाने के लिए उन्नत किस्मों एवं आधुनिक तौर-तरीकों को अपनाया जा रहा है। खासकर झारखण्ड के किसान सब्जियों के उत्पादन में नई-नई किस्मों (हाइब्रिड) का उपयोग कर रहें हैं। वहीं दूसरी ओर रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का भी भरपूर व्यवहार किया जा रहा है। जिसके कारण अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो रही है। प्रमुख कीड़ों से विभिन्न फसलों में होने वाली हानि 10 से 12 प्रतिशत तक आंका गया है। कीटनाशकों के अन्धाधुंध प्रयोग से गंम्भीर वातावरणीय एवं अन्य जटिल समस्याएं बढ़ रही है। अन्धाधुंध कीटनाशी के प्रयोग से निम्नलिखित समस्याएं पैदा हो रही है :

1) पर्यावरण दूषित होना, (2) कीड़ो में रासायनिक कीटनाशी के प्रति प्रतिरोधक शक्ति पैदा होना, (3) लाभकारी कीड़ो एवं अन्य दूसरे जीवों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना, (4) खाद्य पदार्थों में रासायनिक कीटनाशी का अवशेष पाया जाना, (5) गौण कीटों का प्रमुख कीड़ो का रूप लेना।

जिन राज्यों में रासायनिक कीटनाशी का व्यवहार अन्धाधुंध होता है उनमें नयी प्रजातियों के हानिकारक कीट पाये जाते हैं।

रासायनिक कीटनाशकों के अन्धाधुंध प्रयोग से कीड़ों की उभरती हुई नयी समस्याएं

राज्य	खपत (प्रतिशत)	कीट
आन्ध्र प्रदेश	33.6	सफेद मक्खी, धान का भूरा फदका, गाँलमिंज
गुजरात	15.2	स्पाइडर माइट, मूंगफली का सर्पिल पत्ती सुरंगक
कर्नाटक	16.2	स्पाइडर माइट
पंजाब	11.4	स्पाइडर माइट
अन्य राज्य (झारखण्ड सहित)	18.5	स्पाइडर माइट, श्वेत मक्खी

इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि रासायनिक कीटनाशी के अन्धाधुंध प्रयोग से अनेक प्रकार की समस्याएं पैदा हो रही है। फलत: पर्यावरण का संतुलन बिगड़ता जा रहा है एवं किसानों को हानि उठाना पड़ रहा है। अत: टिकाऊ खेती के लिए ऐसी तकनीक की आवश्यकता है जिनसे पर्यावरण की सुरक्षा के साथ-साथ आर्थिक लाभ भी बना रहे। अत: इसके लिए समेकित कीट प्रंबन्धन ही ऐसी प्रणाली है जिसके तार्किक व्यवहार से पर्यावरण को क्षति पहुँचाएं बिना कीड़ों का प्रबन्धन कर आर्थिक लाभ को बनाए रखा जा सकता है।

अंगीकृत की जाने वाली उन्नत तकनीक

कृषि कार्यगत नियंत्रण :

इस पद्धति में किसानों द्वारा किये जाने वाले कृषि कार्यो जैसे खेतों की गहरी जुताई, खर-पतवाार को नष्ट करना, खेतों में सड़ा हुआ गोबर, कम्पोस्ट एवं करंज की खल्ली का व्यवहार करना, अम्लीय मिट्टी में चूना का प्रयोग करना, समेकित उर्वरक का प्रयोग करना, स्वस्थ्य एवं उपचारित बीजों का व्यवहार करना, उचित सिंचाई का प्रबन्ध करना, फसलों की उचित समय पर बुआई एवं कटाई, अन्त: फसलों एवं फन्दा फसलों का उपयोग, फसल-चक्र अपनाना, चिड़ियां को बैठने के लिए आधार प्रदान करने से कीड़ो की संख्या को कम करने में मदद मिलती है। कीड़ो के जीवन वृतान्त, व्यवहार, आवास एंव पारिस्थितिकी की पूरी तरह से जानकारी होने से कीड़ो की संख्या को घटाने में मदद मिलती है। इन तरीको को अपनाने से लागत में किसी तरह से वृद्धि भी नहीं होती है। अत: किसानों को समेकित कीट प्रबन्धन से होने वाले लाभ के बारे में जानकारी देना बहुत जरूरी है।

जैविक नियंत्रण :

प्राकृतिक पारिस्थितिक प्रणाली में कीड़ों का नियंत्रण, उनके प्राकृतिक शत्रुओ के द्वारा स्वत: ही होते रहता है। किन्तु विकट परिस्थिति में कीड़ों की संख्या अधिक होने पर परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों की संख्या को भी बढ़ाना पड़ता है ताकि दुश्मन कीड़ों की संख्या को कम किया जा सके। इसलिए जैविक नियंत्रण कार्यक्रम में परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों के संरक्षण एवं संवर्द्धन को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। आजकल ट्राइकोग्रामा, क्राइसोपरला, लेडी बर्ड भृंग इत्यादि मित्र कीड़ों को प्रयोगशाला में पालकर इनकी संख्या को बढ़ाया जाता है एवं इनका प्रयोग दुश्मन कीड़ों के नियंत्रण में किया जाता है। इनके उपयोग के फलस्वरूप रासायनिक कीटनाशी के छिड़काव में कमी होती है फलत: लागत में भी कमी होती है एवं पर्यावरण को दूषित होने से बचाया जा सकता है। अत: कीट विशेषज्ञों की ऐसी कोशिश होनी चाहिए कि परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों की क्षमता विपरीत परिस्थितियों में भी बना रहे। परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों में रासायनिक कीटनाशी के प्रति प्रतिरोधी शक्ति का विकास करने की आवश्यकता है।

जैविक कीटनाशी का प्रयोग :

आजकल अनेक कम्पनियाँ जीवाणुओं, कवकों एवं विषाणुओं को मिश्रित कर कीटनाशी बना रहें है। इनके प्रयोग से कीड़ों में प्रतिरोधक क्षमता का विकास की सम्भावना नहीं रहती है। जैविक कीटनाशी कीटों की वृद्धि एवं विकास को प्रभावित कर मार रहें हैं। आजकल *बावेरिया बासियाना, मेटरहिजयम एनिसोपलिया* (कवक कीटनाशी), हाल्ट, डेल्फिन, बायोलेप (बी.टी.), एन.पी.वी. हेलियोथिस तथा स्पोडोप्टेरा जैसे कीड़ों के नियंत्रण के लिए व्यवसायिक रूप से उपलब्ध है।

घरेलू कीटनाशक का प्रयोग :

घर में उपलब्ध संसाधनों का प्रयोगकर कीड़ों की संख्या को कम किया जा सकता है। इनके प्रयोग से लागत में कमी होती है एवं पर्यावरण में संतुलन बना रहता है।

(क) नीम की पत्तियों से कीटनाशक बनाना : एक बाल्टी को नीम की पत्तियों से भर देते हैं तथा उसको पानी में डुबोकर चार दिन के लिए छोड़ देते हैं। पाँचवा दिन नीम की पत्तियों को छाँट कर मिश्रण तैयार कर लेते हैं एवं घोल को छानकर थोड़ा सा साबुन का घोल मिलातें हैं उसके बाद छिड़काव किया जाता है। इसके कारण बहुत से कीड़ों की संख्या कम हो जाती है।

(ख) नीम के बीज से कीटनाशी बनाना : एक किलोग्राम नीम के बीज को धूल में परिवर्तित करते है। धूल को 20 लीटर पानी में मिलाकर रातभर फूलने के लिए छोड़ देते हैं। सुबह अच्छी तरह मिश्रित कर छान लेतें हैं। छानने के बाद घोल में 20 ग्राम साबुन का घोल मिलाकर फसलों पर छिड़काव करते हैं। नीम के बीज से निर्मित कीटनाशी अधिक प्रभावशाली होता है एवं अनेक प्रकार के कीड़ों के नियंत्रण में सक्षम होता है।

(ग) खैनी का डंटल से कीटनाशक बनाना : एक किलोग्राम खैनी का डंटल को चूर्ण बनाकर 10 लीटर पानी में मिलाकर गर्म करते हैं। आधा घंटा खौलने के बाद घोल को ठंडा होने के लिए नीचे उतार देते हैं। जब घोल का रंग लाल भूरा हो जाता है तब घोल को छानकर 20 ग्राम साबुन का घोल मिला देते हैं। इस घोल में 85 से 90 लीटर पानी मिलाकर फसलों पर छिड़काव करते हैं। इनके प्रभाव से लाही, मधुआ, श्वेतमक्खी, दहिया कीट इत्यादि को नियंत्रित किया जाता है।

(घ) हरा तीता मिर्चा एवं लहसुन से कीटनाशक बनाना : तीन किलोग्राम हरा तीता वाला मिर्चा लेते हैं। मिर्चा के डंटल को हटाकर पीसकर 10 लीटर पानी में डुबोकर रातभर छोड़ देते हैं। दूसरा बर्त्तन में आधा किलोग्राम लहसुन को कूंचकर 250 मि.ली. किरासन तेल में डुबोकर रातभर छोड़ देते हैं। सुबह में दोनो घोल को अच्छी तरह मिलाकर छान लेते हैं। एक लीटर पानी में 75 ग्राम साबुन का घोल बनाकर तीनों घोल को एक साथ मिला दिया जाता है। दो ढाई घंटा स्थिर होने के बाद घोल को पून: छान लेते हैं। इस घोल में 70 लीटर पानी मिलाने के बाद फसलों पर छिड़काव करना चाहिए। यह कीटनाशी गोभी के कीड़ों के अलावे अन्य फसलों में लगने वाले पिल्लु को भी नियंत्रित करता है।

(ङ.) गोमूत्र से कीटनाशक बनाना : पाँच किलोग्राम गोबर, पाँच लीटर पानी एवं पाँच लीटर गोमूत्र को मिश्रित कर चार दिनों तक सड़नें के लिए छोड़ देते हैं। पाँचवां दिन घोल को अच्छी तरह से मिलाकर छान लेते हैं। छानने के बाद घोल में 100 ग्राम

चूना मिलाते हैं। इस घोल में 67-68 लीटर पानी मिलाकर फसलों पर छिड़काव करना चाहिए। इसके प्रभाव से कीड़ें, फसलों पर अंडा नहीं दे पाती है। इस कीटनाशी के उपयोग से फसलों का रोग से बचाव होता है एवं फसलों का रंग हरा-भरा हो जाता हैं।

पौधों से बना कीटनाशी :

नीम से निर्मित कीटनाशी जैसे - अचूक, निम्बेसिडिन, निमेरिन, निमोल, बेनगार्ड का व्यवहार कीड़ों के नियंत्रण के लिए अच्छा पाया गया है।

कीटनाशक रसायनों का प्रयोग :

आवश्यकता होने पर ही सुरक्षित कीटनाशी का व्यवहार उचित समय एवं उचित मात्रा में करना चाहिए।

उन्नत तकनीक के अंगीकरण से लाभ

प्रचलित रासयनिक कीटनाशक नियंत्रण के मुकाबले समेकित कीट प्रबन्धन से निम्नलिखित लाभ देखे गए हैं:-

1. यह एक टिकाउ एवं प्रकृति में पाये जाने वाले संसाधनों पर आश्रित होने के कारण लाभदायक है।
2. यह पर्यावरण को शुद्ध करने में मददगार होता है।
3. मनुष्य एवं जानवरों के स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है।
4. कीड़ों में रसायन के प्रति प्रतिरोधक क्षमता को कम करने में सहायक होता है।
5. मित्र कीट एवं लाभदायक जीवों की संख्या में बढ़ोतरी होती है।
6. खाद्यानों एवं साग-सब्जियों में कीटनाशी के अवशेष की मात्रा नगण्य होता है।
7. रासायनिक कीटनाशी के छिड़काव में भारी कटौती होती है।
8. पर्यावरण में जीवों का संतुलन बना रहता है।
9. मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखता है।

7. अंगीकरण में समस्याएं और संभावनाएं

(क) लाभकारी कीड़ों का पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होना।

(ख) सुझाये गये आर्थिक हानि स्तर को देखने के लिए सरल तकनीकों का अभाव।

(ग) किसानों को पूरी जानकारी का अभाव।

(घ) प्रचार-प्रसार की समस्याएं।

(ड.) कीटनाशी रसायन से मुक्त फल, सब्जी एवं खाद्यान्न का अधिक कीमत न मिलना।

(च) सामाजिक आर्थिक समस्याएं।

समेकित कीट प्रबन्धन के अंगीकरण की सम्भावना अच्छी है। इसके लिए किसानों को शिक्षा की आवश्यकता है। सरकार को परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों के पालने के लिए जैव प्रयोगशाला के गठन की आवश्यकता है। इसको आगे बढ़ाने के लिए कृषि वैज्ञानिकों एवं कृषि पदाधिकारी एवं कर्मचारीगण की सहयोग की आवश्यकता है। उन्नत बीज, जैविक कीटनाशी, नीम से निर्मित बाजारू दवा की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता जरूरी है।

लाभ-मुल्य विश्लेषण

समेकित कीट प्रबन्धन के अंगीकरण से कपास की खेती में लाभ देखा गया है (तमिलनाडु)

अवयव		औसत	
		आई.पी.एम.क्षेत्र	साधारण क्षेत्र
1.	रासायनिक कीटनाशी का छिड़काव	6.3	10.7
2.	रासायनिक कीटनाशी की मात्रा (किलो ए. आई./हे.)	3.8	9.2
3.	छिड़काव में अन्तर (दिन)	17.1	9.2
4.	लाभकारी जीव (प्रति सैम्पल)	25.7	9.5

इस तालिका को देखने से पता चलता है कि उन क्षेत्रों में जहाँ समेकित कीट प्रबन्धन का काम चल रहा है, वहां साधारण की तुलना में यह अधिक लाभकारी है।

प्रमुख अनुशंसाएं :

समेकित कीट प्रबन्धन को सफल बनाने के लिए निम्न बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है :

1. गहरी जुताई करके खेतों को धूप दिखाना
2. खर-पतवार को नष्ट करना
3. संतुलित मात्रा में खाद का प्रयोग
4. स्वस्थ्य बीज की उपलब्धता सुनिश्चित करना
5. बीजोपचार करना
6. फसल-चक्र अपनाना
7. कीड़ों से सुरक्षा के लिए घर में बनाये गए कीटनाशी का व्यवहार करना
8. परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों को बढ़ावा देना
9. जैविक कीटनाशी का प्रयोग करना
10. नीम से निर्मित बाजारू कीटनाशी का व्यवहार करना
11. आवश्यकतानुसार उचित कीटनाशी का प्रयोग उचित समय एवं उचित मात्रा में करना
12. फसलों को बराबर देख-रेख करते रहना।

▲▲▲

समेकित कीट प्रबंधन एवं उनके व्यावहारिक पहलू

डॉ. रवीन्द्र प्रसाद
कीट विज्ञान विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

झारखण्ड समेत संपूर्ण भारत वर्ष में अधिकाधिक फसलोत्पादन की प्रकिया की पूर्ति के उद्देश्य के चलते फसलों को कीट व्याधियों से पूर्ण सुरक्षा प्रदान करने हेतु रसायनिक कीटनाशियों का अंधाधुध प्रयोग लगभग दो-तीन दशकों से चलता आ रहा है। परिणामस्वरूप पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव तो पड़ा ही है या इसके अतिरिक्त जिन हानीकारक जीव जंतु (जैसे- मकड़ी एवं वरूथी) का अस्तित्व पूर्व में नगण्य एवं गौण रहता आ रहा था, वे भी हानिकारक एवं मेजर पेस्ट के रूप में प्रकट हो रहे हैं। अत: सिर्फ रसायनिक कीटनाशीयों के प्रयोग के द्वारा फसलों की निरंतर सुरक्षा कर पाना असंभव हो रहा है। यही कारण है कि समेकित कीट एवं पेस्ट प्रबंधन का प्रयोग आधुनिक कृषि में आवश्यक हो गया है।

सफल खेती की निरंतरता को कायम रखने के लिए समेकित पेस्ट प्रबंध एवं समेकित बरूथी नियंत्रण प्रणाली का प्रचार-प्रसार हमेशा किया जाना आवश्यक है।

'पेस्ट' शब्द ग्रीक भाषा के ''पेस्टीस'' शब्द से प्राप्त किया गया है, जिसका शब्दिक अर्थ तंग करना या नुकसान करना होता है। अत: 'पेस्ट' शब्द का शाब्दिक अर्थ है - वह जंतु जो मानव के लिए बाधक हो, मानव को तंग करता हो। कृषि विज्ञान के व्यवहारिक परिप्रेक्ष्य में पेस्ट वह जीवित जंतु है जो हमारे फसल को आर्थिक रूप से क्षति पहुँचाता है।

शब्द 'पेस्ट' हमेशा उन जीवित जंतुओं को इंगित करता है जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में हमारे फसलों को आर्थिक रूप से नुकसान पहुंचाते है। अत: नुकसान पहुंचाने वाले जीव-जंतु जैसे :- कीड़े-मकोड़े, चूहे, कौआ, तोता, घोंघा आदि पौधों के रोग जनक जीवाणु, विषाणु, फफूंद आदि तथा फसलों के प्रतिस्पर्धा करने वाले खर-पतवार, सभी पेस्ट के विस्तृत क्षेत्र में आते है। ठीक यही कारण है कि पौधा संरक्षण विभाग के जिम्मे कीट नियंत्रण, रोग व्याधि नियंत्रण, खर-पतवार-नियंत्रण, चूहे आदि का नियंत्रण करने की सही तकनीकियों का प्रसार कार्य सौंपा गया है। कृषि जगत् में हानिकारक जंतुओं जैसे - पौधों एवं जानवरों से नुकसान होने की प्रक्रिया को रोकने तथा कम करने की विधि को सामान्य रूप से 'पेस्ट कंट्रोल' या 'पौधा संरक्षण' कहा जाता है। आज से कुछ समय पहले तक जीव-जंतुओं से होने वाले नुकसान को रोकने की विधियों को पेस्ट कंट्रोल की संज्ञा दी जाती थी, जिसके अन्तर्गत कीड़ो-मकोड़ों तथा रोग-व्याधि जनक जीवाणुओं एवं विषाणुओं का सर्वनाश या उन्मूलन करना हमारा व्यापक उद्देश्य हुआ करता था, परन्तु आज मान्यता बदल गयी है। पर्यावरण एवं परिस्थिति की संतुलन को बनाये रखने के लिए आज पेस्ट कंट्रोल के बदले में पेस्ट मैनेजमेंट या इन्टेग्रेटेड पेस्ट-मैनेजमेंट (I. P.M.) ने जगह ले लिया है। आज हमारा उद्देश्य कीड़े-मकोड़े का सम्पूर्णत: सफाया नहीं, बल्कि उनके संख्या या आबादी को इस रूप में घटाये अथवा दबाने की व्यवस्था या प्रबंध करना है कि वह हमारे फसलों का नुकसान आर्थिक रूप में न कर सकें। क्योंकि कोई भी कीड़े-मकोड़े जो हमारे फसलों के लिए मेजर पेस्ट कहे जाते है उनका सफाया करना व्यवहारिक दृष्टिकोण एवं पर्यावरण संतुलन के लिए संभव नहीं है, और उचित भी नहीं है। आज हम अपने जीवन को सुचारू रूप से संचालित करने के उद्देश्य से हर क्षेत्र में प्रबंधन-प्रक्रिया की बात करते है :- जैसे ईंटेग्रेटेड कॉप मैनेजमेंट, ग्रामीण विकास प्रबंधन, बाल-विकास प्रबंधन, आर्थिक प्रबंधन, मारकेटिंग - प्रबंधन एवं आयात तथा निर्यात प्रबंधन आदि। ठीक इसी प्रकार कृषि फसलों, उत्पादों को जीव-जंतुओं से होने वाले आर्थिक क्षति को न्यूनतम एवं नगण्य करने के उद्देश्य से आज ईंटेग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेंट (IMPM) की आवश्यकता पड़ती है।

पेस्ट मैंनेजमेंट की कई विधियां है जैसे :

1) कल्चरल या शस्य विधि, 2) यांत्रिक विधि, 3) भौतिक विधि, 4) रासायनिक विधि, 5) जैविक विधि एवं 6) वैधानिक विधि

उपर्युक्त समस्त प्रकार के विधियों के द्वारा पेस्ट कंट्रोल किया जाता है। इन विधियों को ईंटेग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेंट का उपस्कर या अंग भी कहा जाता है। इन सभी विधियों को संतुलित तथा विवेकपूर्ण ढ़ंग से एक साथ प्रयुक्त करते हुए जब हम पेस्ट कंट्रोल करते हैं तो वैसी समेकित विधि को इटेंग्रेटेड पेस्ट मैंनेजमेंट कहते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि किसी खास परिस्थिति या अवस्था में किसी अभीष्ट पेस्ट/हानि को नियंत्रित करने के लिए उपर्युक्त वर्णित समस्त विधि को एक साथ समावेशित करके प्रयोग हो ही / एक से अधिक विधियों

का समावेश तो खास-खास परिस्थिति एवं अवस्था के अनुरूप ही किया जाता है। जैसे - स्वस्थ बीजों को अच्छी तरह तैयार, खर-पतवार एवं कीड़े-मकोड़े एवं हानिकारक जीवाणु रहित खेतों में या क्यारियों में बुआई एवं रोपाई करके, उसे अच्छी तरह अनुसंशित मात्रा में खाद-पानी देते हुए समय-समय पर आवश्यकतानुसार कीड़े-मकोड़े की संख्या के मुताबिक उनका नियंत्रण हाथ से चुनकर, अक्रांत घास-पत्तियों को काटकर अथवा ज्यादा क्षति की आशंका आने पर उपयुक्त पेस्टीसाइड का प्रयोग करना चाहिए। पेस्ट कंट्रोल के लिए हर हालत में हर अवस्था में अंधाधुंध पेस्टीसाइड्स (जैसे कीटनाशी एवं बरूथी नाशी रसायन) का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

पेस्ट मैनेजमेंट का आर्थिक सिद्धांत : पेस्ट मैनेजमेंट पर, खास अवस्था में किया गया खर्च (मौद्रिक मूल्य) हमेशा पेस्ट मैनेजमेंट के इस्तेमाल के चलते प्राप्त अनुमानित अतिरिक्त उपज के मूल्य से कम होना चाहिए अन्यथा उक्त पेस्ट मैनेजमेंट विधि अमुक परिस्थिति में आर्थिक रूप में न्यायोचित नहीं होगी। यानी, पेस्ट मैंनेजमेंट के चलते प्राप्त अधिक उपज की कीमत (रूपये में) पेस्ट (कीट एवं बरूथी आदि) को नियंत्रित करने के लिए किये गये खर्च से हर हालत में ज्यादा होना चाहिए।

पेस्ट मैनेजमैंट के लिए आधारभूत मौलिक बातें :-

1. फसल की संपूर्ण जानकारी - अवस्था वार कीट-व्याधियों के आक्रमण का ज्ञान एवं पौधों से संबधित समस्त जानकारी।
2. पेस्ट कम्प्लेक्स की जानकारी - पहचान, जीवन-चक्र क्षति के अभिलक्षण।
3. हानिकारक कीड़े-मकोड़े एवं प्राकृतिक शत्रुओं की पूरी-पूरी जानकारी।
4. कृषि जलवायु परिस्थिति का ज्ञान - जैसे - अपलेंड, टालक्षेत्र या निश्चित क्षेत्र, मौसम विशेष में पाये जाने वाले हानिकारक कीट आदि की अलग - 2 जानकारी एवं ज्ञान। फसलों पर उनके प्रभाव का ज्ञान।
5. पेस्ट मैंनेजमेंट विधियों के प्रयोग की जानकारी - उनके गुण-अवगुण, लाभ एवं हानि का तुलनात्मक ज्ञान।
6. पौधा संरक्षण संबधी उपादान एवं उपलब्धता की जानकारी।

फसलों के हानिकारक कीट एवं उनका समेकित नियंत्रण

खाद्यान्न फसलों खास कर गेहूँ, जौ, चना, मसुर, मटर तथा तेलहनी फसलों में लगने वाले कीड़े की जानकारी इस प्रकार है -

1. **पोलीफेगस इन्सेक्ट पेस्ट :** वैसे इन्सेक्ट पेस्ट जो वनस्पति की दृष्टिकोण से कई वर्गो के पौधों पर आक्रमण करके उनकों हानी पहुँचाते है, वे "पोलीफेगस इंसेक्ट पेस्ट" कहलाते है जैसे :-
   क) मिट्टी में पाये जाने वाले कीट : दीमक यानी जड़ को क्षति करने वाले कीट जैसे - कजरा पिल्लु एवं सैनिक कीट आदि।
   ख) पौधों के जड़ से उपर वाले भाग को हानि करने वाले कीट - रोमिल (रोयेदार) कीट, सेमीलूपर, सैनिक कीट एवं हेलियोथिस कीट।
2. **मोनोफेगस पेस्ट :** वैसे कीट जो वनस्पतिक दृष्टिकोण से एक ही वर्ग (कूल) के पौधो पर आक्रमण करते है, वे मोनोफेगस पेस्ट कहलाते है। जैसे :- लाही एवं फली छेदक।

सुविधा के लिए हम पौधो के विभिन्न अंगों पर लगने वाले कीड़ों को अलग - 2 करके जानकारी हासिल कर सकते हैं। जैसे जड़ में लगने वाले कीड़े दीमक, कजरा, पिल्लू एवं सफेद ग्रब।

तना में लगने वाले कीड़े - तना छेदक एवं भूआ पिल्लू (विहार रोमिल कीट)

पत्तियों में लगने वाले कीड़े :-

1. पत्र भक्षी कीट - भूआ पिल्लू, सेमी लूपर, सरसों की आरा मक्खी, हेलियोथिस लारबा।
2. पत्र सत्व चूसक कीट - लाही, वग, माहू, दहिया
3. पत्र सुरंगक (Leaf miner) - लीफ माइनर

कलियों/ फूलों में लगने वाले कीट : लाही, गालफ्लाई।

फलों/ फलियों में लगने वाले कीट : ग्राम पॉड बोरर (फली छेदक कीट)

पोली फेगस पेस्ट

दीमक : झारखंड के पठारी क्षेत्र की मिट्टी को दीमक अक्रांत मिट्टी कहते हैं। रबी-मौसम में यह कीट खरीफ की अपेक्षा ज्यादा क्षति पहुँचाते हैं। यह कीड़ा फसल को बुआई के समय से लेकर बीजों के अंकुरण के समय एवं बीचड़ो के बढ़ने से लेकर पौधो के वृद्धि काल तक फसल को क्षति पहुचाते हैं। अंकुरण का और पौधो के जड़ो का भक्षण करके उन्हें काट डालते हैं। ज्यादा आक्रमण की स्थिति में फसल की पुनः बुआई करनी पड़ सकती है। फसलों के वृद्धि काल में दीमक का आक्रमण होने पर पौधे पहले कमजोर हो जाते हैं, फिर सूख जाते हैं, पौधो में फलन नहीं हो पाता है या फलन होता भी है तो उसमें दाने भर नहीं पाते हैं।

दीमक सजीव तथा निर्जीव दोनों प्रकार के वनस्पतिक पदार्थ को खाते हैं। इन कीटों का निर्वाह सेलुलोज के भक्षण से होता है।

दीमक कीट का नियंत्रण एवं प्रवधन :-

1. खेतों से हमेशा पुराने फसल के अवशेष को जला करके अथवा सड़ा करके या चुन करके नष्ट कर देना चाहिए।
2. खेतों में हमेशा अच्छी तरह से सड़े-गले गोबर खाद या कंपोस्ट ही डालना चाहिए। कच्चा गोबर या ताजे एवं अविघटित खाद, (घास-पात या वानस्पतिक अवशेष) खेतों में डालने से दीमक के प्रकोप की आशंका ज्यादा बनी रहती है।
3. 4-6 मिली.ली./कि.ग्रा. बीज की दर से बीज का उपचार क्लोरपाइरीफास 20ई.सी. नामक कीटनाशी से करके बीज की बुआई करनी चाहिए। इस तरह प्रति कि0 ग्रा0 बीज के उपचार के लिए क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. 4.0-6.00 मि. ली. एवं जल 50 मि.ली. की आवश्यकता होती है।
4. सिचाई के जल में खेतों के प्रवेश बिन्दु पर क्लोरपाईरी फास 20 ई.सी. का बूंद-बूंद करके प्रयोग बती धारी बर्तन द्वारा करके मिट्टी का उपचार किया जा सकता है।
5. खड़ी फसल के जड़ों को बाटर कैन (पानी का झरना) के द्वारा भी क्लोरपाइरी फास 20 ई.सी. से बने घोल (1.0-1.5 मि0 ली./लीटर पानी) से भी किया जा सकता है।
6. 2.5 लीटर क्लोरपाईरीफास 20ई0 सी0 प्रति हे. की दर से 50 किलोग्राम/सूखे बालू में मिलाकर खेत की तैयारी के समय या सिचाई पूर्व खेतों में बिखेरने से दीमक के प्रकोप को रोका जा सकता है।

सैनिक कीट (Mythimna Separata)

वयस्क कीट पीला भूरा रंग वाली तितली होती है। नवजात शिशुकीट गंदले सफेद और बाद में हरे रंग के पिल्लु होते है। हालांकि सैनिक कीट हर क्षेत्र में हरेक साल उपस्थित नहीं होता है। उसकी उपस्थिति जहाँ-तहाँ, जब-तब अनियमित रूप से होता है। यह कीड़ा फौज की तरह खेतों में आता है और फसल का भारी नुकसान करता है। ये कीट दिन में मिट्टी में, ढेले में एवं पौधो के जड़ क्षेत्र में छिपे रहते है और रात में फसलों को चट कर जाते हैं।

आक्रमण के प्रारंभिक अवस्था में नवजात लारवा (पिल्लु) केन्द्रीय एवं कोमल पत्तियों को खाते हैं और बाद में बड़े होते पिल्लुएँ पुरानी पत्तियों को भी खा डालते हैं और उन्हे पूर्णतः छलनी (Skeletonize) कर डालते है। बड़े पिल्लुओं के मलों के दानें को पौधों पर तथा खेतों में सैनिक कीट के आक्रमण को इंगित करता है। ज्यादा आक्रमण की दशा में खेत जानवरों से चरे जाने का दृश्य पेश करते हैं।

सैनिक कीट का नियंत्रण एवं प्रबंधन :

1. सैनिक कीट का आक्रमण प्रारंभ होते ही खेतों की सिंचाई अच्छी तरह कर देनी चाहिए। 2) मिथाईल पराथियान 2 प्रतिशत धूल का 25-30 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से खड़ी फसल में भूरकाव करना चाहिए। इस कीटनाशी का भूरकाव खेतों के मेड़ों पर उगे घासों एवं आस-पास के परती खेतों (यदि ऐसा हो तो) में भी कर देना चाहिए ताकि उन जगहों में छिपें कीट का भी सफाया हो जाय। डायक्लोरफास या (नुभान/वैपोना) 500 मि.ली. या क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. का 800 मि.ली. प्रति हे. का छिड़काव खड़ी फसल पर, मेड़ो पर एवं खेतों के आसपास के परती जमीनों में उगे घासों पर कर देना चाहिए।

धयातब्य : कीट नाशी का प्रयोग सैनिक कीट के नियंत्रण के लिए शाम की अवधि में ही करना चाहिए।

कटुई कीट (Cut worm) : रवीजीया विवील, कटबर्म के लारवा (Larvae) तथा गुजीया वीवील के वयस्क अकुंरते हुए बीचड़े को जमीन के स्तर पर काट डालते हैं। अधिक आक्रमण की स्थिति में फसल की बुआई पुन : करनी पड़ सकती है।

कीट नियंत्रण/ प्रबंधन : दीमक जैसा ही इनका भी नियंत्रण किया जाता है।

सेमी लूपर एवं कूबड़ा फीट :

वयस्क कीट का शरीर हल्का भूरा तथा अग्रपंख भूरापन के लिए उजले धारी युक्त तथा पिछला पंख सफेद रंग का भूरे बोर्डर वाला रहता है।

यह सभी दलहनी फसलों को अक्रांत करता है। शिशुकीट पत्तियों, कोपलों तथा कोमल फलों को खाते है। पौधो को ज्यादा आक्रमण की दशा में पत्र विहीन बना डालते हैं।

कीट नियंत्रण :-

1. साफ सुथरी खेती, गहरी जोताई से मिट्टी में पड़े प्यूपा नष्ट हो जाते हैं।
2. मोनो क्रोटोफास 36 ई.सी. का 800 मि.ली./हे.0 अथवा इन्डोसल्फान 35 ई.सी. का 1000 - 1200 मि. ली. /हे. का छिड़काव करना चाहिए।

उपर्युक्त वर्णित तथ्यों के आलोक में विभिन्न फसलों जैसे - मक्का, गेहूँ, जो, चना, मसुर एवं सब्जी आदि फसलों के लिए और सब्जी फसलों के लिए पेस्ट मैनेजमेंट के मांडल (नमूना) को निम्नलिखित रूप में जाना जा सकता है -

मक्का के लिए पेस्ट मैनेजमेंट मांडल :

क) खेतों की सफाई पूर्ण-तैयारी।

ख) बीज का उपचार क्लोरपाईरी फास 20 ई.सी. (डरमेट/क्लासिक/लेथल/डर्सवान) से प्रतिकिलों बीज 4 से 6 मि.ली. प्रति किलो ग्राम बीज यानी 400-500 मि0 ली. प्रति क्विंटल बीज की दर से कर लेने के बाद बोआई करने पर पौधो की क्षति दीमक, कजरा पिल्लू से नगण्य मात्रा में होती है अथवा क्षति नहीं होती है।

ग) मक्के के पौधे के प्रारम्भ में कार्बोफयूरान 3 जी0 (फूयूराडान डायफयूरान) नामक दानेदार दवा का प्रयोग 15 - 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से करने पर फसल तना छेदक के प्रकोप से बच जाता है।

घ) तना छेदक के कीट रोधी किस्में का प्रयोग खेती में करके तना छेदक से फसल होने वाले हानि से बचाया जा सकता है।

ड.) भूट्टे को तोता या कौवा के भक्षण (चुगने) से पूर्णत: बचने के लिए रिफलेक्टीव र्ड सर्केरिंग रिबन का इस्तेमाल खेतों के आर-पार समानान्तर रूप में 5-5 मी. की दूरी पर खम्भों (खूटो) से तानकर बाँधने और खेतो के चारो ओर धनबाल से आधा मीटर उपर रखते हुए बाँधा जाता है। इसकी कीमत 60/- रू0 प्रति 100 मीटर पड़ता है इस प्रकार इस पर 1250/- रुपये से 1350/- रुपये प्रति हेक्टर खर्च आता है। इस प्रकार बिना प्रकृति से छेड़छाड़ किये हम पक्षी से होने वाले क्षति से मक्के को सम्पूर्ण रूप से बचा सकते हैं।

चना, मटर, मसुर आदि के लिए पेस्ट मैनेजमेंट का मॉडल :

क) खेतो की साफ-सुथरी तैयारी।

ख) बीजो को क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. के 400-600 मि.ली. प्रति क्विंटल बीज की दर से, बोने से पूर्व उपचार करके बुआई करने से फसल मिट्टी में पाये जाने वाले समस्त कीटों जैसे - दीमक, कजरा, झींगुर आदि बचा रह जाता है।

ग) फसलों के उपर, फली आने के बाद मोनोसिल का 800 मि.ली. अथवा इंडोसल्फरन का 1500 मि.ली. से बने पानी के घोल का छिड़काव पंन्द्रह दिनों के अंतराल पर दो-तीन बार आवश्यतानुसार कर देने से फसल सेमीलुपर, लाही, भूआ, पिल्लू एवं फलीछेदक के प्रकोप से बचा रह जाता है।

सब्जी फसलो के पेस्ट मैनेजमेंट मॉडल :

क) साफ-सुथरी खेती :- खेतों की साफ सुथरी तैयारी, घास-पात एवं फसल के पूर्व अवशेष का संपूर्ण विनाश करना आवश्यक है। ऐसा करने से कीड़े-मकोड़ें का आक्रमण भी कम होता है।

ख) बीचड़ो की सुरक्षा - सीड बेड की मिट्टी का उपचार क्लोरपाईरीफास 20 ई.सी. के घोल (1.0- 1.5 मि.ली. प्रति ली. पानी) से कर लेने के बाद बीजों की बुआई करने से पौधे (बीचड़े) दीमक आदि के प्रकोप से बचे रह जाते हैं।

(ग) कार्बोफूरान 3 जी0 दानेदार कीटनाशी का 3 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से पौधो के जड़ क्षेत्र की मिट्टी में बिखेर देने से बीचड़ो में कीड़े - मकोड़े नहीं लग पाते हैं।

घ) फसलो में दीमक के प्रकोप की आशंका होने पर खेतों की तैयारी के समय लिन्डेन धूल 20-25 कि.ग्रा. प्रति हे. की दर से मिट्टी में मिला देना चाहिए।

ड.) बीचड़ों के खेतों में रोपने के 8 - 10 दिनों के बाद पौधे के चारों ओर कार्बोफयूरान 3 जी. आधा ग्राम प्रति पौधे की दर से जड़ क्षेत्र में डाल देने से फसल कम से कम एक माह तक कीड़ो के आक्रमण से बचा रह सकता है।

च) आवश्यकतानुसार क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. के 1000 मि.ली. या क्वीनालफॉस 25 ई.सी. के 1000 मि0 ली. प्रति हे. या रिपकार्ड 10 ई.सी. का 600 मि.ली. प्रति हे. की दर से छिड़काव 15-20 दिनों के अंतराल पर करने से फसल सेमीलूक्र, लाही, भूआ, पिल्लू तथा डायमंड बैंक माथ के प्रकोप से बचा रह सकता है।

छ) तना छेदक, पर-भक्षी कीटों जैसे भुआ पिल्लू, पत्र लपेटक कीट, कुबड़ा कीट (सेमी लूपर) अथवा फल बेधक कीट के प्रकोप से फसलों के बचाव हेतु बैक्टेरिया से बने कीटनाशी जैसे- डेलफिन, वायोविट या डाइपेल में से किसी एक का 750 से 1000 ग्राम को 600-800 लीटर पानी में घोल बनाकर एक हेक्टेयर में छिड़काव करके इन कीड़ो से फसल को बचाया जा सकता है। वैकल्पिक रूप में नीम से निर्मित कीटनाशी जैसे - नीमगार्ड, भेनगार्ड, नीमोसिडिन में से एक का पानी में 5 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करके, पर्यावरण को बिना प्रदूषित किये ही फसलों को कीड़ों के प्रकोप से बचाया जा सकता है।

ज) कीटरोधी किस्मे का प्रयोग कर के कीटनाशीयों के अवांछित प्रयोग एवं उनके दुष्प्रभाव तथा कीड़ो से होने वाले क्षति से फसलो को बचया जा सकता है।

सामान्य निर्देश :

क) कीटो के सही पहचान के बाद आर्थिक क्षति के अनुमानित गहनता की जांच के बाद सही पेस्ट मैनेजमेंट विधि का प्रयोग किया जाना चाहिए।

ख) सही दवा का सही समय पर सही विधि द्वारा, सही अवस्था में, सही मात्रा में आवश्यकतानुसार आर्थिक एवं पर्यावरण पहलुओं पर विचार करके करना चाहिए।

ग) पाँच मिली. टीपाल ए.जी., सैंडोविट या धानूविट आदि स्टीकर प्रति एक लीटर छिड़काव के घोल में मिलाकर पौधो पर छिड़काव करने से पेस्टीसाईड का उचित उपयोग तो होता ही है परिणाम भी अच्छी मिलती है। रोयेंदार पिल्लू एवं मोमिया पत्तियों जैसे - कच्चू, केला, फूल गोभी एवं बंदगोभी के फसलों के लिए छिड़काव के घोल में स्टीकर मिलाना आवश्यक है।

▲▲▲

उन्नतशील फार्म कार्य संयंत्र एवं उपकरण

डॉ. ब्रज नन्दन प्रसाद
कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

जनसंख्या की वृद्धि के साथ-साथ अनाज के उत्पादन में भी वृद्धि होना आवश्यक है। उत्पादन बढ़ाने के दो ही उपाय हैं, या तो कृषि योग्य भूमि का रकबा बढ़ाय जाय या प्रति एकड़ उपज बढ़ाया जाय। कृषि योग्य भूमि का क्षेत्र बढ़ाने की संभावना बहुत कम हैं। इसलिए उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रति एकड़ उपज बढ़ाना ही एकमात्र उपाय है। कृषि निदेशालय एवं कृषि विश्वविद्यालय के विशेषज्ञ एवं वैज्ञानिक सतत् प्रयत्नशील है। अधिक उपज के लिए अच्छे बीज, समय पर बुआई, उचित पौधा संरक्षण, उचित पौष्टिक तत्व, अच्छे खेत के तैयारी एवं उचित दूरी में बुआई इत्यादि जरूरी है।

अच्छे खेत की तैयारी, समय पर बुआई, उचित पौधा संरक्षण, सामयिक खर-पतवार नियंत्रण, फसल कटाई एवं जुताई के लिए उन्नत कृषि यंत्रों की आवश्यकता है। झारखण्ड के पठारी क्षेत्रों की मिट्टी जलधाारण क्षमता कम और जल्द ही भूमि के उपरी सतह की नमी में कमी आ जाती है। किसानों को खेती की तैयारी एवं बुआई के लिए बहुत कम समय मिलता है। उन्नत कृषि यंत्रों की कमी के कारण किसानों को बाध्य होकर बीज को नमी की उपस्थिति में जमीन पर छिड़क देना पड़ता है। इसमें किसानों को अधिक बीज भी लगाना पड़ता है, साथ-साथ अंकुरण भी कम एवं असमान होता है।

जुताई यंत्र

अविकसित जुताई यंत्र (देशी हल) से अच्छी तरह जमीन की तैयारी नहीं हो सकती है। जिसके कारण पौधे के जड़ों का विकास ठीक तरह से नहीं हो पाता है और पौधा पूर्ण स्वस्थ एवं विकसित नहीं हो पाता है। फलत: उपज में कमी हो जाती है। देशी हल के स्थान पर अगर किसान मिट्टी पलटने वाला हल (मोल्डबोर्ड हल) या बिरसा रीजर हल से करें तो अच्छी जुताई के साथ-साथ समय का भी बचत होता है। मोल्डबोर्ड हल से जुताई करने से 'L' आकार का कुड़ बनता है जिसमें एक ही जुताई में सम्पूर्ण खेत की जुताई हो जाती है। वहीं पर देशी हल से जुताई करने से 'V' आकार का कुड़ बनता है जिसमें सम्पूर्ण जुताई के लिए कम से कम तीन बार जुताई करनी पड़ती है। देशी हल से जुताई करने पर ढेला उठता है वहीं मिट्टी पलटने वाला हल से ढेला नहीं उठता है जिससे जमीन तैयारी करने में असानी होती है। मोल्ड बोर्ड हल बहुत आकार में उपलब्ध है। पशु चालित मोल्ड बोंड हल 15 एवं 20 से.मी. में उपलब्ध है पर यह हल यहाँ के स्थानीय पशु खींचने में समर्थ नहीं है इसलिए बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के कृषि अभियंताओं ने यहाँ के बैलों की शक्ति का आकलन कर 10 से.मी. का हल बनाया जिसे यहाँ के स्थानीय बैल आसानी से खींच लेते हैं। इस हल से दिन भर में 0.16 हेक्टेयर की जुताई की जा सकती है। अगर किसान ट्रेक्टर द्वारा जुताई करें और 40 सेमी. आकार का हल वाला बटम प्रयोग करें तो दिन भर में 7 से 8 हेक्टेयर जुताई कर सकते हैं। जहाँ पर मिट्टी चिपचिपा हो, अधिक कड़ी हो या कंकड़ील पथरीली हो वहाँ मोल्डबोंड हल से अच्छी जुताई नहीं हो सकती हैं, वैसे स्थान पर तवादार हल का उपयोग करना चाहिए। तवादार हल भारी होती है, इसलिए बैलों द्वारा चलाना संभव नहीं है। यह ट्रैक्टर चालित हल है।

प्रथम जुताई मिट्टी पलटनें वाले हल से करने के बाद खेत की पूर्ण तैयारी के लिए पशुचालित बिरसा रीजर हल या पाँच फारा या तीन फारा कल्टीवेटर से करें। कल्टीवेटर जिस किसान के पास है वे कड़े कल्टीवेटर या तवादार हैरों द्वारा खेत की तैयारी करें। तवादार हैरो खरपतवार को काटकर छोटा कर देता है और खेत में मिला देता है।

खेत को बुआई के लिए समतल करना जरूरी है इसके लिए उन्नत पाटा का उपयोग करना चाहिए। यह पाटा बैल चालित एवं ट्रैक्टर चालित दोनों में उपलब्ध है। पाटा चला देने से ढेला टूट जाता है एवं बचा हुआ खर-पतवार भी बाहर निकल जाता है।

बुआई यंत्र

झारखण्ड के किसान इस वैज्ञानिक युग में भी पुरानें औजारों का ही उपयोग मुख्यत: धान, गेहूँ या अन्य फसलों की बुआई के लिए कर रहे हैं। इसका मुख्य कारण उन्नत बुआई यंत्रों एवं उनसे फायदे के बारे में किसानों को सही जानकारी नहीं मिल पाना है।

बुआई यंत्र उपयोग न कर किसान बीज को तैयार खेत के ऊपर छिड़क देते हैं। जिसके कारण सभी बीज को उचित नमी नहीं मिल पाता है और अंकुरण नहीं हो पाता है साथ ही साथ पौधे असमान दूरी पर उगते हैं जिससे सभी पौधों को एक समान जमीन से पोषक तत्व नहीं मिल पाता है। छिड़काव विधि से बुआई किए हुए फसल में खर-पतवार नियंत्रण करना कठिन है, क्योंकि कोई भी निकाई-गुड़ाई यंत्र उपयोग नहीं किया जा सकता है।

बाजार में पशुचालित एवं ट्रैक्टर चालित बुआई एवं यंत्र उपलब्ध है। किसान आवश्यकतानुसार किसी भी यंत्र का उपयोग कर सकते हैं। बिरसा कृषि विश्वविद्यालय ने पशु चालित बुआई यंत्र विकसित किया है जिसे "बिरसा बीज-सह-खाद ड्रिल" के नाम से जाना जाता है। इस यंत्र से कई प्रकार के फसलों की बुआई की जाती है। जैसे धान, गेहूँ, राई, सरसों, तीसी, सरगुजा, मूंग, उड़द, चना, मसूर, कुसुम इत्यादि। इसके द्वारा बोआई के समय पाउडर अथवा दानेदार रासायनिक खाद बीज के बगल में 3 से.मी. हटकर तथा 3 से.मी. नीचे पट्‌अी में गिराया जाता है। इसके मुख्य भाग हैं (1) कुड़ खोलने का भाग, (2) बीज नियंत्रक प्रणाली, (3) सीड प्लेट, (4) बीज नली, (5) खाद नियंत्रक संयत्र एवं (6) हरीस।

बुआई के समय यह ध्यान रहे कि पहिया बराबर जमीन से लगा रहे नहीं तो बीज का गिरना रुक जायेगा। हाँ अंतर लेते समय जब बीज गिराना न चाहे तो मशीन को बाँयी ओर झुका कर पहिए को उठा सकते हैं जिससे उसका चलना रुक जाता है।

इस यंत्र से औसतन प्रतिदिन 0.2 हेक्टेयर जमीन की बुआई की जा सकती है तथा खर्च 500 से 600 रुपये प्रति हेक्टेयर पड़ता है। इसको छोटे बैल भी आसानी से खींच सकते हैं। किसान अधिक जानकारी एवं खरीदने के लिए कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, कांके, राँची से प्राप्त कर सकते हैं।

इस बुआई यंत्र के अलावा डीप फरों सीडर, ड्राईलैंड सीडर, मल्टीरो सीडर उपलब्ध है। उपलब्धता के अनुसार कोई भी बुआई यंत्र किसान खरीद कर उपयोग कर सकते हैं। ट्रैक्टर चालित बुआई यंत्र बाजार में उपलब्ध है पर यंत्र खरीदते समय यह ध्यान रखें कि बुआई यंत्र उसी मेक का हो जिस मेक का ट्रैक्टर है।

निकाई गुड़ाई यंत्र

यह यंत्र मानव चालित, पशु चालित या ट्रैक्टर चालित होते हैं। चाहे यह यंत्र मानव, पशु या ट्रैक्टर द्वारा चलाये जायें पर इन यंत्रों के मुख्य दो भाग होते हैं। एक मिट्टी के अन्दर काम करता है जिसे फाल कहते हैं, दूसरा वह भाग जिससे फाल जुड़ा होता है जिसे जत्था कहते हैं।

परम्परागत मानव चालित यंत्र में खुरपी, कुदाल, फावड़ा प्रमुख हैं। उन्नत यंत्रों में डच हो, ग्रबर, ड्राईलैंड वीडर, पहियादार व्हील हो प्रमुख है। निकाई-गुड़ाई का कार्य अगर खुरपी से किया जाता है तो एक हेक्टेयर निकाई के लिए 50 मजूदर की आवश्यकता होगी, वहीं अगर डच हो से किया जाता है तो 15 मजदूर एवं ग्रबर 10 से 12 मजदूर प्रति हेक्टेयर लगाना पड़ता है।

पशु चालित यंत्र में कल्टीवेटर एवं ब्लेडो हैरो प्रमुख है। बिहार कल्टीवेटर पाँच फारा यंत्र, पिछले दोनों फारों को खोलकर यह तीन फार वाला कल्टीवेटर बन जाता है। गन्ने की खेती में पाँच फार वाला यंत्र बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। अन्य फसलों के लिए तीन फारा कल्टीवेटर ज्यादा इस्तेमाल होता है। पाँच फारा वाला कल्टीवेटर से दिनभर में 0.8 से 1.0 एकड़ तथा 3 फार वाले कल्टीवेटर से 0.4 से 0.6 एकड़ तक जमीन की निकाई-गुड़ाई की जा सकती है।

ब्लेड हैरो या बखर भी खरपतवार नियंत्रण के लिए प्रमुख यंत्र है। जब खेत में फसल न हो तो गर्मी या अन्य मौसम में इस यंत्र को चलाने से खर-पतवार कट जाते हैं या उखड़ जाते हैं जो कड़ी धूप में सूखकर नष्ट हो जाते हैं। इस यंत्र से दिनभर में 0.5 से 1.0 एकड़ तक की निकाई-गुड़ाई की जा सकती है।

निकाई-गुड़ाई के लिए ट्रैक्टर चालित यंत्र 7 से 15 सोवेल वाला कल्टीवेटर उपयोग में लाया जाता है। इन यंत्रों से एक घंटे में लगभग 1.0 से 1.5 एकड़ जमीन की निकाई-गुड़ाई की जा सकती है।

रोपा धान, जिसकी रोपाई पंक्ति में हुई है, में निकाई-गुड़ाई के लिए जापानी पैडी वीडर एवं कोनो पैडी वीडर उपयोग में लाए जाते हैं। जापानी पैडी वीडर 15 से.मी. एवं 25 से.मी. के दो साईजों में उपलब्ध हैं। कोनो वीडर अभी सिर्फ 15 से.मी. साईजों में उपलब्ध है। इन यंत्रों को एक आदमी खड़ा होकर कतारों में आगे पीछे करके चलाया जाता है ताकि मिट्टी और पानी एक दूसरे से मिल जाए तथा घास एवं खर पतवार नष्ट हो जाय। इस यंत्र से एक आदमी दिनभर में लगभग 0.2 एकड़ जमीन की निकाई-गुड़ाई कर लेता है।

फसल कटाई यंत्र

भारत में आज भी फसल की कटाई के लिए अधिकांश खेतों पर हँसिए का उपयोग किया जाता है। देशी हँसिये के स्थान पर उन्नत हँसिया (वैभव एवं नवीन) का उपयोग करना चाहिए। देशी हँसिया से जहाँ एक मजदूर से केवल एक डिसमिल प्रति घंटा की कटाई की जाती है वहीं वैभव या नवीन हँसिया से करीब 2.5 डिसमिल प्रति घंटा फसल की कटाई की जा सकती है।

अब फसल कटाई के लिए छोटा मशीन उपलब्ध है। जिसे सेल्फ प्रोपेल्ड भरटीकल कानवेयर रीपर कहते हैं। यह यंत्र यहाँ के किसानों के लिए उपयोगी हैं क्योंकि इसे छोटे-छोटे खेतों में भी चलाया जा सकता है। इसे 3 या 5 अश्व शक्ति के इंजन के द्वारा चलाया जाता है। इंजन डीजल या किरासन तेल से चलाया जाता है। इंजन का उपयोग कटरबार को चलाने के लिए किया जाता है। कटरबार की लम्बाई 1.0 मीटर से 1.2 मीटर होती है। इस मशीन से एक घंटा में 0.275 हेक्टेयर धान एवं 0.2 हेक्टेयर गेहूँ की कटाई की जाती है। रीपर से फसल कटाई का खर्च देशी हँसिया की तुलना में 12-13 गुना कम है। इसकी कीमत लगभग 54,000 रु. है। लेकिन भाड़े पर किसान इससे कटाई कर सकते हैं। इस मशीन से कटाई के दौरान इससे दाना नहीं झड़ता है। इंजन में तेल की खपत लगभग एक लीटर प्रति घंटा है।

गहाई (दौनी) यंत्र

भारतवर्ष में फसलों की गहाई (दौनी) मुख्यत: मानव द्वारा या बैलों द्वारा रौंदकर की जाती है। इस विधि में तकनीकी जानकारी की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

पशु चालित ओल पाड दौनी मशीन उपलब्ध है। यह एक लोहे की मशीन है जिसमें बीस तवे तीन पंक्तियों में लगे होते हैं। इस मशीन को एक जोड़ी बैल से खींचा जाता है। इस मशीन से 16 घटों में लगभग 5 से 6 क्विंटल दाना एवं 12 क्विंटल भूसा निकाला जा सकता है।

सूखे फसल को पशुओं के स्थान पर ट्रैक्टर द्वारा रौंदकर भी दौनी की जाती है। इस विधि से करीब 150 से 200 किलो प्रति घंटा दौनी कर दाना अलग किया जाता है।

दौनी यंत्र

हमारे देश में अधिकतर किसान के पास पूँजी एवं तकनीकी जानकारी की कमी है। फिर भी शक्ति चालित मशीन का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। दाने को फसल से अलग करने के अलावा कई दौनी मशीन से सफाई करने, छटाई (ग्रेडिंग) करने तथा बोरे में भरने का प्रावधान भी होता है।

दौनी मशीन में सूखे फसल को हाथ से फीडिंग इकाई में डाला जाता है। वहाँ से स्वत: थ्रेसिंग इकाई में चला जाता है। थ्रेसिंग इकाई में दांतदार, हैमरमील टाइप, रास्पबर टाइप इत्यादि में किसी एक टाइप का सिलिंडर लगा होता है जिसके घूमने से फसल से दाना अलग हो जाता है तथा दाना और भूसा का मिश्रण को दोलन छलनी के ऊपरी सतह पर गिरते समय हवा का झोंका प्रवाहित किया जाता है। जिससे दाना और भूसा अलग हो जाता है। दानों को छोड़कर चूशक (एस्पिरेटर) या पंखा भूसे, तिनके आदि को चूसकर या उड़ाकर मशीन से बाहर फेंक देता है। साफ दाने तो दूसरे छलनी पर गिर जाते हैं तथा दौनी नहीं हो पाये दानों के अंश बड़े आकार के भूसे समेत ऊपरी छलनी के ऊपर से जमीन पर गिर जाते हैं। कुछ थ्रेसर में ठीक से दौनी नहीं हुए दानों आदि को पुन: सिलिंडर में भेजने की व्यवस्था होती है। दूसरी छलनी से दानों को धूल तथा छोटे-छोटे कणों एवं खरपतवार को बीजों से अलग करके जमीन पर गिरा दिया जाता है। कुछ थ्रेसरों में छलनी से आये हुए साफ दानों को उठाकर बोरियों में भरने का भी प्रावधान होता है। इस मशीन द्वारा एक घंटा में करीब 200 से 250 किलो दाना दौनी किया जाता है।

किसान को अभी भी केवल कीमत को ध्यान में रखकर सस्ते कीमत की निम्नकोटि का कोई भी यंत्र नहीं खरीदना चाहिए क्योंकि अन्तत: ऐसी मशीन प्रचलन में महंगी पड़ती है।

▲▲▲

जलछाजन - समस्या एवं निकारण

डॉ. राघव ठाकुर एवं डॉ. आर.आर. उपासनी
सस्य विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

पूर्व में विकास कार्यों के लिए प्रखण्ड को प्राय: इकाई मानकर कार्यक्रम चलाये जाते थे। आशातीत लाभ न मिलने के फलस्वरूप पंचायत को इकाई के रूप में मानकर विकास कार्य चलाया जाने लगा। अब पंचायत के स्थान पर जलछाजन को सर्वांगीण विकास के लिए मान्यता दी जा रही है। यह तर्कसंगत भी है और सार्थक भी।

हमारा देश आजादी के समय अन्न उत्पादन में अभावग्रस्त था। इस कमी को पूरा करने के लिए सिंचित क्षेत्र में गहन कृषि विकास कार्यक्रम अपनाकर देश अन्न के मामले में आत्मनिर्भर हुआ। देश में कुल कृषि क्षेत्र का 28-30 प्रतिशत भाग सिंचित है। असिंचित भूमि का क्षेत्रफल लगभग 70 प्रतिशत है। यह असिंचित क्षेत्र राष्ट्रीय उत्पादन का लगभग 45 प्रतिशत अन्न उत्पादन करता है।

सरकार ने कृषि विकास में वृद्धि लाने हेतु सिंचाई परियोजनाओं के कमान्ड क्षेत्र के विकास पर ध्यान दे रही है तथा असिंचित क्षेत्र जो मात्र वर्षा पर आधारित है जो जलछाजन के आधार पर विकसित कर रही है जिससे जलछाजन में उपलब्ध वर्षा का पूरा-पूरा उपयोग हो सके और बचा हुआ जल का संरक्षण हो सके।

प्रश्न उठता है कि यह जलछाजन क्या है? जलछाजन भूमि का जल से सम्बंधित वह इकाई है जो स्वतंत्र रूप से वर्षा का जल प्राप्त करता है और एक निकास बिन्दु द्वारा बहा देता है।

जलछाजन को उसके क्षेत्रफल के आकार के अनुसार सूक्ष्म जलछाजन, अनुजलछाजन, जलग्रहण क्षेत्र या बेसिन के नाम से जाना जाता है।

अविभाजित बिहार प्रान्त में भी जलछाजन विकास पर आधारित विभिन्न कार्यक्रम अपनाये गये है। उदाहरण के तौर पर वर्षाप्रित योजना, डी.पी.ए.पी. योजना, बाढ़ोन्मुख योजना एवं नदीघाटी योजना प्रमुख हैं।

वर्षाप्रित कार्यक्रम में अधीन वर्षा का उपयोग कर कृषि विकास कार्य को बढ़ावा देना है। जबकि डी.पी.ए.पी. योजना में सूचना के प्रभाव को कम करना। इसी प्रकार बाढ़ोन्मुख क्षेत्र में बाढ़ के पानी को रोक कर धीरे-धीरे नदी में बढ़ाना तथा नदीघाटी योजना के अन्तर्गत बहुद्देशीय नदीघाटी योजनाओं के जलाशय में सम जाने से रोकना प्रमुख है।

उपरोक्त सभी कार्यक्रमों में मुख्यत: जलछाजन के अन्दर भूरक्षण से ग्रसित भूमि का उपचार करना है। जबकि जलछाजन प्रबंधन का उद्देश्य जलछाजन का सर्वांगीण विकास होता है। वृहद शब्दों में, जलछाजन प्रबंधन द्वारा जल एक भूमि के प्रबंधन के साथ-साथ जलछाजन के गांवों में रहने वाले ग्रामीणों का आर्थिक उत्थान भी प्रबंधन का एक मुख्य अंग है। खेती के अतिरिक्त अजीविका के लिए वैकल्पिक साधन जैसे पशुपालन, गृह एवं कुटीर उद्योग, फूल उत्पादन एवं बागवानी विकास भी प्रमुख भूमिका निभाते हैं। ये वैकल्पिक कार्यक्रम इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि वर्षा पर आधारित खेती जोखिम भरा है और मात्र वर्षा के व्यवहार पर विश्वास नहीं किया जा सकता।

इतना ही नहीं खेती और आपके वैकल्पिक साधनों के अतिरिक्त स्वावलम्बी होने हेतु ईंधन का उत्पादन कर जलछाजन को स्वावलम्बी बनाना है।

अत: जलछाजन विकास के उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु, जलछाजन का सर्वेक्षण कर मौजूदा अन्य उत्पादन की स्थिति, चारा एवं ईंधन की उपब्लधता का आकलन किया जाता है तथा यह देखा जाता है कि मौजूदा उत्पादन जलछाजन की जनसंख्या के लिए प्रचुर मात्रा है या कम। अभाव को देखते हुए कार्यक्रमों का लक्ष्य तय किया जाता है तथा निर्णय में किसानों को शामिल किया जाता है।

अत: जलछाजन प्रबंध का पूरा-पूरा लाभ प्राप्त करने हेतु कुछ नयी परियोजनाये ली गई हैं जैसे वर्षाश्रित क्षेत्रों के लिए ''राष्ट्रीय जलछाजन विकास परियोजना'' तथा ''11'' विश्व बैंक की सहायता से बिहार पठारी क्षेत्र विकास परियोजना प्रमुख हैं।

इन परियोजना का मुख्य उद्देश्य खेती योग्य भूमि की उत्पादकता बढ़ाना है। भूक्षरण से ग्रसित भूमि एवं जल संरक्षण कार्य कर अच्छी भूमि की उत्पादकता के समकक्ष लाना है। इन परियोजनाओं में उत्पादन प्रणाली के अन्तर्गत लिए जाने वाले कार्यक्रम इस प्रकार हैं -

1. कृषि उत्पादन :

कृषि उत्पादन के लिए सूखी खेती तकनीक अपनाकर बरसात में वर्षा से प्राप्त जल का उपयोग कर खरीफ का उत्पादन तथा मिट्टी में बचे हुए नमी से रबी फसल लिया जाना अपेक्षित है।

बरसात के समय से पूर्ण या पिछड़कर वर्षा का आगमन और प्रस्थान, वर्षा जल की मात्रा तथा हथिया नक्षत्र के बाद मिट्टी में उपलब्ध नमी को ध्यान में रखते हुए रबी फसल तथा उसके प्रभेद, बुआई का समय आदि निर्धारित करना है। प्रभेद के चुनाव में यह ध्यान रखना होगा कि वह अपने जड़ तंत्र द्वारा तेजी से नीचे की ओर भागते हुए नमी को प्राप्त करता रहे तथा साथ ही साथ धरती पर पौधे की पत्तियों का फैलाव जल्द हो जिससे धूप के प्रभाव से मिट्टी की नमी कम हो सके।

खेती के अतिरिक्त खेत के मेड़ पर एग्रोफारेस्ट्री तथा खेत में एलीक्रापिंडा कर इंधन तथा चारा की उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है।

जलछाजन में भूक्षरण से ग्रसित भूमि के लिए भूमि एवं जल संरक्षण कार्यक्रम अपना कर ही कृषि का सर्वांगीण विकास संभव है।

2. फल एवं बागवानी विकास :

इस कार्यक्रम द्वारा परिवार की आवश्यकता हेतु फल एवं सब्जी का उत्पादन संभव है। इसके अतिरिक्त इच्छुक सीमान्त किसान अतिरिक्त आमदनी के लिए व्यवसायिक उत्पादन कर सकते हैं।

3. पशुपालन विकास :

जलछाजन क्षेत्र में देशी साँढ़ का वंदधाकरण कर गाय एवं भैसों का विकास तथा अनुपयोगी जानवर को कमकर पशुधन विकास करना है।

जनवरी के चारे हेतु चरागाह विकास एवं खेती योग्य भूमि में चारा विकास करना है। इसके अतिरिक्त सीमान्त कृषक एवं कृषक मजदूरों को मुर्गीपालन, बकरी पालन, सुअर पालन कार्यक्रम में शामिल किया जा सकता है।

4. गृह एवं कुटीर उद्योग विकास :

इस कार्यक्रम के अधीन बढ़ईगिरी, मिट्ट बर्तन बनाना, लोहारी, चमड़ा और रस्सी बनाना, बाँस का सामान तथा पत्ता का प्लेट आदि का निर्माण किया जा सकता है।

5. वन विकास :

जलछाजन के क्षेत्र में ईंधन, खेती के उपस्कर, गृह निर्माण आदि के लिए आवश्यक लकड़ी की उपलब्धि हेतु कृषक अपने अनुपयोगी भूमि पर वन विकास, खेतों के मेड़ पर एग्रोफारेस्ट्रो फसल के साथ एली क्रॉपिंग कार्यक्रम ले सकते हैं।

इसके अतिरिक्त गैर मजूरवा भूमि तथा गांव के बेकार पड़े भूमि पर आवश्यकतानुसार जंगली पौधे या फलदार वृक्ष लगाये जा सकते हैं। नाला के किनारे भी झाड़ी या जंगली वृक्ष लगाये जा सकते हैं।

▲▲▲

झारखण्ड में मछली पालन की समस्याऐं और संभावनाऐं

डॉ. अखिलेश कुमार सिंह

मछली पालन विभाग, पशु चिकित्सा संकाय, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची - 834006 (झारखण्ड)

झारखण्ड में काफी पुराने तथा नये जलक्षेत्र है जो मुख्यत: वर्षा आधारित है। इन जलक्षेत्रों का निर्माण सिंचाई के लिए किया गया था ताकि किसान अपने खेतों से दो-तीन फसल ले सकें। अब सभी ने महसूस किया है कि जब तक वर्षा जल को संचित नहीं किया जाएगा तब तक कृषि और इनसे जुड़े अन्य कार्यक्रमों का विकास इस राज्य में संभव नहीं है। इसलिए सरकारी तथा गैर-सरकारी संस्थान किसानों को अधिक से अधिक तालाब/पोखर बनाने को प्रोत्साहन दे रही है। आज लगभग 29,000 हे. जलक्षेत्र इस राज्य में उपलब्ध है और लगभग 0.2 प्रतिशत की दर से इसमें वृद्धि हो रही है।

इन सभी जलक्षेत्रों में मछली पालन की असीम संभावनाऐं है तथा इनका उपयोग मछली पालन के रूप में कुछ जागरुक किसान कर भी रहे हैं। लेकिन यह कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित है। बाकी जगहों पर किसान इसे महत्त्व नहीं देते हैं जिसके अनेक कारण हैं। जिसमें भौगोलिक एवं तकनीकी कारण है, जिसके फलस्वरूप उन्हें मछली उत्पादन 300-500 किलोग्राम/वर्ष/हे. ही मिल पाता है जबकि हमारे पड़ोसी राज्य आन्ध्रप्रदेश में कुछ किसान 14 टन/वर्ष/हे. का उत्पादन ले रहे हैं तथा देश का औसत उत्पादन भी 1200 किलोग्राम/वर्ष/हे. के लगभग है। ऐसी स्थिति में झारखण्ड राज्य में मछली पालन की काफी संभावनाऐं है। जिससे किसान को सालों भर रोजगार एवं आमदनी में वृद्धि होगी। लेकिन संभावनाओं पर चर्चा करने से पूर्व इनकी समस्याओं पर ध्यान देना आवश्यक है।

1 तालाब की मिट्टी अम्लीय है : यह सही है कि मिट्टी अम्लीय होने पर भी तालाब का पानी अम्लीय नहीं होता। लेकिन तालाब में दी जाने वाली जैविक खाद का पानी में उपलब्धता उतनी नहीं हो पाती है, जिससे मछली का प्राकृतिक भोजन कम तैयार होता है।

2. तालाब मौसमी है : वर्षा आधारित होने के कारण अधिकांश तालाब मौसमी एवं दीर्घ मौसमी है। जिससे मछलियों को बढ़ने के लिए अधिक समय नहीं मिल पाता है।

3. शुद्ध एवं सही किस्म के मत्स्य बीज का अभाव : मछली पालन के लिए आवश्यक है कि शुद्ध एवं सही किस्म के मछली का बीज (जीरा) प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो। यह सही है कि विगत कुछ वर्षों में काफी हैचरी का निर्माण सरकारी एवं गैर-सरकारी विभागों में हुई है लेकिन अभी भी हम अपने 50-60 प्रतिशत आवश्यकताओं के लिए दूसरे राज्य पर निर्भर है।

4. जैविक खाद की कमी : इस राज्य में 80-90 प्रतिशत छोटे और मझौले वर्ग के किसान हैं। जिनके पास मवेशियों की संख्या काफी कम है तथा जैविक खाद की उपलब्धता भी कम है। इन जैविक खाद का उपयोग किसान पहले अपने खेतों में करते है तथा तालाब को प्राथमिकता अंत में दी जाती है।

5. पूँजी का आभाव : चूंकि मछली पालन में पूँजी की जरूरत तभी पड़ती है जब कृषि कार्य में पड़ती है। मछली पालन किसान के प्राथमिकता में नहीं है, जिसके कारण उसपर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता है।

6. जागरूकता में कमी : आप सब भी इस बात से सहमत होंगे कि यहाँ के किसान उतने जागरूक नहीं है जितने अन्य राज्यों के। इनकी आवश्यकताएं भी काफी कम है इसलिए मछली पालन के व्यवस्था में अधिक रुचि नहीं लेते हैं। साथ ही साथ भाषा एवं इनका अपने गाँव से बाहर न निकलना भी एक प्रमुख कारण है।

इन सभी समस्याओं के अलावे भी बहुत दूसरे कारण है, लेकिन विकास के काफी संभावनाऐं हैं। यदि आप गाँव में उपलब्ध जलक्षेत्रों को देखें तो पायेंगे जलक्षेत्र कि व्यक्तिगत/सामूहिक/मौसमी/दीर्घ-मौसमी/ वार्षिक इत्यादि है। यहाँ के प्रत्येक गाँव में लगभग दो तालाब अवश्य हैं। एक व्यक्तिगत और दूसरा सामूहिक। व्यक्तिगत तालाब में तो किसान अपनी मर्जी के अनुसार काम कर सकते हैं तथा सामूहिक तालाब जो गाँववासियों के घरेलू काम में आते हैं, उसमें थोड़ी समस्या है। जिनके लिए उचित तकनीक का वर्णन निम्न तालिका द्वारा की जा रही है -

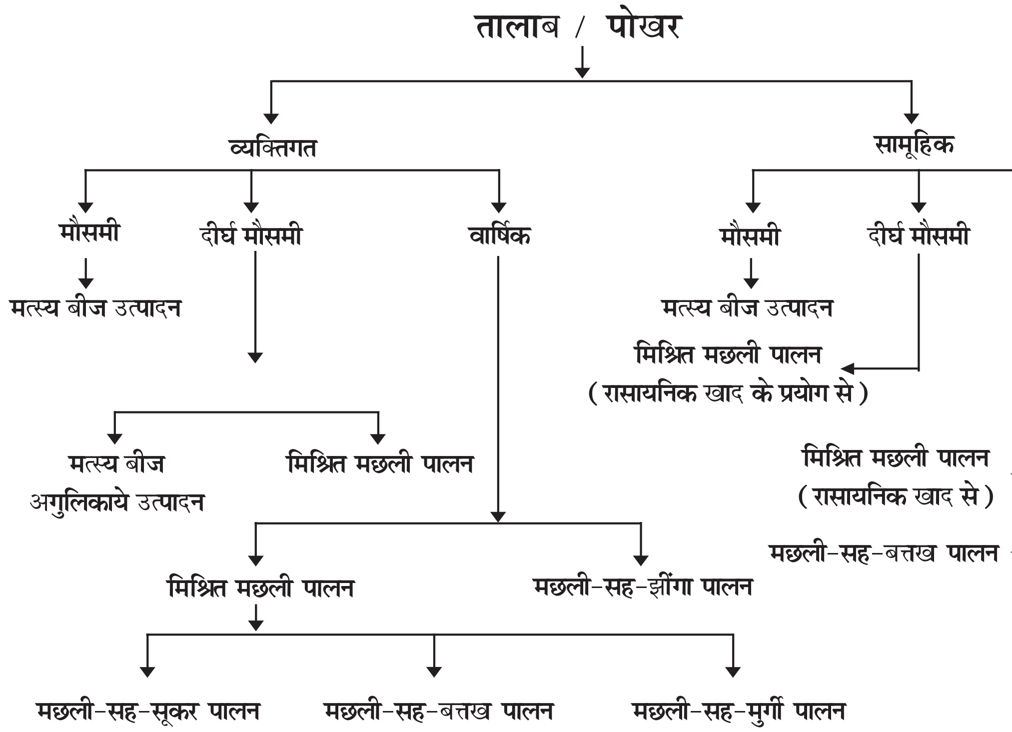

मत्स्य बीज उत्पादन :

इसके लिए वैसे तालाब जिसका क्षेत्रफल 25 से 50 डिसमिल हो और मौसमी हो सबसे उपयुक्त है। इस तकनीक में 3 दिन उम्र के मत्स्य बीज जिसे 'स्पॉन' कहते हैं तालाब में संचित की जाती है और 15-20 दिनों के बाद जब 1'' का हो जाता है तो तालाब वाले किसान को बेच दिया जाता है। यह काम बरसात के दिनों में किया जाता है, इसलिए मौसमी तालाब इसके लिए उपयुक्त है। ऐसा देखा गया है कि 20 डिसमिल वाले एक तालाब से 15-20 दिनों में एक किसान 1000 रुपये का शुद्ध लाभ कमा सकते हैं। बरसात के दिनों में यदि बाजार उपलब्ध हो तो 3-4 फसल आसानी से ली जा सकती है।

मत्स्य अगुलिकाओं का उत्पादन :

आजकल बड़े आकार के मत्स्य बीज जिसे ''अगुलिकायें'' कहते हैं तथा जिसका आकार 3-4'' होता है उसकी माँग बढ़ रही है। मत्स्य विभाग झारखण्ड सरकार भी जलाशय को संचित करने के लिए इसे उचित मूल्य पर खरीदती है। ये कार्यक्रम वैसे तालाब जिसमें 4-6 महीना पानी रहता है, उसमें किया जा सकता है।

दीर्घ मौसमी तालाब में मिश्रित मछली पालन :

दीर्घ मौसमी तालाब वैसे तालाब को कहते हैं, जिसमें 8-10 महीना पानी रहता है। इस तरह का तालाब यदि व्यक्तिगत हो तो मिश्रित मछली पालन (जिसमें 5-6 प्रकार की मछलियाँ एक साथ पाई जाती है) की जा सकती है। इसमें जैविक खाद, पूरक आहार एवं चूना की आवश्यकता होती है। ऐसा पाया गया है कि दीर्घ मौसमी तालाब में कॉमन कार्प एवं कतला के पालन करने से बढ़त अच्छी होती है।

कुछ तालाब सामुदायिक भी हो सकते हैं, जो गाँव वाले अपने घरेलू काम जैसे बरतन धोना, कपड़ा धोना इत्यादि काम में लाते हैं और वैसे तालाब में मछली पालन की अनुमति तो देते हैं लेकिन जैविक खाद की प्रयोग की मनाही करते हैं, ऐसे तालाब में घरेलू उपयोग के कारण तथा प्राकृतिक ढंग से अपने आप ही जैविक खाद आ जाता है। इसके अलावा रासायनिक खाद, डी.ए.पी. यूरिया इत्यादि का प्रयोग कर मछली का प्राकृतिक भोजन एवं मछली का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

सामुदायिक तालाब में मिश्रित मछली पालन :

इस तरह के तालाब में गाँव वाले घरेलू कार्य करते हैं जिससे मछली पालन के लिए जैविक खाद के प्रयोग की मनाही करते हैं।

लेकिन उनके घरेलू कार्य करने से कुछ जैविक खाद अपने आप तालाब में आ जाता है। इस तरह के तालाब में मिश्रित मछली पालन किया जा सकता है। इसमें तालाब में जैविक खाद का प्रयोग न कर रासायनिक खाद जैसे डी.ए.पी. यूरिया इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। इस तरह के तालाब में मछली-सह-बत्तख पालन भी किया जा सकता है।

व्यक्तिगत तालाब में समन्वित मछली पालन :

समन्वित मछली पालन वैसे विधि को कहते हैं जिसमें दो-तीन प्रकार के कार्यक्रम को एक साथ जोड़ा जाता है और एक दूसरे के बेकार पदार्थ का समुचित उपयोग किया जाता है। जैसे मछली-सह-बत्तख, मछली-सह-सूकर, मछली-सह-मुर्गी पालन इत्यादि।

मछली-सह-बत्तख पालन :

यह पालन विधि कुछ राज्यों में काफी लोकप्रिय है। इसमें तालाब में मिश्रित मछली पालन किया जाता है साथ ही साथ तालाब के बाँध पर या आसपास बत्तख पालन किया जाता है ताकि ये बत्तख तालाब में आसानी से जा सकें। दिनभर ये बत्तख तालाब से अपना प्राकृतिक भोजन लेती है और रात्रि में घर वापस आ जाती है। इस विधि में खाकी कैम्बल नामक बत्तख पालने की सलाह दी जाती है जिसकी अण्डा देने की क्षमता अधिक होती है और वर्ष में 250-300 अण्डे देती है। इन बत्तखों को दिन में भोजन देने की आवश्यकता नहीं होती है, लेकिन रात्रि में 80 ग्राम प्रति बत्तख के दर से किसान के घर में उपलब्ध भोज्य पदार्थ दिया जाता है। ऐसा देखा गया है कि किसान के परिस्थिति में यह बत्तख 180-200 अण्डे देती हैं जिसका वजन 40-70 ग्राम होता है। इस विधि से मछली उत्पादन लगभग 4500 किलाग्राम/हे./वर्ष होता है तथा एक रुपया के लागत पर लगभग 4-5 रुपया का आमद होता है। प्रति हेक्टेयर तालाब के लिए 500-600 बत्तख काफी होता है। इस विधि में कुछ समस्याऐं भी हैं -

- ये बत्तख अपने अण्डे को सेती नहीं है, जिससे चूजे तैयार नहीं होते। ऐसी सलाह दी जाती है कि प्रत्येक 2 वर्ष में बत्तख को बदल देनी चाहिए क्योंकि बत्तख के अण्डे देने की शक्ति कम हो जाती है।
- फसल लगाने के महीनों में इन बत्तखों को खेतों में नहीं जाने देना चाहिए क्योंकि कीटनाशक खाने से इनकी मौत हो जाती है।
- चूंकि ये ज्यादा अण्डा देने वाली प्रजाति है, इसलिए इन्हें पौष्टिक आहार देने से अण्डा उत्पादन अच्छा होता है।

मछली-सह-सूकर पालन :

ये विधि भी उपरोक्त विधि मछली-सह-बत्तख के तरह है। इसमें मछली एवं सूकर पालन किया जाता है सूकर पालन तालाब के बांध पर नजदीक ही किया जाता है ताकि सूकर का मल-मूत्र नाली द्वारा सीधे तालाब में जाता है। ये मल-मूत्र कुछ मछलियों के लिए सीधे भोजन का काम करती हे तथा उनका प्राकृतिक भोजन के निर्माण में भी मदद करती है। सूकर का आवास व्यवस्था गाँव में उपलब्ध सामग्री से की जाती है तथा सूकरों को घर में उपलब्ध भोज्य पदार्थ ही दी जाती है जिसकी बढ़त भी अच्छी होती है। यह 6-8 माह में 40-70 किलोग्राम की हो जाती है। इस तरह एक वर्ष में किसान 2 बार सूकर पालन कर सकते हैं। इस विधि में भी लागत एक रुपया पर आमदनी 3-4 रुपये की होती है। इस विधि में 40-60 सूकर/हे. तालाब के दर से रखना चाहिए। इस पालन विधि में कॉमन कार्प नामक मछली की बढ़त दर अधिक पायी गयी है। सूकरों को 2-4 घंटा चरने के लिए खुला भी छोड़ा जा सकता है। इन्हे चरने के लिए तालाब के किनारे ही छोड़ना उपयुक्त होता है, जिससे उसका मल-मूत्र सीधे तालाब में चला जाता है।

मछली-सह-मुर्गी पालन :

इस विधि में मछली-सह-मुर्गी पालन एक साथ किया जाता है। इसमें भी मुर्गी का घर तालाब के ऊपर या बाँध पर बनाया जाता है ताकि उसका मल-मूत्र सीधे तालाब में जाय। इस विधि में भी मछलियों को अतिरिक्त खाद एवं पूरक आहार देने की आवश्यकता नहीं होती है। मुर्गी पालन 'दीप सीटर' व्यवस्था में भी की जा सकती है, जिसमें 'सीटर' की तालाब 25-50 किलोग्राम/हे./दिन सूरज निकलने से पूर्व तालाब में किया जा सकता है। इस विधि में भी 500-600 मुर्गी का खाद एक हेक्टेयर के लिए काफी होता है। इस विधि से मछली का उत्पादन 3000-4500 किलोग्राम/हे./वर्ष प्राप्त किया जा सकता है।

इन सभी प्रकार के तकनीक से किसान के पास उपलब्ध सभी प्रकार के जलक्षेत्रों का समुचित उपयोग हो सकता है।

▲▲▲

प्रशिक्षणार्थियों की उपस्थिति

राज्य स्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रम में उपस्थित प्रखण्ड स्तरीय कृषि पदाधिकारियों एवं समकक्ष पदाधिकारियों की संख्या

क्र.सं.	प्रशिक्षण कार्यक्रम	दिनांक	उपस्थित पदा. की संख्या
1.	पहला	02.05.2004 से 04.05.2004	20
2.	दूसरा	05.05.2004 से 07.05.2004	15
3.	तीसरा	08.05.2004 से 10.05.2004	11
4.	चौथा	17.05.2004 से 19.05.2004	21
5.	पांचवां	20.05.2004 से 22.05.2004	16
6.	छठा	24.05.2004 से 26.05.2004	9
7.	सातवां	27.05.2004 से 29.05.2004	12
8.	आठवां	31.05.2004 से 02.06.2004	15
		कुल	119

राज्य स्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रम में उपस्थित जिला स्तरीय कृषि पदाधिकारियों एवं समकक्ष पदाधिकारियों की संख्या

क्र.सं.	प्रशिक्षण कार्यक्रम	दिनांक	उपस्थित पदा. की संख्या
1.	पहला	07.06.2004 से 09.06.2004	29
2.	दूसरा	10.06.2004 से 12.06.2004	19
		कुल	48

प्रशिक्षणार्थियों की प्रतिक्रिया

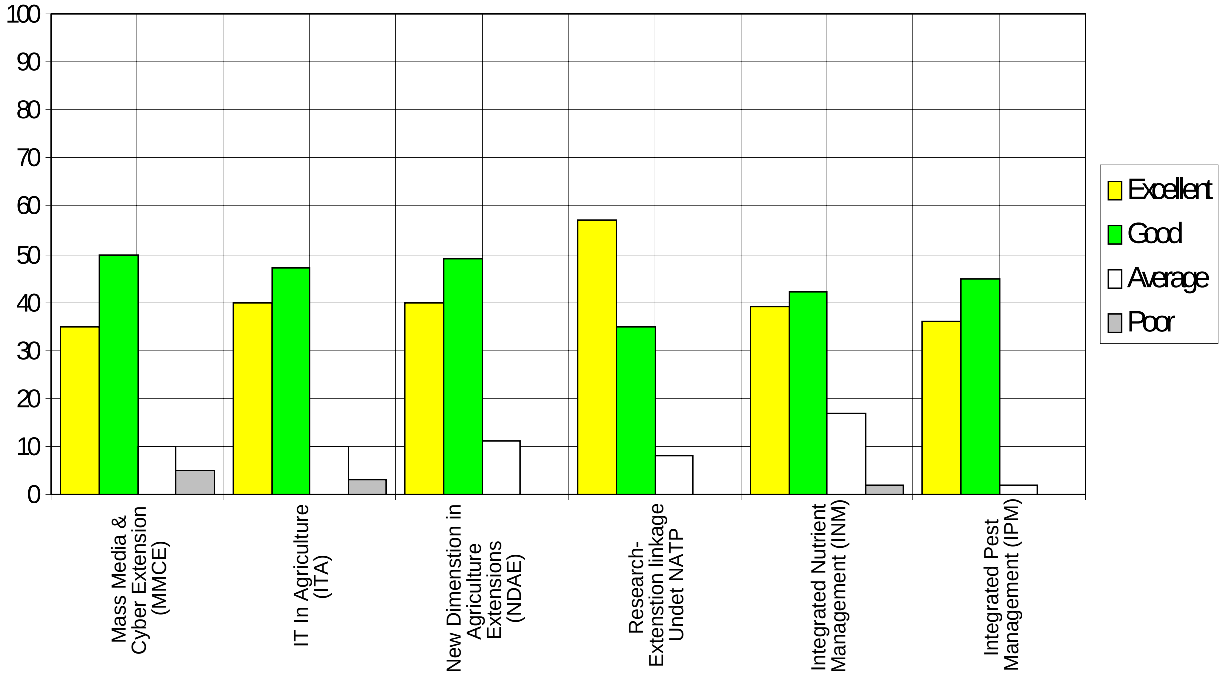

प्रशिक्षणार्थियों की प्रतिक्रिया

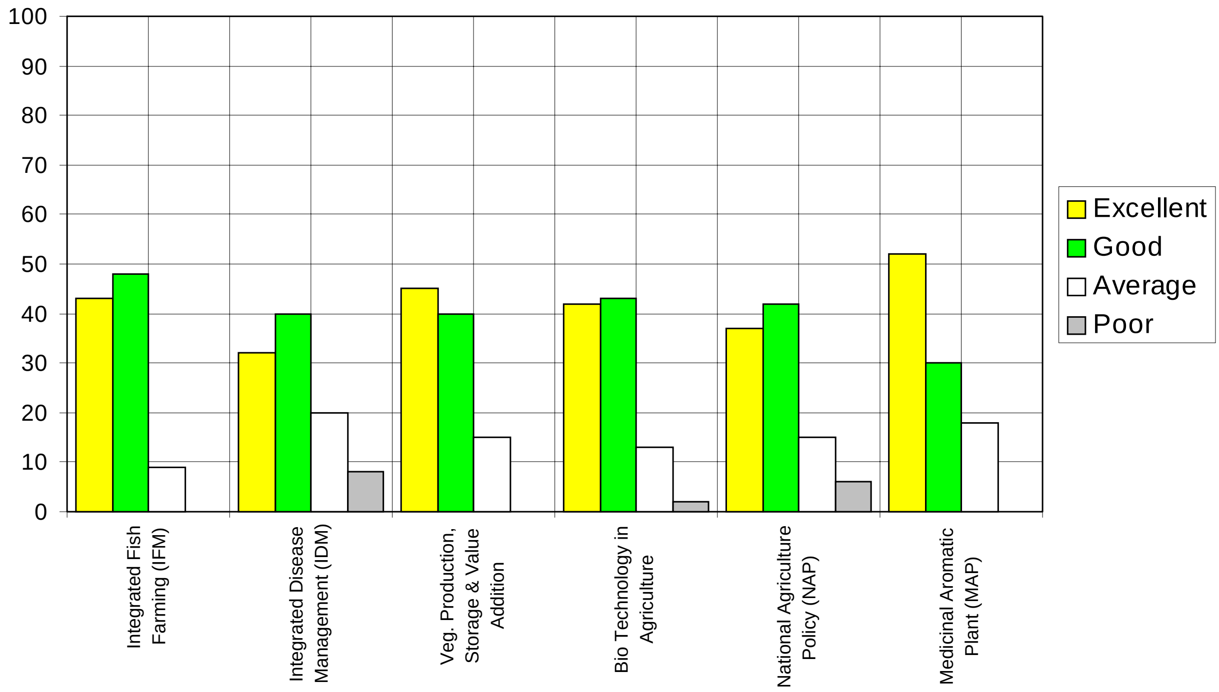

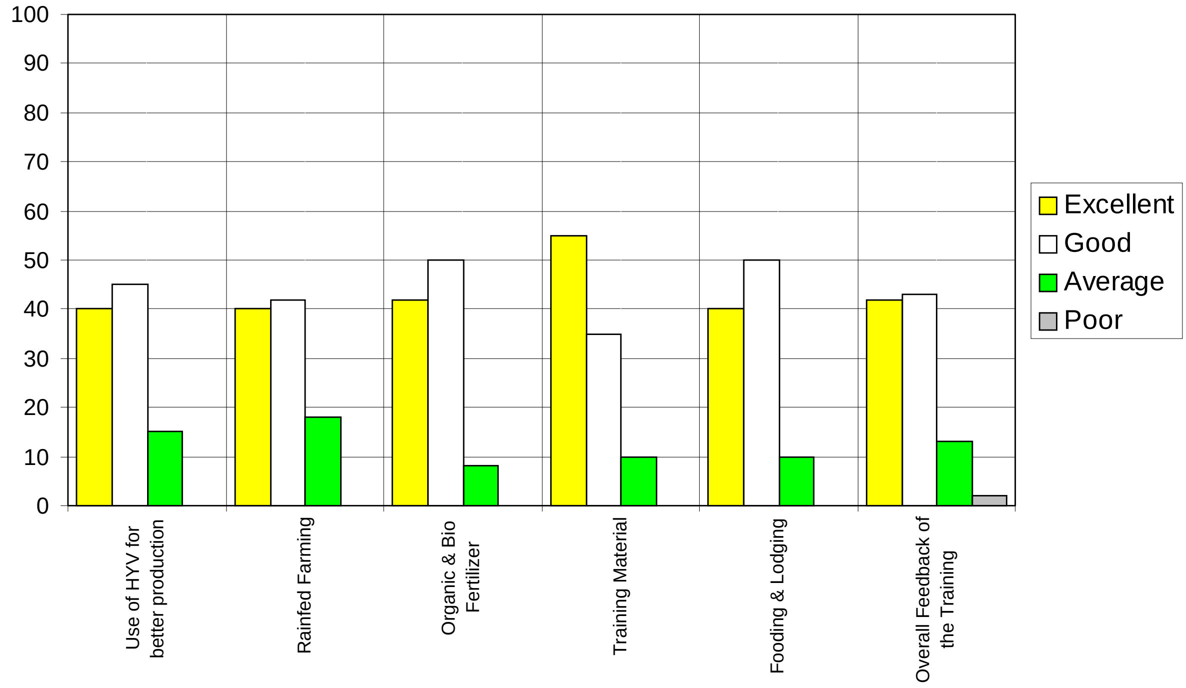

▲▲▲

संचार माध्यमों में प्रशिक्षण कार्यक्रम

प्रभात खबर

बहुउद्देश्यीय कृषि तकनीक के प्रसार से ही विकास : डॉ सरकार

किसानों के सशक्तीकरण पर चर्चा हुई

पदाधिकारियों का प्रशिक्षण कार्यक्रम

प्रशिक्षण शिविर का उदघाटन

समेति का राज्यस्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रम आज से

शुष्क भूमि पर खेती से अधिक लाभ उठा सकते हैं प्रदेश के किसान

रांची: झारखंड नब्बे फीसदी कृषि योग्य भूमि पर सिंचाई की कोई व्यवस्था नहीं है, जिससे किसानों को काफी दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। इसलिए यहां की जमीन को देखते हुए वर्षों से शुष्क भूमि तकनीक विकसित की जा रही है। अब इसमें काफी हद तक सफलता भी मिल चुकी है। यह बात सोमवार को 'वर्षा आधारित खेती की उन्नत तकनीक' विषय पर बिरसा कृषि विश्वविद्यालय शष्य विभाग के विभागाध्यक्ष डाक्टर ए राफे ने कही। वे बीएयू के किसान भवन में समेति व कृषि एवं गन्ना विकास विभाग के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित 'कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एवं प्रसार के नवीनतम आयाम' विषयक प्रशिक्षण कार्यक्रम में बोल रहे थे। श्री राफे ने कहा कि शुष्क भूमि की तकनीक से यहां के किसान काफी लाभ उठा सकते हैं।

कृषि पदाधिकारियों का प्रशिक्षण

रांची : समेति झारखंड व कृषि विभाग के संयुक्त तत्वावधान में कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन व प्रसार के नवीनतम आयाम पर प्रशिक्षण शुरू हो गया. यह प्रशिक्षण एक महीने का है. इसमें राज्यभर के 240 प्रखंड कृषि पदाधिकारी हिस्सा लेंगे. 30-30 पदाधिकारियों के आठ बैच में प्रशिक्षण कार्यक्रम संपन्न होगा. यह जानकारी समेति के निदेशक डॉ एके सरकार ने दी. उन्होंने बताया गया कि प्रशिक्षण कार्यक्रम आज से बिरसा कृषि विश्वविद्यालय स्थित किसान भवन में शुरू हुआ. इसका उदघाटन कृषि निदेशक वी जयराम ने किया. इसमें विशेषज्ञ के रूप में बीएयू के वैज्ञानिक, हार्प के वैज्ञानिक, आत्मा के परियोजना निदेशक व समेति के संकाय सदस्य आदि हिस्सा ले रहे हैं.

दैनिक जागरण

'कृषि के विकास के लिए बहुद्देशीय योजनाओं का प्रचार आवश्यक'

■ प्रखंड कृषि पदाधिकारियों का तीन दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम संपन्न

कृषि प्रौद्योगिकी एवं प्रसार की जानकारी आवश्यक : जयराम

प्रखंड कृषि पदाधिकारियों के प्रशिक्षण कार्यक्रम का दूसरा दिन

कृषि उत्पादों का संरक्षण एवं प्रसंस्करण जरूरी : कुमार

समेति का त्रिदिवसीय प्रशिक्षण प्रारंभ

प्रखंड कृषि पदाधिकारियों का पहला तीन दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम संपन्न

दूसरा प्रशिक्षण कार्यक्रम 5 मई से

राज्य कृषि की प्राथमिकताएं एवं संभावनाओं की भावी योजनाओं पर उच्चस्तरीय बैठक संपन्न हुई

रांची, (सं.ए.सं)

कृषि सचिव श्री शिव बसंत के निर्देश पर समेति, झारखंड द्वारा राज्य कृषि की प्राथमिकताएं एवं संभावनाओं की भावी योजनाओं की पहल के लिए बैठक आयोजित की गई। इस उच्च स्तरीय बैठक की अध्यक्षता कृषि सचिव श्री शिव बसंत ने की। इस बैठक में भारतीय प्रबंधन संस्थान, अहमदाबाद के निदेशक डा. एम. चक्रवर्ती विशेष रूप से उपस्थित हुए। इस उच्चस्तरीय बैठक में राज्य कृषि के भावी योजनाओं का निर्माण एक वर्ष की अवधि में पूर्ण करने पर सहमति हुई। राज्य कृषि की भावी योजनाओं के निर्माण में भारतीय प्रबंधन संस्थान, अहमदाबाद दिशा-निर्देश एवं सलाह प्रदान करेगी। उपस्थित सदस्यों ने आपसी समन्वय से एक वर्ष में भावी योजनाओं के निर्माण पर सहमति प्रदान की। भारतीय प्रबंधन संस्थान के सदस्यों ने डाटा बेस के निर्माण में भौतिक, मानवीय एवं संस्थानिक संसाधन के सहयोग पर संतुष्टि जतायी। उन्होंने क्षेत्र के उच्चस्तरीय जीवन के विकास हेतु गुणवत्ता एवं गुणात्मक जानकारियों को प्रदान करने की आवश्यकता जतायी। बैठक में कृषि निदेशक श्री वी. जयराम, संयुक्त सचिव डा. डी.के. सक्सेना, समेति निदेशक डा. ए.के. सरकार, संयुक्त कृषि निदेशक, रांची श्री सीताराम मंडल एवं बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के निदेशक (योजना) डा. आर.के. मिश्रा, सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (कृषि सांख्यिकी) डा. एन.सी. दास एवं मत्स्य विभाग के विभागाध्यक्ष डा. ए.के. सिंह उपस्थित थे।

आज

कृषि की भावी योजनाओं का निर्माण एक साल के अंदर : शिव

समेति में उच्च स्तरीय बैठक

रांची, 4 मई : झारखंड में कृषि की प्राथमिकताएं और संभावनाओं की भावी योजनाओं के संबंध में आज समेति के तत्वावधान में उच्च स्तरीय बैठक कृषि आयुक्त सह सचिव शिव बसंत की अध्यक्षता में हुई. इस अवसर पर श्री बसंत ने कहा कि राज्य में भावी योजनाओं का निर्माण एक साल की अवधि में ही पूरा कर लिया जाये. राज्य कृषि की भावी योजनाओं के निर्माण में अहमदाबाद स्थित भारतीय प्रबंधन संस्थान द्वारा दिशा-निर्देश प्रदान किये जायेंगे. बैठक में भारतीय प्रबंधन संस्थान के सदस्यों ने डाटा बेस के निर्माण में भौतिक, मानवीय एवं संस्थानिक संसाधन के सहयोग पर संतुष्टि जतायी. श्री बसंत ने कहा कि उच्च स्तरीय जीवन के विकास के लिए गुणवत्ता एवं गुणात्मक जानकारी देना जरूरी है. इस अवसर पर कृषि निदेशक वी जयराम, संयुक्त सचिव डॉ डीके सक्सेना, समेति निदेशक डॉ ए के सरकार, संयुक्त कृषि निदेशक सीताराम मंडल, बिरसा कृषि विवि के निदेशक (योजना) डॉ आरके मिश्र, डॉ एनसी दास व डॉ मत्स्य विभाग के अध्यक्ष डॉ एके सिंह उपस्थित थे.

प्रखंड स्तर पर कृषि तकनीकों का प्रसार जरूरी : डॉ सरकार

दूसरा प्रशिक्षण कार्यक्रम आज से

बीएयू में कृषि पदाधिकारियों का प्रशिक्षण संपन्न

SAMETI to train agriculture officers

HT Correspondent
Ranchi, May 5

WITH AN aim to train block and district agriculture officers on the development in the field of agriculture, the state government has launched a special training programme.

240 officers from block and 80 from the district will be trained on management and techniques in agriculture. The training involves pest management, improved techniques in rain-fed agriculture and organic farming.

The State Agriculture Management and Extension Training Institute Jharkhand (SAMETI) has been selected for the training programme. The training programme, which started on May 2, will continue till June 2.

This is a joint effort of the state agriculture department, sugar cane development department and SAMETI, which would provide specialised training to these officials on "Latest work done in agro-technology management and extension".

First session began on May 2 in the Kisan Bhavan of the Birsa Agriculture University.

Addressing the participants, the director agriculture V Jairam told people about various schemes and techniques, which would help in the agricultural development in the state. He emphasised the need of propagating improved seeds, fertilisers and techniques to help the farmers of the state.

Appreciating the role of the training institute, Jairam said that this was the 7th such training institute in the country and first in the state of Jharkhand.

A number of issues ranging right from agro-based industries to value addition to the produce, storage facilities and role of good marketing were discussed.

Among others who spoke include A Rafe, Dr Ranbeer Singh of Palandu and Dr P Dey.

Ranvir Singh, senior scientist at the Horticulture Research Station, Palandu addresses a training programme for state agriculture officers at BAU in Ranchi on Monday.

फसल विकेन्द्रीकरण व बहुउद्देशीय कृषि तकनीक से ही विकास संभव

[illegible]

समेति का कृषि प्रसार प्रबंधन का दूसरा प्रशिक्षण कार्यक्रम सम्पन्न

राज्य स्तरीय तीसरा प्रशिक्षण कार्यक्रम बीएयू में आज से

रांची। समेति, झारखंड एवं कृषि व गन्ना विकास विभाग के संयुक्त तत्वावधान में राज्य के प्रखंड कृषि पदाधिकारियों हेतु, तीन दिवसीय "कृषि प्रबंधन एवं प्रसार" विषयक दूसरा प्रशिक्षण कार्यक्रम सम्पन्न। यह कार्यक्रम 5 मई से 7 मई तक चला। [illegible]

विश्व रेडक्रॉस दिवस आज, राज्यपाल भाग लेंगे

[illegible]

बीएयू में कृषि पदाधिकारियों का पहला प्रशिक्षण कार्यक्रम संपन्न

रांची। समेति झारखंड एवं कृषि विभाग के संयुक्त तत्वावधान में राज्य के कृषि पदाधिकारियों का पहला प्रशिक्षण कार्यक्रम बिरसा कृषि विश्वविद्यालय स्थित एग्री क्लिनिक सेंटर सभा कक्ष में संपन्न हुआ। इस अवसर पर कृषि विभाग के संयुक्त सचिव डा. डीके सक्सेना सभी प्रशिक्षणार्थियों को प्रमाण पत्र दिया।

श्री सक्सेना ने कहा कि राज्य के किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिये फल-फूल, सब्जी, औषधीय, सुगंधित एवं मसालेदार पौधे की खेती की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने कहा कि झारखंड की जलवायु एवं मिट्टी इन पौधों की खेती के लिये काफी उपयुक्त है। इसके लिये तकनीकी प्रचार प्रसार की आवश्यकता है। प्रशिक्षण कार्यक्रम के तीसरे दिन पहले सत्र में समेति निदेशक डा. एके ने रिसर्च एक्सटेंशन फारमर्स लिंकेज अंडर एनएटीपी विषय पर व्याख्यान देते हुये बताया कि कृषि प्रसार प्रबंधन के नवीनतम आयामों के त्वरित प्रयास के लिये किसानों के सहयोग से स्थानीय परिवेश के अनुरूप अनुसंधान, स्थानीय मांग पर आधारित अनुसंधान एवं प्रसार योजनाओं के संचालन की जरूरत है। उन्होंने कहा कि भावी कृषि नीति इन्हीं बातों पर निर्भर होगी इसको देखते हुये कृषि पदाधिकारियों को इस दिशा में अभी से प्रयास करने की जरूरत है।

प्रशिक्षण के दूसरे सत्र में वरीय मृदा वैज्ञानिक डा. आरपी सिंह ने समेकित पोषक तत्व प्रबंधन पर प्रकाश डालते हुये कहा कि किसानों को खेतों में नेत्रजन, स्फुर एवं पोटाश के साथ कम्पोस्ट एवं चूना के व्यवहार की नितांत आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि संतुलित उर्वरक के उपयोग से अधिक उत्पादन गुणवत्ता वाली फसल पायी जा सकती है और विभिन्न रोगों से फसलों को बचाया जा सकता है। इस अवसर पर उद्यान विभाग के विभागाध्यक्ष डा. बीएम चौधरी ने औषधीय पौधों एवं सुगंधित पौधों की उन्नतशील खेती संभावनाओं की जानकारी दी। उक्त जानकारी कार्यक्रम पदाधिकारी अजय कुमार ने दी।

फसल विकेन्द्रीकरण एवं बहुउद्देशीय तकनीक से कृषि का विकास संभव : डा. सरकार

रांची। राष्ट्रीय स्तर पर किसानों के आर्थिक उत्थान के लिये परम्परागत कृषि प्रणाली से हटकर फसल विकेन्द्रीकरण के लिये किसानों को प्रोत्साहित करने से ही विकास संभव है। उक्त बातें समिति निदेशक डा. ए. के. सरकार ने कही।

डा. सरकार सात जून को बिरसा कृषि विश्वविद्यालय स्थित एग्री क्लिनिक सेंटर के सभा कक्ष में आयोजित समिति झारखंड एवं कृषि विभाग के संयुक्त तत्वावधान में राज्य के कृषि संवर्ग के जिला स्तरीय कृषि पदाधिकारियों, समकक्ष पदाधिकारियों एवं वरीय पदाधिकारियों का पहले प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्घाटन कर रहे थे। उन्होंने कहा कि राज्य के किसानों के पिछड़ेपन के समाधान के लिये किसानों से जुड़ी समस्याओं को जानने तथा उसी अनुरूप शोध एवं कृषि तकनीक के विकास की जानकारी कृषि पदाधिकारी तक पहुंचाने के लिये यह कार्यक्रम आयोजित किया गया है।

प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रथम सत्र में हार्प पलाण्डु के प्रधान वैज्ञानिक डा. एस. कुमार के फल एवं सब्जियों को तोड़ने के बाद उचित देखभाल एवं परीक्षण के द्वारा मूल्य वर्धन विषयक व्याख्यान से हुई। उन्होंने बताया कि प्रदेश में मटर, टमाटर, फूलगोभी, फेंचबीन एवं शिमला मिर्च सब्जियों का तथा आम, लिची, अमरूद, केला, पपीता, नींबू एवं कटहल की अच्छी उपज होने के बावजूद किसानों को उचित लाभ नहीं मिल पा रहा है। उन्होंने कहा कि किसान इन फलों एवं सब्जियों का परीक्षण कर तथा परिरक्षित उत्पादों को तैयार कर उचित आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इस अवसर पर डा. रणवीर सिंह, डा. ए. के. सिंह, सीताराम मंडल, जेजे तिर्की, जिला कृषि पदाधिकारी सुनिल कुमार, डा. आर. ठाकुर, डा. आर. आर. उपासनी, सनत कुमार, सविता एवं मनोज कवि विशेष रूप से उपस्थित थे। उक्त जानकारी कार्यक्रम पदाधिकारी अजय कुमार ने दी।

किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार पर बल

रांची : समेति, झारखंड एवं कृषि एवं गन्ना विकास विभाग के संयुक्त तत्वाधान में राज्य के कृषि संवर्ग के जिला स्तरीय कृषि पदाधिकारियों, समकक्ष पदाधिकारियों एवं वरीय पदाधिकारियों का पहला प्रशिक्षण कार्यक्रम बुधवार को बीएयू स्थित एग्रोक्लीनिक सेंटर सभा कक्ष में सम्पन्न हुआ। पहले प्रशिक्षण कार्यक्रम के समापन के अवसर पर कृषि एवं गन्ना विकास विभाग के संयुक्त सचिव डा. डीके सक्सेना ने झारखंड के किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए फल-फूल, सब्जी, औषधीय, सुगंधित एवं मसालेदार पौधों की खेती की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने बताया कि यहां की जलवायु एवं मिट्टी इन पौधों की खेती हेतु अनुकूल है। इसलिए इस ओर तकनीकी प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है। इस अवसर पर श्री सक्सेना ने सभी पदाधिकारियों को प्रमाण पत्र बांटा। प्रशिक्षण कार्यक्रम के तीसरे दिन पहले सत्र में समेति निदेशक डा. एके सरकार ने रिसर्च एक्स्टेंशन-फारमर्स लिंकेज अंडर एनएटीपी विषय पर व्याख्यान देते हुए बताया कि कृषि प्रसार प्रबंधन के नवीनतम आयामों के त्वरित विकास हेतु किसानों के सहयोग से स्थानीय परिवेश के अनुकूल अनुसंधान, स्थानीय मांग पर आधारित अनुसंधान एवं प्रसार योजनाओं के संचालन की जरूरत है। आगामी कृषि नीति इन्हीं बातों पर निर्भर होगी। इसलिए कृषि पदाधिकारियों को अभी से ही इस ओर ध्यान देने की जरूरत है। इस अवसर पर कई पदाधिकारियों ने अपने महत्वपूर्ण विचार रखे।

कृषि पदाधिकारियों के लिए समेति का प्रशिक्षण आरंभ

रांची, 3 मई (सं.ए.से.)

समेति झारखंड को राज्य सरकार के कृषि एवं गन्ना विभाग के सौजन्य से राज्य के 240 प्रखंड कृषि पदाधिकारियों, 60 जिला कृषि पदाधिकारियों एवं समकक्ष पदाधिकारियों को कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एवं प्रसार के नवीनतम आयाम विषय पर राज्य स्तरीय प्रशिक्षण देने की जिम्मेदारी दी गई है।

समेति, झारखंड एवं कृषि एवं गन्ना विकास विभाग, (झारखंड सरकार) के संयुक्त तत्वावधान में 2 मई 2004 से 2 जून 2004 तक राज्य के प्रखण्ड कृषि पदाधिकारियों के लिए कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एवं प्रसार के नवीनतम आयाम विषयक आयोजित की जा रही है। इस कार्यक्रम में राज्य के 240 प्रखण्ड स्तरीय कृषि पदाधिकारी भाग लेंगे जिन्हें 8 बैचों में बांट कर तीन-तीन दिनों का प्रशिक्षण प्रदान किया जायेगा प्रत्येक बैच में 30 पदाधिकारी भाग लेंगे।

इसी क्रम में प्रखण्ड कृषि पदाधिकारियों का प्रथम प्रशिक्षण कार्यक्रम 2 मई 2004 से बिरसा कृषि विश्वविद्यालय स्थित किसान भवन में आयोजित की गई है।

कार्यक्रम के दूसरे दिन प्रतिभागियों को कृषि निदेशक, झारखंड श्री [illegible] ने कृषि उत्पादन वृद्धि की योजनाओं की जानकारी दी। इस अवसर पर उन्होंने बदलते परिवेश पर आधारित आवश्यकता एवं झारखंड कृषि के विकास हेतु कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एवं प्रसार तकनीक की जानकारी की आवश्यकता जताई। [illegible] ने कहा कि राज्य में देश का सर्वोत्तम एवं राज्य का एकमात्र कृषि प्रबंधन एवं प्रसार प्रशिक्षण संस्थान समेति कार्यरत है जिसके प्रशिक्षण कार्यक्रमों का लाभ प्राप्त करने का अवसर कृषि पदाधिकारियों को मिला है। राज्य कृषि की समस्या सम्भावनाएं एवं प्राथमिकताओं के आधार पर कृषि विकास एवं प्रसार-प्रसार पर बल दिया।

प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रतिभागियों को बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के कीट विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष डा. [illegible] ने समेकित कीट प्रबंधन, शस्य विभाग के विभागाध्यक्ष डा. ए. एके ने वर्षा आधारित खेती की उन्नत तकनीक, एवं पौधा रोग विभागाध्यक्ष डा. एम.एम. प्रसाद ने समेकित रोग प्रबंधन तथा हार्प पलाण्डु के कृषि वैज्ञानिक डा. रणवीर सिंह ने सब्जी उत्पादन भंडारण एवं मूल्यवर्द्धन की उन्नतशील तकनीक, डा. पी.के. ने समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन विषयों की नवीनतम तकनीकी जानकारी दी।

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में हजारीबाग, गिरिडीह एवं चतरा के प्रखण्ड कृषि पदाधिकारी कृषि निरीक्षक एवं समकक्ष पदाधिकारी भाग ले रहे हैं। इन पदाधिकारियों ने समेति के प्रशिक्षण कार्यक्रम को झारखंड कृषि के विकास एवं प्रसार प्रबंध काफी उपयोगी बताया।

आज

बीएयू में शुरू हुआ कृषि प्रौद्योगिकी के नये आयामों पर प्रशिक्षण कार्यक्रम

हमारे निज संवाददाता, रांची

■ एक माह तक चलेगा कार्यक्रम भाग लेंगे 240 कृषि पदाधिकारी

समेति झारखंड एवं कृषि गन्ना विकास विभाग झारखंड सरकार के संयुक्त तत्वावधान में रविवार से 'कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एवं प्रसार के नवीनतम आयाम' विषयक प्रशिक्षण कार्यक्रम की शुरुआत की गयी। एक माह तक चलने वाले इस कार्यक्रम में राज्य के प्रखंड कृषि पदाधिकारी को विशेष रूप से प्रशिक्षण दिया जाएगा। तीन-तीन दिनों का प्रशिक्षण आठ बैचों में दिया जाएगा। प्रत्येक बैच में तीस पदाधिकारी भाग लेंगे। एक महीने तक चलने वाले इस कार्यक्रम में प्रतिभागियों को कृषि उत्पाद वृद्धि योजना, कृषि समस्याएं, संभावनाएं, समेकित कीट प्रबंधन, वर्षा आधारित खेती की उन्नत तकनीक, सब्जी उत्पादन, समन्वित पोषक तत्व तकनीक, जीवाणु एवं जैविक खाद, कृषि क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी व बदलते परिवेश में किसानों के आर्थिक उत्थान हेतु एनएटीपी के शोध एवं प्रसार कार्यक्रम विषयों पर प्रशिक्षण दिया जाएगा।

कृषि योजनाओं का निर्माण एक वर्ष में पूरा करने पर सहमति

रांची। राज्य कृषि की भावी योजनाओं का निर्माण एक वर्ष की अवधि में पूर्ण करने पर सहमति बनी। उक्त आशय का निर्णय समेति झारखण्ड द्वारा राज्य कृषि की प्राथमिकताएं एवं सम्भावनाओं की भावी योजनाओं पर आयोजित उच्च स्तरीय बैठक में लिया गया।

बैठक की अध्यक्षता कृषि सचिव शिव बसंत ने किया। इस अवसर पर भारतीय प्रबंधन संस्थान के सदस्यों ने डाटा बैंक के निर्माण में भौतिक, मानवीय एवं संस्थानिक संसाधन के सहयोग पर संतुष्टि जतायी। उन्होंने क्षेत्र के उच्चस्तरीय विकास के लिये गुणवत्ता एवं गुणात्मक जानकारियां प्रदान करने की आवश्यकता पर बल दिया। बैठक में भारतीय प्रबंधन संस्थान अहमदाबाद के निदेशक डा. एस. के दत्ता एवं कृषि प्रबंधन केन्द्र (सिमेट), दार्जिलिंग के निदेशक डा. एस. चक्रवर्ती, कृषि निदेशक श्री जयराम, संयुक्त सचिव डा. डी.के. सक्सेना, समेति अध्यक्ष डा. ए.के. सरकार, संयुक्त कृषि निदेशक सीताराम मंडल एवं बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के निदेशक (योजना) डा. आर.के. मिश्रा एवं डा. एन.सी. दास एवं डा. ए.के. सिंह विशेष रूप से उपस्थित थे।

अबरार अहमद के निधन पर थॉमस ने दुख व्यक्त किया

रांची। राजस्थान प्रदेश कांग्रेस कमेटी के कार्यकारी अध्यक्ष अबरार अहमद एवं अन्य लोगों की सड़क दुर्घटना में हुई आकस्मिक निधन पर झारखंड प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष श्री थॉमस हांसदा ने गहरा दुःख व्यक्त करते हुए कहा है कि यह कांग्रेस संगठन के लिए एक अपूरणीय क्षति है। श्री हांसदा ने कहा कि श्री अबरार अहमद जब अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के संयुक्त सचिव के रूप में झारखंड के प्रभारी के रूप में संगठन को मजबूत करने की दिशा में उनके महत्वपूर्ण योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है। प्रदेश प्रवक्ता शैलेश सिन्हा ने भी उनके निधन पर दुःख व्यक्त किया है।

नवीनतम तकनीक पर प्रखंड कृषि पदाधिकारियों का प्रशिक्षण शुरू

रांची (सं)। समेति और कृषि एवं गन्ना विकास विभाग के संयुक्त तत्वावधान में प्रखंड कृषि पदाधिकारियों का प्रशिक्षण शुरू हुआ। बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के किसान भवन में उन्हें कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एवं प्रसार के नवीनतम आयाम विषय पर प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इस विषय पर चर्चा करने के लिए विशेषज्ञों को बुलाया जा रहा है। दो मई से शुरू हुआ प्रशिक्षण दो जून तक चलेगा। इस क्रम में राज्य के करीब 240 प्रखंड कृषि पदाधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जायेगा। उन्हें आठ समूह में बांटकर तीन-तीन दिनों का प्रशिक्षण दिया जायेगा। इस दौरान उन्हें समेकित कीट प्रबंधन, वर्षा आधारित खेती की उन्नत तकनीक, सब्जी उत्पादन भंडारण एवं मूल्यवर्द्धन की उन्नतशील तकनीक, समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन, बदलते परिवेश में किसानों के आर्थिक उत्थान के लिए एनएटीपी के शोध एवं प्रसार कार्यक्रम, झारखंड में कृषि की समस्याएं, संभावनाएं एवं प्राथमिकताएं विषय पर चर्चा की जायेगी। समेति के निदेशक डॉ एके सरकार ने बताया कि कृषि तकनीक का स्वरूप दिन-ब-दिन बदल रहा है। इसके प्रबंधन एवं प्रसार का नया तरीका भी इजाद हो रहा है। ऐसे में इस क्षेत्र से जुड़े अधिकारियों को इसमें अद्यतन होना आवश्यक है।

प्रभात खबर

कृषि पदाधिकारियों का प्रशिक्षण आज से

कांके। समेति, झारखंड एवं कृषि विभाग के संयुक्त तत्वावधान में राज्य के कृषि संवर्ग के जिला स्तरीय पदाधिकारियों, समकक्ष पदाधिकारियों एवं वरीय पदाधिकारियों का प्रशिक्षण कार्यक्रम सात से 12 जून तक होगा। पदाधिकारियों को कृषि प्रसार प्रबंधन के नवीनतम के बारे में बताया जायेगा। इसमें कुल 60 पदाधिकारी हिस्सा लेंगे। यह जानकारी समिति के संकाय सदस्य मनोज कवि ने दी।

जतरा खूंटा स्थापित: चांदनी चौक स्थित चंदवे गांव में विधि विधान के साथ जतरा खूंटा गाड़ दिया गया। मालूम हो कि 31 मई को कुछ असमाजिक तत्वों ने वहां से खूंटा को उखाड़ दिया था। खूंटा गाड़ने से पूर्व रंगवा और चरका मुर्गा की बलि दी गयी। कान्हू पाहन ने विधि विधान से पूजा अर्चना करायी। उसके बाद वहां सरना का झंडा लगाया गया। इस अवसर पर 12 पड़हा के लोग उपस्थित थे। कार्यक्रम को सफल बनाने में विनोद तिर्की, मनोज टोप्पो, विरेंद्र उरांव, दिलीप मुंडा आदि ने सहयोग किया।

फसल विकेंद्रीकरण और कृषि तकनीक प्रसार से ही विकास संभव: डॉ सरकार

रांची (सं)। राज्य स्तरीय कृषि प्रबंधन प्रसार सह प्रशिक्षण संस्थान (समेति), झारखंड और कृषि व गन्ना विकास विभाग के संयुक्त तत्वावधान में राज्य के कृषि संवर्ग के जिला स्तरीय कृषि पदाधिकारी, समकक्ष पदाधिकारी और वरीय पदाधिकारियों का पहला प्रशिक्षण कार्यक्रम बिरसा कृषि विश्वविद्यालय स्थित एग्रो क्लीनिक सेंटर में शुरू हुआ। कृषि पदाधिकारियों को दो ग्रुपों में बांटकर सात से नौ और 10 से 12 जून तक प्रशिक्षण दिया जायेगा। पहले चरण के प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्घाटन करने के बाद समेति के निदेशक डॉ एके सरकार ने कहा कि वरीय पदाधिकारियों के प्रशिक्षण से वैज्ञानिकों को किसानों से जुड़ी समस्याओं को जानने एवं तदनुसार शोध द्वारा अनुकूल कृषि तकनीक के विकास का अवसर प्राप्त होता है। डॉ सरकार ने कहा कि राष्ट्रीय स्तर पर किसानों के आर्थिक उत्थान हेतु परंपरागत कृषि प्रणाली से हटकर फसल विकेंद्रीकरण के लिए उन्हें प्रोत्साहित करने की जरूरत है। प्रशिक्षण कार्यक्रम में हार्प प्लांडू के प्रधान वैज्ञानिक डॉ एस कुमार, डॉ रणवीर सिंह, मनोज कवि, डॉ एके सिंह ने विचार रखे। प्रशिक्षण प्राप्त करनेवालों में संयुक्त कृषि निदेशक सीताराम मंडल, जेजे तिर्की जिला कृषि पदाधिकारी सुनील कुमार, डॉ आर ठाकुर, डॉ आरआर उपासनी, सनत कुमार सविता आदि शामिल हैं।

राज्य स्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रम में उपस्थित प्रखण्ड स्तरीय कृषि पदाधिकारियों एवं समकक्ष पदाधिकारियों की सूची

क्र.सं.	पदाधिकारियों का नाम एवं पता
1.	श्री संजय कुमार पाण्डेय, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बेंगाबाद, गिरिडीह
2.	श्री राजीव कुमार, कृशि निरीक्षक (क्षेत्र प्रयोग सेवा), गिरिडीह
3.	श्री अर्जुन मांझी, कृशि निरीक्षक (जिला कृशि प्रक्षेत्र), बलियापुर धनबाद
4.	श्री सुरेन्द्र कुमार सिन्हा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बड़कागांव, हजारीबाग
5.	श्री उमे ा प्रसाद, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, चौपारण, हजारीबाग
6.	श्री मदन लाल आचार्य, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, सदर प्रखण्ड, हजारीबाग
7.	श्री राज कुमार राय, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, गिरिडीह
8.	श्री उपेन्द्र कुमार, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, जमुआ, गिरिडीह
9.	श्री उमे ा चन्द्र भाुक्ल, सहा. कृ. पदा.(वनस्पति), जिला कृ. कार्या., हजारीबाग
10.	श्री गुप्ते वर प्र. सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बरही (प्रतिनियुक्त–बरकट्ठा), हजारीबाग
11.	मु. सदरूद्दीन खाँ, सहा. कृ. पदा.(रसायन), जिला कृ. कार्या., हजारीबाग
12.	श्री रमा कान्त सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बरही, हजारीबाग
13.	श्री मन मसीह मिंज, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बगोदर, गिरिडीह
14.	श्री भरत कुमार यादव, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, डुमरी, गिरिडीह
15.	श्री विद्या सागर, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, सदर प्रखण्ड, हजारीबाग
16.	श्री अनिल कुमार, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, माण्डु, हजारीबाग
17.	श्री रंगनाथ सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, गोला, हजारीबाग
18.	श्री अनिल कुमार सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, रामगढ़, हजारीबाग
19.	श्री श्रीनिवास राय, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, कटकमसाँडी, हजारीबाग
20.	श्री अखिले ा कुमार वर्मा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, चुरचू, हजारीबाग
21.	मो. भाोऐबउद्धीन, जन सेवक(प्रभारी प्र.कृ.पदा.), टुण्डी, धनबाद
22.	श्री बद्री वि ाल पाठक, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, चतरा
23.	श्री रतने वर प्रसाद, सांख्यिकी सहायक, जिला कृशि कार्या., धनबाद
24.	श्री भाुकदेव पोद्दार, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, देवरी, गिरिडीह
25.	श्री उमे ा प्रसाद, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बिरनी, गिरिडीह
26.	श्री जटा भांकर मिश्र, सांख्यिकी सहायक, जिला कृशि कार्या., गिरिडीह
27.	श्री जवाहर लाल सिन्हा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, जयनगर, कोडरमा
28.	श्री रामजी भार्मा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, कोडरमा

क्र.सं.	पदाधिकारियों का नाम एवं पता
29.	श्री नवल कि ोर प्रसाद, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, तोपचाँची, धनबाद
30.	श्री सुरेन्द्र भार्मा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, धनवार, गिरिडीह
31.	श्री भरत प्रसाद, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, टण्डवा, चतरा
32.	श्री कुले वर प्रसाद, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बलियापुर, धनबाद
33.	श्री लाल बाबू प्रसाद, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, निरला, धनबाद
34.	श्री भौलेन्द्र कुमार, सांख्यिकी सहायक, संयुक्त कृशि निदे ाक कार्या. , हजारीबाग
35.	श्री अभय कुमार सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, पदमा, हजारीबाग
36.	श्री व‍ि ाश्ट नारायण चौधरी, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, सुन्दरपहारी, गोड्डा
37.	श्री विवेकानन्द सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, चान्हो, राँची
38.	श्री देव नन्दन सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, देवधर
39.	श्री राम प्रवे ा सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, कांके, राँची
40.	श्री चन्दे वर प्रसाद सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बेड़ो, राँची
41.	श्री सुनिल कुमार सिन्हा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, मण्डर, राँची
42.	श्री अ ोक कुमार सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, सारठ, देवधर
43.	श्री विवेका नन्द झा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, पालोजोरी, देवधर
44.	श्री महे ा प्रसाद झा, कृशि निरीक्षक, जिला , चतरा कृशि कार्या., देवधर
45.	श्री गिरिजा नन्द पाठक, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, करौ, देवधर
46.	श्री देव नारायण सिंह, अनु. उद्यान पदा.(प्रभारी कृशि निरीक्षक), जिला कृशि कार्या., देवधर
47.	श्री द ारथ मुण्डा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, किस्को, लोहरदगा
48.	श्री योगेन्द्र प्रसाद सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, मुसाबनी, पुर्वी सिंहभूम
49.	श्री सत्य नारायण पंजियारा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, कुड़ू, लोहरदगा
50.	श्री अम्बिका प्रसाद, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, खुंटी, राँची
51.	मो. रफीक अहमद हैदरी, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, डुमरिया, पुर्वी सिंहभूम
52.	श्री नर सिंह मण्डल, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, जगन्नाथपुर, प. सिंहभूम
53.	श्री विन्दे वरी प्रसाद सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, कुरडेग, सिमडेगा
54.	श्री राजेन्द्र नाथ माझी, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, मुरहू, राँची
55.	श्री राज कुमार चौधरी, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, पटमदा, पूर्वी सिंहभूम
56.	श्री रवीन्द्र प्रसाद, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, तोरपा, राँची
57.	श्री अजय कुमार सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, कर्रा, राँची
58.	श्री नवल कि ोर देव, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बोलबा, सिमडेगा
59.	श्री वैद्यनाथ पासवान, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, भण्डरा, लोहरदगा

क्र.सं.	पदाधिकारियों का नाम एवं पता
60.	श्री नित्या नन्द सिंह, कृशि निरीक्षक, अनु. कृशि कार्या, गोड्डा
61.	श्री रमे ा सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बुड़मू, राँची
62.	मो. मुर्तजा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, तमाड़, राँची
63.	श्री दिने ा प्रसाद गुप्ता, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, पोटका, पूर्वी सिंहभूम
64.	श्री गोपाल प्रसाद मण्डल, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, जम ोदपुर, पूर्वी सिंहभूम
65.	श्री सोबन सिंह लागुरी, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बानो, सिमडेगा
66.	श्री बलराम महतो, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, सिमडेगा
67.	श्री सुनिल कुमार दास, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, मनोहरपुर, प. सिंहभूम
68	श्री रामावतार सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, ईचागढ़, सराईकेला
69.	श्री गोपाल भारण मिश्रा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, हुसैनाबाद, पलामू
70.	श्री अ ाोक कुमार चौधरी, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, नीमडीह, सराईकेला
71.	श्री भरत सवैयाँ, प्रभारी–प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, कुचाई, सराईकेला
72.	श्री विनोद कुमार सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, रंका, गढ़वा
73.	श्री संजय कुमार लकड़ा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, घाटि ाला, पूर्वी सिंहभूम
74.	श्री अरुण कुमार श्रीवास्तव, प्रभारी–प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, चाकुलिया, पूर्वी सिंहभूम
75.	मो. गयासुद्दीन, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बरवाडीह, लातेहार
76.	श्री चौधरी रवीन्द्र नाथ राय, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, मनिका, लातेहार
77.	सुश्री कालेन खलखो, पौधा संरक्षण निरीक्षक, पौधा संरक्षण केन्द्र, खुंटी, रॉंची
78.	श्री विमल कुमार लकड़ा, सहा. कृ. पदा., सुखी खेती विकास परियोजना, रॉंची
79.	श्री चन्दे वर पासवान, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, सराईकेला
80.	श्री हर्श कुमार सिन्हा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, मराल, गढ़वा
81.	श्री वि वनाथ प्रसाद सिंह, पौधा संरक्षण निरीक्षक, पौधा संरक्षण कार्या, रॉंची
82.	श्री दिवाकर पाण्डेय, कीट रोग प्रतिवेदक, उप कृशि कार्या., पौधा संरक्षण, रॉंची
83.	श्री पुरुशोत्तम कुमार सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, छत्तरपुर, पलामू
84.	श्री राम नरे ा सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, नामकुम, रॉंची
85.	श्री अनिरुद्ध प्रसाद साह, अनु. उद्यान पदाधिकारी, धनबाद
86.	श्री सुदामा प्रसाद भगत, अनु. उद्यान पदाधिकारी, गुमला
87.	श्रीमती रजनी किरण लकड़ा, पौधा संरक्षण निरीक्षक, पौधा संरक्षण कार्या., चाईबासा
88.	श्री ि ाव कुमार, अनु. उद्यान पदाधिकारी, पालोजोरी, देवधर
89.	श्री नागेन्द्र नाथ कुमार, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, महगामा, गोडडा
90.	श्री विजय कुमार के ारी, अनु. उद्यान पदाधिकारी, जामताड़ा

क्र.सं.	पदाधिकारियों का नाम एवं पता
91.	श्री प्रमोद चन्द्र मोदी, अनु. उद्यान पदाधिकारी, हँसडीहा, दुमका
92.	श्री राम सेवक मण्डल, अनु. उद्यान पदाधिकारी, पाकुड़
93.	श्री राजे वर पाण्डेय, निरीक्षक विधिक माप विज्ञान, डालटेनगंज
94.	श्री बिरजा लाल, सहायक अनुसंधान पदा., कार्या. सहायक मिटटी रसायनविद्, गिरिडीह
95.	श्री प्रभु पासवान, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, मोहनपुर, देवघर
96.	श्री अनन्द कि ोर, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, कुण्डहित, जामताड़ा
97.	श्री असीम भेनित तिग्गा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, कुण्डहित, जामताड़ा
98.	श्री मधुकान्त झा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, बोआरीजोर, गोड्डा
99.	श्री प्रभाकर मिश्र, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, देवघर
100.	श्री अभय चन्द्र गुप्ता, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, देवीपुर, देवघर
101.	श्री मनमोहन झा, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, देवघर
102.	श्री भोलानाथ राम, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, जामताड़ा सदर, जामताड़ा
103.	श्री अरुणा कुमार ठाकुर, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, सारवाँ, देवधर
104.	श्री राम भांकर सिंह, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, सारवाँ, देवधर
105.	श्री राधे याम, सहायक कृशि पदाधिकारी (रसायन), जिला कृ. कार्या, धनबाद (सम्प्रति)
106.	श्री मुकुन्दी प्रसाद भगत, कृशि निरीक्षक (नि. ले.), अनुमण्डल कृशि कार्यालय, जामताड़ा
107.	श्री सुनिल दास, पौधा संरक्षण पर्यवेक्षक, पौधा संरक्षण केन्द्र, पाकुड़
108.	श्री देवेन्द्र प्रसाद यादव, पौधा संरक्षण पर्यवेक्षक, पौधा संरक्षण केन्द्र, महगामा, गोडडा
109.	श्री तेजनारायण सिंह, अनु. उद्यान पदाधिकारी, जिला उद्यान कार्या, खुंटाबाध, दुमका
110.	श्री जगलाल पासवान, पौधा संरक्षण पर्यवेक्षक, पौधा संरक्षण केन्द्र, हिरणपुर, पाकुड़,
111.	श्री राधारमण अग्रवाल, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, लिट्टीपाड़ा, पाकुड़
112.	श्री ज्ञान ारण राय, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, महे ापुर, पाकुड़
113.	रेणुबाला, सहायक कृशि पदाधिकारी (वनस्पति), जिला कृशि कार्या., धनबाद
114.	श्रीमती अल्पना साहा, सहायक अनुसंधान पदाधिकारी, मिट्टी जाँच प्रयोग ाला, राँची
115.	श्रीमती एमलेन पुर्ती, अवका ा रक्षित (प्रखण्ड कृशि) पदाधिकारी, जिला कृ. कार्या, राँची
116.	श्री ि ाव कुमार सिंह, कृशि निरीक्षक, निजी लेखा, खुंटी, राँची
117.	श्री राम चन्द्र, प्रखण्ड कृशि पदाधिकारी, लापुंग, राँची
118.	श्री धीरेन्द्र श्रीवास्तव, कनीय कृशि सूचना पदाधिकारी, संयुक्त कृशि निदे ाक कार्या., राँची
119.	श्रीमती दीप्ति कुमारी, अवका ा रक्षित पदाधिकारी, जिला कृशि. कार्या, राँची

▲▲▲

राज्य स्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रम में उपस्थित जिला स्तरीय कृषि पदाधिकारियों समकक्ष एवं वरीय पदाधिकारियों की सूची

क्र.सं.	पदाधिकारियों का नाम एवं पता
1.	श्री जुनस जैरस तिर्की, संयुक्त कृशि निदे ाक, उत्तरी छोटानागपुर परिक्षेत्र, कृशि भवन, कनहरी हिल रोड, डिपुगढ़ा, हजारीबाग – 825301
2.	श्री उमे ा प्रसाद, उप कृशि निदे ाक (सा.), सं.कृ.नि. कार्या., उत्तरी छोटानागपुर परिक्षेत्र, कृशि भवन, डिपुगढ़ा, हजारीबाग – 825 301
3.	श्रीमती ज्योति मिंज, उप कृशि निदे ाक (प्रक्षेत्र), सं.कृ.नि. कार्या., हजारीबाग – 825 301
4.	श्री प्रणय मेनोस एक्का, जिला कृशि पदाधिकारी, कृशि भवन, कनहरी हिल रोड, डिपुगढ़ा, हजारीबाग – 825301
5.	श्री बृजलाल प्रसाद, जिला कृशि पदाधिकारी, गिरिडीह
6..	श्री सत्येन्द्र नारायण सिंह, जिला कृशि पदाधिकारी, कोडरमा
7.	श्री अमरे ा कुमार झा, अनुमंडल कृशि पदाधिकारी, चतरा
8.	श्री कैला गाड़ी, जिला प्रक्षेत्र प्रबंधक, जिला कृशि प्रक्षेत्र, बलियापुर, धनबाद
9.	श्री अरुण कुमार गुप्ता, अनुमंडल कृशि पदाधिकारी (सामान्य), बेरमो, तेनुघाट, बोकारो
10.	श्री इन्द्रजीत राम, अनुमंडल कृशि पदाधिकारी, चास
11.	श्री माधव प्रसाद यादव, अनुदे ाक (पौधा संरक्षण), संयुक्त कृशि निदे ाक कार्या., हजारीबाग – 825301
12.	श्री मिथिले ा कुमार कालिन्दी, सहायक कृशि निदे ाक (रसायन), संयुक्त कृशि निदे ाक कार्या., हजारीबाग – 825301
13.	श्री हेरमन मिंज, उप कृशि निदे ाक (पौधा संरक्षण) , राँची
14.	श्री विकास कुमार, कनीय पौधा संरक्षण पदाधिकारी, कृशि भवन, कांके रोड, राँची 834 008
15.	श्री मुनेन्द्र दास, कनीय पौधा संरक्षण पदाधिकारी, पांकी रोड रेड़मा, वारा लोटा, डालटेनगंज, पलामू
16.	श्री खीस्त हेर्मोन बाड़ा, कनीय पौधा संरक्षण पदा., कृशि भवन, कनहरी हिल रोड, डिपुगढ़ा, हजारीबाग
17.	श्री सीताराम मंडल, संयुक्त कृशि निदे ाक, कृशि भवन, कांके रोड, राँची
18.	श्री हेमन्त प्रबल, उप कृशि निदे ाक (सामान्य), प्रमंडलीय कृशि कार्यालय, राँची
19.	श्री सुनील कुमार, जिला कृशि पदाधिकारी, कृशि भवन, कांके रोड, राँची – 834 008
20.	श्री ब्रह्मदेव मंडल, जिला कृशि पदाधिकारी, गुमला
21.	श्री मनोहर बिरुवा, सहायक कृशि पदाधिकारी, प. सिंहभूम (चाईबासा) – 833201
22.	श्री पीटर जनवारिसुस तिर्की, जिला कृशि पदाधिकारी, लोहरदगा
23.	डॉ. ब्रजे ा कुमार, परियोजना निदे ाक, आत्मा सह जिला कृशि पदाधिकारी, पलामू
24.	श्री असीम रंजन एक्का, जिला प्रक्षेत्र प्रबन्धक, राजकीय कृशि प्रक्षेत्र, नेतरहाट, पो. नेतरहाट, लातेहार

क्र.सं.	पदाधिकारियों का नाम एवं पता
25.	मो. अबुलै ा, उप कृशि निदे ाक (अभियंत्रण), प्रसार प्रि ाक्षण केन्द्र, हेहल, राँची – 834 005
26 .	श्री चन्द्र मोहन पुरान, सहा. कृ. निदे ाक, गुण नियंत्रण, (उर्वरक) प्रयोग ाला, कृशि भवन, कांके रोड, राँची – 834008
27.	श्री लक्ष्मण उरांव, अनुमंडल सह जिला कृशि पदाधिकारी, सिमडेगा
28.	श्री संजय कुमार सिंह, जिला सह अनु० कृशि पदाधिकारी, पूर्वी सिंहभूम (जम ोदपुर)
29.	श्री डेनियल एक्का, जिला कृशि पदाधिकारी, पाकुड़
30.	श्री सत्येन्द्र प्रसाद, जिला कृशि पदाधिकारी, लातेहार
31.	श्री पारसनाथ उरांव, जिला कृशि पदाधिकारी, गढ़वा, पो.+ जिला– गढ़वा
32.	श्री दयाल प्रसाद, जिला कृशि पदाधिकारी, सराइकेला– खरसांवा
33.	श्री सत्यप्रका ा, सहायक मिट्टी रसायनविद्, मिट्ठी जाँच प्रयोग ाला, गुमला – 835207
34.	श्री अनिरुद्ध प्रसाद, सहायक भाश्यविद्, आम्लिक मिट्ठी सुधार योजना, कृशि भवन, कांके रोड, राँची
35.	श्री किरण कि ोर प्रसाद, अनुदे ाक (ाष्य), कार्यालय संयुक्त कृशि निदे ाक (स.प.), दुमका
36.	श्री रतन कुमार भगत, जिला कृशि पदाधिकारी, साहेबगंज
37.	श्री सुरेन्द्र सिंह, अनुमण्डल सह जिला कृशि पदाधिकारी, जामताड़ा
38.	श्री उमे ा तिर्की, अनुमण्डल सह प्रभारी जिला कृशि पदाधिकारी, गोड्डा
39.	श्री गमालिएल हांसदा, जिला कृशि पदाधिकारी सह सहायक मिट्ठी जाँच रसायनविद, दुमका
40.	श्री कमल कुमार कुजूर, जिला उद्यान पदाधिकारी, जिला उद्यान कार्या., बीज गुणन प्रक्षेत्र, जेवियस नगर, चाईबासा, पि चमी सिंहभूम
41.	श्री बिराम हेम्ब्रम, जिला उद्यान पदाधिकारी, गोल पहाड़ी, जम ोदपुर, पूर्वी सिंहभूम,
42.	श्री गोपाल ठाकुर, जिला कृशि पदाधिकारी, देवधर
43.	श्री ि ावपुजन राम, जिला उद्यान पदाधिकारी, लोहरदगा, ब्लॉक मोड़, लोहरदगा
44.	श्री एनतन एक्का, जिला उद्यान पदाधिकारी, लक्ष्मी निवास, कृशि भवन, कांके रोड, राँची– 834008
45.	श्री गोकुल मेहरा, संयुक्त कृशि निदे ाक, दुमका
46.	श्री सन्तोश लकड़ा, अनुमण्डल कृशि पदाधिकारी (सा.), अनु. कृशि कार्या., कृशि भवन, कांके रोड, राँची–8
47.	श्री अमरे ा कुमार सिंह, बीज प्रमाणन पदाधिकारी, लक्ष्मी निवास, कृशि भवन, कांके रोड, राँची–834008
48.	श्री अखौरी महे ा चन्द्र सिन्हा, सहायक भूमि संरक्षण (सर्वे) पदा., सह बीज प्रमाणन पदा, गोल कोठी, कांके रोड, राँची

▲▲▲